वौद्धिकता और श्रद्धालुता का सहज समन्वय जिस व्यक्ति में था, जो साहित्य के गंभीर अध्येता थे और सत्य के प्रति सहज रूप में समर्पित थे। जैन दर्शन और धर्म के जो अन्तरहृदय से उपासक थे, वे श्री शिखरचन्दजी कोचर न्याय की कुर्सी पर वैठने पर धर्म को कभी विस्मृत नहीं करते थे। अव वे हमारे वीच में नहीं है, पर उनकी विशेपताएँ आज भी जीवित हैं। उनके जीवन के वारे में कुछ लिखा जा रहा है ऐसा हमने सुना तो हमें वहुत अच्छा लगा। सत्य और धर्म के प्रतीक लोगों के बारे में कुछ लिखा जाता है, वह आने वाली पीढ़ी के लिए प्रेरणा का स्रोत बन जाता है उनके बारे में लिखने के साथ-साथ उनके जीवन संस्मरणों को संजोकर, सुरक्षित रखने का जो प्रयत्न किया जा रहा है, वह भी सराहनीय है। उनका परिवार भी धार्मिक वृत्ति का अनुकरण करता हुआ आगे बढ़ेगा। ऐसी आशा है।

-आचार्य तुलसी

शिखरचन्द्र कोचर : व्यक्तित्व एवं कृतित्व

प्रधान संपादक
डॉ. भगवानदास किराड़ू
मानद प्राचार्य
श्री नेहरू शारदा पीठ, स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बीकानेर

❖ ❖ ❖

संपादक मण्डल

डॉ. धर्मचन्द्र
डॉ. किरण नाहटा
उपध्यानचन्द्र कोचर
वल्लभदास कोचर

❖ ❖ ❖

❖ शिखरचन्द कोचर व्यक्तित्व एवं कृतित्व

❖ प्रधान सम्पादक :
डॉ. भगवानदास किराडू
मानद प्राचार्य
श्री नेहरू शारदा पीठ,
स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बीकानेर

❖ सम्पादक मण्डल :
डॉ. धर्मचन्द्र
डॉ. किरण नाहटा
उपध्यानचन्द कोचर
वल्लभदास कोचर

❖ ग्रन्थ प्रकाशन समिति :
भंवरलाल कोठारी
किशनचन्द बोथरा
बी.आर. नाहर
जयचन्दलाल सुखाणी
सूरजमल पूगलिया

❖ प्रथम संस्करण : जून, 2009

❖ प्राप्ति स्थल :
स्वदेश :
देवेन्द्र कुमार कोचर
849, कोचरों का चौक, बीकानेर
विदेश :
डॉ. नरेन्द्र कोचर
261, गार्डवेल क्रेसेण्ट,
गिलमर्टन, एडिनबरा (यू.के.)

❖ मूल्य : सादर सप्रेम

❖ आवरण सज्जा व मुद्रक :
तिलोक प्रिंटिंग प्रेस, बीकानेर
दूरभाष : 9314962475

समर्पण

आद्याचार्य, न्यायाम्भोनिधि,
श्रीमद् विजयानन्द
सूरिश्वरजी (प्रसिद्ध नाम
श्रीमद् आत्मारामजी महाराज)
के पट्ट प्रतिष्ठित,
विश्व वत्सल, युगदृष्टा,
कलिकाल-कल्पतरु,
अज्ञानतिमिरतरणि,
भारतदिवाकर, पंजाब
केशरी, परमपूज्य जैनाचार्य
श्रीमद् विजय वल्लभ
सूरिश्वरजी महाराज साहब
को,
जिनके श्री शिखरचन्दजी
कोचर परम भक्त
एवं
असीम श्रद्धा के केन्द्र थे।

श्रीमद् विजय वल्लभ सूरिश्वरजी म.सा.

जन्म तिथि :

विक्रम संवत् १९२७ कार्तिक शुक्ला २

कालधर्म :

विक्रम संवत् २०१० भाद्रपद कृष्णा १०

जिन-शासन के दिव्य-दूत, हे परम तपस्वी,
विश्व-वंद्य-विजयानन्द-गुरु के शिष्य यशस्वी।
धीर, वीर, गंभीर, प्रखर वक्ता वर पंडित,
शान्त, दान्त, संभ्रांत, सकल सद्गुण समलंकृत।।

दिग्दिगन्त में व्याप्त आपकी गौरव गरिमा
है अकथ्य शत् शेष-शारदा से तव महिमा।
भावच्चन्द्र-दिवाकर अक्षय कीर्ति रहेगी,
भूमण्डल पर कथा आपकी अमर रहेगी।।

शत्-शत् वर्षों तक स्थिर हो तव पावन जीवन,
होती रहे सदा ही जिसमें पर हित साधन।
बसे आपकी अमृत वाणी मन मन्दिर में,
जन-सेवा रत रहे भुलाकर भेद, स्व पर में।।

इसी पुस्तक के पृष्ठ सं. 77-78 से उद्धृत

अनुक्रमणिका

पुरोवाक्

'श्रेयांसि बहुविघ्नानि' अर्थात् अच्छे कार्यों की पहचान यह है कि उसमें बहुत से विघ्न आते हैं। यह उक्ति 'शिखरचंद्रजी कोचर : व्यक्तित्व एवं कृतित्व' पुस्तक प्रकाशन पर भी लागू होती है। अनेकानेक उत्थान-पतन, ऊँची-नीची स्थितियों से संघर्षरत रहते हुए ही 'शिखर' तक पहुँच सकते हैं और ईशानुकम्पा से पहुँच भी गए।

पुस्तक की परिधि होती है, शब्दाभिव्यक्ति की भी एक सीमा होती है पर विराट् व्यक्तित्वधारक की कोई परिधि या ओर छोर नहीं होता। उनके अथाह गुणों की थाह लेना, उनका पूर्णोल्लेख करना अंजुलि में समुद्र लाना सा होता है जो कभी संभव नहीं है फिर भी प्रयास तो प्रयास है और करना भी चाहिए।

संपादन कार्य भी निराला होता है। संपादक व्यापक होना चाहिए, हर तरह का ज्ञान जो कल्पनातीत है मेरे सामने भी संपादन स्वयंवर चुनौती भरा - किसको रखें ! किस 'आर्टिकल का चयन न करें ? किंकर्त्तव्यविमूढ़ स्थिति' और फिर इतने गुणों के धनी शिखरचन्द्रजी को और उनकी विशेषताओं को कैसे समेटें ? इसी उधेड़बुन में समय सपाट-चुपचाप निकल गया और मेरी स्थिति उनके बारे में कुछ लिखने की ऐसी जैसे 'गिरा अनयन और नयन बिनु वाणी' जैसी। फिर भी चलने वाले पहुँचते ही हैं न चलने वाले क्या पहुँचें ?

जज़ साहब का व्यक्तित्व बहुमुखी प्रतिभा का धनी रहा है कौन ऐसा राजस्थानी होगा, जो शिखरचन्द्रजी के 'न्याय स्वरूप' से परिचित नहीं होगा ? उनकी न्याय-प्रीति-कीर्ति कौमुदी चतुर्दिक व्याप्त है वे राजस्थान के ऐसे न्यायकर्त्ता थे, जिन्होंने ईमानदारी शिखर को स्पर्श कर, अपना जीवन सार्थक किया। उनकी दृष्टि में न्याय, न्याय था, कोई भी परिचित-अपरिचित उनके कार्यक्षेत्र में दखल नहीं कर सकता था। किसी ने स्नेहवश या पारिवारिक प्रेमवश सिफारिश भी उनसे की तो उनका यही कहना होता, 'घर की बात घर में, कोर्ट

की बात कोर्ट में।' इसीलिए तो आज भी उस नश्वर देह का 'यश' सर्वत्र व्याप्त है, उनके जीवन का आद्यंत समग्रावलोकन करें तो वे 'न्याय तुला स्वरूप' ही थे।

अतः यह तो मानना ही पड़ेगा कि कोचर साहब दैदीप्यमान मणिमाला मध्य मणि (सुमेर) थे और आज भी पर्वत शृंखलाओं के सर्वोच्च (शिखर) रूप में अजर-अमर रूप में विद्यमान हैं।

वे केवल न्यायकर्त्ता ही नहीं थे, काव्य रचयिता भी थे। सुनते हैं जज जाति का काव्य से क्या लेना-देना ? परन्तु शिखरजी इतने सरल एवं सरस हृदयी थे कि इस क्षेत्र में भी वे अग्रणी थे। उनकी काव्यकला की रमणीयता निरखिए या वर्णन छटा देखिए अथवा गीतिकाव्य के सरस करुणा हृदयोद्‌गारों को पढ़िए, शिखरजी की रचनाओं में आश्चर्यजनक चमत्कार है, ऐसी विराट् व्यापिनी सर्वातिशायिनी प्रतिभा है जिसका उदाहरण मिलना दुष्प्राप्य है। उनकी रचनाएँ, (कविता हो या गीत, निबंध हो या कोई अन्य विधा) शान्तिदायिनी उपदेश की वह कौमुदी है, जो जिज्ञासुजन के जिज्ञासातप्तचित्त को चिरस्थाई, तरंगों में तिरोहित कर देती है। उनके समग्र काव्यावलोकन करने से विदित होता है कि वे 'हरिऔध' की काव्यशैली से प्रभावित थे, उनसे साहित्य-साधना सीख लिए हुए थे, उनके भाव भाषानुयायी थे। उनकी विविध विषयक लेखनी धन्य है और प्रशस्य है उनकी-काव्य प्रस्तुति। 'दीपावली' शीर्षक कविता **''दीप अवलि की शुभ्र छटा है, छाई वसुधा तल चन्द्र ज्योत्सना से जिसकी आभा है मंजुलतर, नीरव निशि में निविड़ तिमिर से, नभ भूतल तमसावृत तारकगण लगते हैं मानो, सर में सरसिज विकसित''**

धीरे-धीरे वे छायावादी कविता से प्रभावित हुए, भाव और भाषा-विकास देखिए 'सुंदर, नूतन प्रभात आया' कविता में प्रसाद-प्रभाव झलकता है- **'शैशव की स्वप्न उमंगों में, यौवन की तरल तरंगों में, आक्रांत मनुज के अंगों में, जीवन के नाना रंगों में।'**

वे हास्य रस बिखेरने में भी पीछे नहीं थे, मायड़ भाषा-प्रेम में पगे कुंडलिया छन्द का आनन्द लीजिए 'रुपियो' कविता में-

''रुपियो धरती में हुयो, मिनखां रौ सरदार, रुपियै रै दरसण बिना, कारज पड़ै न पार।''

सचमुच वे बहुआयामी व्यक्तित्व के धनी थे।

वे आध्यात्मिक प्रवृत्ति के व्यक्ति भी थे, मौनमधि पुकार ही उनकी धर्म

भक्ति का सार थी, वे केवल जैन धर्मानुयायी ही नहीं, सभी धर्मों के प्रति आदर भाव रखते थे, उनकी आचरण शैली, जीवन पद्धति, दिनचर्या उस अलौकिक शक्ति से अन्तःकरण संबंध रखती थी, उन्हें भावी घटनाओं का पूर्वाभास हो जाता था, वे अदृश्य स्वरूप को पहले ही भांप लेते थे, सबको सजग कर देते थे।

शायद यह गुण उनके पुरखों का प्रभाव लिए हुए था। प्रसंगवश उनके भतीजे वल्लभ कोचर ने ऐसी ही घटना का जिक्र किया, जो रोंगटे खड़े करने वाला था, उदाहरण उन्हीं के शब्दों में, पठनीय है-

एक अलौकिक घटना :

"बीकानेर में दिनांक 08.02.1938 (माघ सुदी 8 सं. 1994) वेला थी। पूज्य पिताजी प्रतिदिन की तरह आज भी घर के भीतरी भाग (साल्) में माला फेर रहे थे। कितना भी आवश्यक कार्य हो, माला जाप के समय कभी बीच में उठा नहीं करते थे। उस दिन पता नहीं क्यों, अकस्मात् उनका मन उच्चाट हुआ, माला तुरन्त बीच में छोड़ी और अविलम्ब मकान के बाहरी भाग (बरसाली) की ओर भागे, जहाँ पूजनीय दादासा पाटे पर बैठे थे। न कोई आवाज, न कोई पुकार, न कोई शोर, न कोई चीख, चिल्लाहट, पूर्णतः शान्त वातावरण। केवल मात्र अन्तर्रात्मा की पुकार पूज्य पिताजी को, पूज्य दादासा के पास खींच ले गई। पूजनीय दादासा के पास पहुँचते ही वे क्या देखते हैं कि उन्हें दो हिचकियाँ आई और उनका शरीर शान्तिपूर्वक सदा के लिए शान्त हो गया। न डॉक्टर या वैद्य को बुलाने का अवसर दिया और न सेवा-चाकरी का।

उन दिनों दोनों काकासा बनारस स्थित 'बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय' में उच्च शिक्षा प्राप्त कर रहे थे। छात्रावास में दोनों के कमरे अलग-अलग थे। जिस दिन और समय परम श्रद्धेय दादासा का निधन हुआ, ठीक उसी समय दोनों काकासा को अपने-अपने कमरों में पू. दादासा के कुछ क्षणों के लिए दर्शन हुए।

पू. बड़े काकासा द्रुत गति से पू. छोटे काकासा के कमरे में आए और कहा, "मुझे भाभाजी (वे अपने पू. पिताजी को इसी नाम से सम्बोधित करते थे) अभी-अभी दिखलाई दिए।" छोटे काकासा ने भी कहा "घोर आश्चर्य की बात है, मैं तो आपके पास आने ही वाला था, मैंने भी पू. भाभाजी को प्रत्यक्ष एवं स्पष्ट रूप से देखा है।" दोनों विस्मित आश्चर्य चकित एवं चिन्तातुर थे।

कहाँ बीकानेर और कहाँ सैंकड़ों मील दूर बनारस। है न आश्चर्यजनक, विस्मयकारी, अनोखी, अनूठी सच्ची घटना।

दूसरे दिन प्रातः पू. पिताजी द्वारा प्रेषित टेलिग्राम के द्वारा पू. दादासा के स्वर्गवास का दुःखद समाचार प्राप्त हो गया।

पू. दादासा एक सच्चे, ईमानदार, सादगी पसन्द, कर्त्तव्यनिष्ठ एवं धार्मिक प्रवृत्ति के महान् व्यक्ति थे। उनके प्रति सहज ही हमारा सिर, परम श्रद्धा से नत-मस्तक हो जाता है।''

ऐसे महापुरुषों के संचित पुण्य-पुंज, पुत्र प्राप्त करते हैं, अनुपम व्यक्तित्व के पीछे पुरखों का आशीर्वाद और उनके प्रति जज़ साहब की श्रद्धा ही जीवन उत्थान का आधार रही।

जज़ साहब का व्यक्तित्व स्व देहानुरूप था, वे आजानुवाहु, उन्नत भाल, चौड़ा वक्षस्थल, स्थूल स्वरूप पर नियंत्रित, संयमित लम्बाई भी शिखरानुरूप। वाहर से जितने दीर्घकार्य, भीतर भी उतने ही विराट्। उनका आनन एक शुद्धाचरण का दर्पण कहें तो अत्युक्ति नहीं होगी। मैंने तो उनकी जीवन शैली को प्रत्यक्षतः देखा है, इतना भारी भरकम शरीर पर मज़ाल है कहीं भी, कभी भी आलस्य उनके पास फटका हो, उनकी कर्मठशील काया के समक्ष कोई विघ्न या बाधा टिक जाए- असंभव। ग्रीष्म काल में वीकानेर की तवे सी तपती धरती, भरी दुपहरी में उनका बाजार जाना और दण्डी यात्री रूप में सामान लादकर, समय पर घर पहुँचना, हैरत में डाल देता था। पद-मद रहित हो, स्वावलम्बन सीख कोई ले तो जज साहब से ले। उनकी पसीने से तर देह देख में द्रवित हो जाता था। भीतर से तर हो जाता और सोचता कि शरीर को जैसा ढाल लें वैसा ढल जाए। मजाल है कि वे मौसम के प्रभाव में आ जाएँ या उनके समयानुरूप कार्यक्रम टल जाए। गज़ब भाई गज़ब – अनुपम।

आज की युवा पीढ़ी कितनी आलसी, कितनी सुविधाभोगी ? वात-वात में वाहन चाहिए, चाहे चार कदम ही चलना है कोई नित्य नैमित्तिक कार्यक्रम नहीं। चारों तरफ मृगमरीचिका रूप लिए भौतिकता की भाग-दौड़ में लगी युवा पीढ़ी के लोग जज साहब के कर्मठ जीवन से, उनकी चारित्रिकता से शिक्षा ग्रहण करें। उनके बारे में महामनीषियों के विचार पढ़, अपने जीवन की विसंगतियों को सुधारें, सुचारू रूप से, समय पर सम्यक् पथ अपनाए, व्यसनों से दूर रहे, उनका अनुसरण करे तो उनकी स्मृति में प्रकाशित पुस्तक सार्थक हो जाएगी।

जज साहब समय के सारथी थे, 'घड़ी' उनके कार्यक्रम देख स्वयं सही हो जाती थी, जैसे लोग समय पूछकर, अपनी घड़ी मिलाते हैं पर उनके कार्यक्रम वेला से लोग समय ज्ञात कर लेते थे – इस समय जज साहब टहलते या घूमने

जाते हैं तो इसका मतलब इतने बजे हैं। घड़ी-घड़ी 'घड़ी' का ध्यान रखना ह
तो जज साहब की जीवनयापन शैली से सीखें। उन्हें इतना समय पाबन्द देखत
तो सहसा मुझे मेरे पिताजी की स्मृति हो आती। वे भी ऐसे ही पंचुअल-प्रेमी

यह जीवन सुख-दुःख की पटरियों पर चलता है – कोई सर्वसुख संपन
नहीं तो कोई सर्वदुःख विपन्न नहीं। फिर शिखरजी कैसे वंचित रहते – उन्हें भ
कई पारिवारिक आघात लगे तो कई सुनहरे पल भी हाथ लगे – पर वे समभाव
रहे – यह विरला गुण है – 'सुख दुःख सब समान', को आचरण में लाना
बड़ा दुष्कर। समभावी हो चलने वाले विरले लोगों में 'शिखर' जी थे। सब कुछ
सह जाते और मौन रहकर बहुत कुछ कह जाते। ऐसे धीर-वीर, गंभीर थे ज
साहब। उनके जीवन के विविध रूप इस पुस्तक में देखने को मिलेंगे। यहाँ उनक
इस सहिष्णुता का पुनः उल्लेख करना समीचीन नहीं होगा – आप पुस्तक प
स्वयं ही यह अनुभूति कर लेंगे कि भई कमाल रहा उनका जीवनयापन ढंग औ
अनुपम रही जीवनशैली।

'मितव्ययी गुण' भी कोई सीखे तो उनसे- इतना माप तोल, आगे-पी
की सोच 'पैसा-व्यय' करना उनका विशेष गुण था। फिजूल खर्च करना उनक
कुण्डली में ही नहीं था एक बात यह भी थी कि 'खरी कमाई' में यह गुंजाइश
भी नहीं रहती कि कोई 'अनथनधाग' खर्च करें। राम जाने- आज के कई ज
ऐसे ठाठ-बाठ ऐसे सर्वसाधन संपन्न बन-ठन सज-धज निकलते हैं ? कहाँ वे
और कहाँ ये ? लिखना पड़ता है कि 'कैसे-कैसे लोग कैसे-कैसे हो गए औ
ऐसे-ऐसे लोग ऐसे-ऐसे हो गए।' न्यायकर्त्ता ही अगर 'अ' उपसर्ग लगाने ल
गए तो धरती रसातल नहीं पहुँच जाएगी। ऐसी आपाधापी में प्रेरणास्पद शिक्षा देत
है – शिखरचन्द्रजी जैसे लोगों का सादगी स्वरूप। न थोथी प्रदर्शन प्रियता
इसीलिए याद आती है उनकी मितव्ययिता।

जब भी मैं कोचर साहब के घर जाता, उनके परिवार के मध्य वार्तालाप
में खोता और प्रसंगवश त्रिवेणी बंधुओं (अपने-अपने क्षेत्र के तीनों भाई मिशाल
रूप) की चर्चा चल पड़ती तो मन में आए बिना नहीं रहता कि इन बातों को,
उनके सर्वगुण संपन्न व्यक्तित्व को, शुद्धाचरण को क्यों न लिपिबद्ध कर लिया
जाए ? ये बातें यूं ही बातें न रह जाएं, बातों के झौंकों में विलुप्त न हो जाए
– कहीं न कहीं नोट कर, उनका प्रकाशन किया जाना चाहिए ताकि आने वाली
पीढ़ी कोई शिक्षा ग्रहण कर सके, उन जैसी बन सके, त्याग-तपस्या सीख सके,
उत्तमोत्तमाचरणपथ पर चरण रख चल सके। सांसों को सार्थक कर सके। बस

यही मन्तव्य, यही लक्ष्य यही ध्येय पूर्त्यर्थ पुस्तकाकार देने का संकल्प मेरे और देवेन्द्रजी (शिखरचन्द्रजी के एकमात्र पुत्र) के बीच और साथ में बैठे मेरे मित्र वल्लभदासजी (शिखरचन्द्रजी के भतीजे) के मध्य ले लिया गया और अनेक विघ्नों, उच्चावच स्थितियों को पार कर यह पावन पोथी तैयार हो गई। यह मैं मानता हूँ और प्राय: सभी मानते हैं व्यक्ति तो केवल कोरा श्रेय लेता है - अमुक कार्य या काम मैंने किया है, यूं किया, वैसे किया, यह उसकी भ्रांति ही है - करवाने-कराने, करने वाला तो कोई और ही है, वही है जो सबके पीछे खड़ा है, प्रतिपल साथ 'अदृश्य सहयोगी' बन खड़ा है।

अत: यह 'पुस्तक प्रकाशन' परमात्मा की असीम कृपा का फल है, उनके (जज साहब के) पवित्र-चरित्र का पुण्य पुंज पुस्तक रूप धारण कर सका है, बस मेरी तो यही श्रद्धा है, उनके प्रति सच्ची आस्था है। सबका सहयोग स्वीकार है, शिरोधार्य है। नाम परिगणन शैली का अनुसरण न कर इतना ही विनम्र विचार है कि बांसुरी से किसी ने कहा, वंशी तूं कितनी मधुर लगती है ? तेरी तान तन्मय करने वाली है तो वह विनम्रता से बोली- 'इसमें मेरा क्या फूंक मारने वाला तो कोई और ही है।'

- डॉ. भगवानदान किराडू
मानद प्राचार्य
श्री नेहरू शारदापीठ
स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बीकानेर

प्रकाशकीय

किसी भी घटना का संबंध कार्य एवं कारण से होता है। इस पुस्तक का प्रकाशन का भी इस तथ्य से निरपेक्ष नहीं है। स्वनामधन्य श्री शिखरचन्द्रजी के व्यक्तित्व एवं कृतित्व ने उनके जीवन काल में ही सभी वर्ग के लोगों में सम्मानजनक स्थान प्राप्त कर लिया था। वे अनुकरणीय व्यक्तित्व के रूप में ख्याति प्राप्त कर चुके थे। उनका कार्यक्षेत्र, विस्तृत एवं बहुआयामी था। उनका अगस्त सन् 1984 में नागदा (म.प्र.) में स्वर्गवास के बाद विभिन्न विधाओं से जुड़े व्यक्तियों ने उनके व्यक्तित्व एवं कृतित्व से प्रेरणा लेने हेतु समग्र जीवन की झलक पाने हेतु उसे पुस्तका रूप में प्रकाशित करने का आग्रह किया। चरित्रनायक के स्वर्गवास के बाद, संवेदना हेतु विभिन्न व्यक्तियों एवं संस्थाओं के पत्र आये, जिसमें उनके व्यक्तित्व एवं कृतित्व की झलक मिलती थी। हम उनके समग्र स्वरूप के अनेक पहलुओं व घटनाओं से अनजान से ही थे। पत्रों के माध्यम से उनके स्वरूप का किंचित् मात्र दिग्दर्शन हुआ। इससे व स्नेहीजनों के आग्रह को दृष्टिगत रखते हुए हमने चरित्रनायक के जीवन काल में उनसे सम्पर्क में रहे व्यक्तियों को, पुस्तक में प्रकाशन हेतु अपने अभिव्यक्ति एवं संस्मरण आदि भेजने का नम्रतापूर्वक आग्रह किया। इस आग्रह को स्वीकार करते हुए अधिकांश व्यक्तियों ने अपने आलेख व अन्य सामग्री भेजी। इस कार्य को शीघ्र सम्पन्न करने हेतु बार-बार तकादे भी किये गये, लेकिन कार्य विशेष आगे बढ़ नहीं पाया।

श्री शिखरचन्द्रजी के एक मात्र पुत्र, श्री देवेन्द्रकुमार कोचर, अक्टूबर सन् 2001 में नागदा (म.प्र.) से सेवानिवृत्त हुए। उसके कुछ समय बाद, वे अपने जन्म स्थान, बीकानेर में स्थायी निवास हेतु नागदा से बीकानेर आ गये, तब पुस्तक प्रकाशन हेतु स्थानीय प्रबुद्ध शुभचिन्तकों से सम्पर्क कर गति देने का निर्णय किया। इस कार्य में उन्होंने हर प्रकार के सहयोग के लिये आश्वस्त किया एवं दिया भी। उनकी सूची लंबी है, उनका उल्लेख करना संभव नहीं है।

चरित्रनायक के वटवृक्ष के समान व्यक्तित्व एवं कृतित्व का इस अति संक्षिप्त प्रकाशन में समेटना संभव नहीं था। इसके अलावा, यह अत्यन्त श्रम साध्य होने के अलावा अत्यधिक समय लगने की भी संभावना थी। चूंकि, पुस्तक प्रकाशन में लगभग 25 वर्ष जैसा लंबा समय व्यतीत हो चुका है और अधिक समय इस हेतु लगाना किसी भी दृष्टि से उपयुक्त नहीं लगा। अतः इस ग्रंथ को सुधीजन के हाथों में प्रस्तुत करते प्रकाशन समिति धन्यताका अनुभव करती है।

पुस्तक के संपादक मण्डल में सभी लब्ध प्रतिष्ठित विद्वान एवं ख्याति प्राप्त

प्रतिष्ठित व्यक्ति हैं, जो किसी भी परिचय के मोहताज नहीं है। उनके प्रति समिति कृतज्ञ है।

पुस्तक की सामग्री संकलन करने एवं आधारभूमि तैयार करने का कष्ट साध्य दायित्व श्री देवेन्द्रकुमार कोचर ने निर्वहन किया है। यह ग्रंथ उन्हीं के श्रम एवं धैर्य से ही स्वरूप ग्रहण कर सका है।

ग्रंथ, न्यायमूर्ति श्री शिखरचन्द्रजी के व्यक्तित्व एवं कृतित्व पर केन्द्रित है। व्यक्तित्व खण्ड में जीवनवृत है। श्री शिखरचन्द्रजी के जीवनवृत का आधार, उनके द्वारा लिखित, 'जीवन सम्बन्धी इतिवृत', पारिवारिक विवरण एवं स्वजनों, संबंधियों और सम्पर्क में रहे उनसे प्रभावित सुज्ञजन द्वारा प्रदत्त प्रामाणिक जानकारी एवं सम्मतियाँ हैं। इसके साथ ही उनके दो भ्राता मेहता चम्पालालजी, कन्हैयालालजी कोचर एवं उनकी धर्मपत्नी श्रीमती प्रेमीबाई के जीवनवृत भी इस परिवार के गौरवमय चरित्र को उजागर करते हैं।

कृतित्व खण्ड में, श्री शिखरचन्द्रजी द्वारा लिखित विविध पत्रिकाओं में प्रकाशित निबन्धों एवं व्याख्यानों का संकलन है, जो जैनधर्म एवं दर्शन के उनके गहन, गम्भीर अध्ययन और जीवन व्यवहार से उद्‌भूत हैं।

वे अध्येता और वक्ता होने के साथ ही साहित्य प्रेमी कवि हृदय श्रावक थे। उनके द्वारा रचित तीर्थंकरों, आचार्यो के प्रति भक्तिभाव काव्यमय स्तवनों और कविताओं के रूप में व्यक्त हुआ है। उन्हें कृतित्व खण्ड में एकत्र किया गया है।

कोचर कुल परिचय, श्री कोचरजी की जन्मकुण्डली से प्रारम्भ इस ग्रन्थ में व्यक्तित्व एवं चित्रों के अतिरिक्त, न्यायाधीश के रूप में दिये गये महत्वपूर्ण निर्णयों का सार संक्षेप एवं प्रकाशित समाचार तथा सम्मतियाँ आदि दी गई हैं, वे उनके व्यक्तित्व का दर्पण हैं।

जीवन में सत्य, श्रम और स्व-पर-हित साधना की निष्ठा और व्यवहार की प्रेरणा प्राप्ति, इस ग्रन्थ का प्रयोजन है।

समिति पुस्तक प्रकाशन में तिलोक प्रिंटिंग प्रेस, बीकानेर के सर्वश्री दाऊलाल व्यास एवं विष्णु व्यास के प्रति अपना आभार प्रकट करती है, जिनके अनवरत सहयोग से प्रकाशन संभव हो सका।

पुस्तक प्रकाशन में सभी सावधानियाँ रखने के उपरान्त भी त्रुटियाँ रहना सम्भव है, जिसके लिए समिति पाठक-गण से करबद्ध क्षमा प्रार्थी है।

पुस्तक के लिए, जिन-जिन महानुभावों ने अपने श्रद्धा सुमन, संस्मरण, सम्मतियाँ आदि सामग्री भेजी, उपलब्ध करवाई, समिति उन्हें बहुत-बहुत साधुवाद देती हैं एवं आभार प्रकट करती है।

ग्रन्थ प्रकाशन समिति

भंवरलाल कोठारी	किशनचंद बोथरा	उपध्यान चंद्र कोचर
बी.आर. नाहर	सूरजमल पूगलिया	जयचंदलाल सुखाणी

"

बीकानेर के कोचर परिवार का संक्षिप्त परिचय एवं वंशावलि

संदर्भग्रंथ : महाजनवंश मुक्तावली - युक्तिवारिधि : उपाध्याय श्री रामलालजी गणि; निर्मित (पृष्ठ 97) प्रकाशक : शिष्य क्षेम अमरवालचंद; आवृत्ति - द्वितीय (सन् 1921) एवं ओसवाल जाति का इतिहास लेखक श्री सुखसम्पतराय भण्डारी व अन्य, इन्दौर (19 अगस्त, 1934)

कोचर वंश के मूल-पुरुप के पूर्वज पहले पूगल में रहा करते थे। वे वहाँ से संवत् 1385 के चैत्र शुक्ला 1 को मंडोर आए। मंडोर में राव चूडाजी ने संवत् 1446 में महीपालजी को सारे मारवाड़ का काम सौंपा और उन्हें 'मेहता' की उपाधि से सम्मानित किया। उनके प्रथम पुत्र-कोचरजी के जन्म के समय कोचरी बोलने के कारण उनका नाम कोचरजी रखा गया। वे संवत् 1457 में उत्पन्न हुए थे। उनके नाम से संवत् 1515 में कोचर शाखा की उत्पत्ति हुई। उनके वंशज सीहोजी फलोदी में बस गए। उनके पुत्र उरजोजी के 8 पुत्र हुए जिनके नाम क्रमशः (1) रामसिंहजी (2) राऊजी (3) डूंगरसिंहजी (4) भाखरसिंहजी (5) पचाणसिंहजी (6) राजसिंहजी (7) रतनसिंहजी (8) भींवसिंहजी थे। बीकानेर के महाराजा सूर्रसिंहजी, संवत् 1672 के माघ बदी 7 को उरझोजी तथा उनके चार पुत्रों, रामसिंहजी, भाखरसिंहजी, रतनसिंहजी तथा भींवसिंहजी को अपने साथ बीकानेर लाए और उन्हें 'लेखन' का काम सुपुर्द किया। बीकानेर के सारे कोचर परिवार उन्हीं के वंशज हैं। उरझोजी के बाकी 4 पुत्र फलौदी में ही रहे।

भींवसिंहजी, उरझोजी के अष्टम पुत्र थे। उनके चार पुत्र क्रमशः जैराजजी, अखेराजजी, पहराजजी एवं ताराचंदजी हुए। पहराजजी के तीन पुत्र हुए, जो क्रमशः इन्द्रसेनजी (इन्द्रभाणजी), चन्द्रसेनजी, सगतसिंहजी थे। चन्द्रसेनजी के दो

पुत्र हुए - अजबसिंहजी एवं अनोपचंदजी। मेहता अनोपचंदजी फराशखाने में मुन्सरिम थे। आपके आसकरणजी, माणकचंदजी एवं हठीसिंहजी नामक पुत्र हुए। इनमें मेहता हठीसिंहजी के पुत्र रिखनाथजी हुए, जो आसकरणजी के दत्तक गए। मेहता रिखनाथजी राज्य की सेवा में थे। आप बड़ी धार्मिक वृत्ति के पुरुष थे। आपके सुजानमलजी, चुन्नीलालजी और पन्नालालजी नामक तीन पुत्र हुए। इन बन्धुओं ने भी रियासत की अच्छी सेवा की। मेहता पन्नालालजी, राव छतरसिंहजी बैद के साथ महाजन, बीदासर और नोहर की लड़ाइयों में शामिल हुए थे। आपके अनाड़मलजी तथा जसकरणजी नामक 2 पुत्र हुए। मेहता अनाड़मलजी ने बीकानेर राज्य के कस्टम विभाग की स्थापना में अच्छा सहयोग दिया था। आप चतुर एवं प्रभावशाली व्यक्ति थे। आपके रतनलालजी, जतनलालजी एवं राजमलजी नामक 3 पुत्र हुए। इनमें जतनलालजी, मेहता जसकरणजी के नाम पर दत्तक गए। मेहता जसकरणजी का स्वर्गवास संवत् 1975 में हुआ। मेहता रतनलालजी इस परिवार में बहुत समझदार एवं अपने समाज में सम्माननीय व्यक्ति थे। संवत् 1989 में आप स्वर्गवासी हुए। आपके छोटे बंधु मेहता जतनलालजी का जन्म संवत् 1940 में हुआ। आप सुपरिन्टेडेन्ट कस्टम्स रहे। आप बड़े नेक दिल एवं ईमानदार व्यक्ति थे। आपका स्वर्गवास 8 फरवरी 1938 को हुआ। आपके तीन पुत्र क्रमशः चम्पालालजी, कन्हैयालालजी एवं शिखरचन्द्रजी थे। आपने अपने पुत्रों को उच्च शिक्षा दिलाई। तीनों भाई अपनी योग्यता, ईमानदारी एवं कर्त्तव्यनिष्ठा से सरकारी नौकरी में उच्च पदों पर कार्यरत रहे। चरित्रनायक मेहता शिखरचन्द्रजी, तीनों भाइयों में सबसे छोटे थे।

❑ ❑ ❑

दादीसा श्रीमती रतनबाई धर्म पत्नी श्री जसकरणजी कोचर
स्वर्गवास : तिथि द्वि. फाल्गुन कृष्णा 10 सं. 2039
दिनांक : 09.03.1983 बुधवार
स्थान : बीकानेर

बाबासा श्री रतनलालजी कोचर
स्वर्गवास : फरवरी, 1932
स्थान : कोलकाता
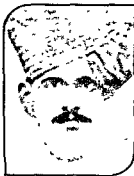
पिताश्री ज[illegible]लालजी कोचर
जन्म : आश्विन शुक्ला 4
शुक्रवार संवत् 1940
स्वर्गवास : माघ सुदी 8, संवत् 1994,
दिनांक : 08 02.1938
स्थान : बीकानेर

माताश्री श्रीमती धाईबाई
स्वर्गवास : वैशाख कृष्णा 9,
संवत् 2009, शुक्रवार
दिनांक : 18 04.1952
स्थान : रतनगढ़ (राज)

अग्रज श्री चम्पालालजी कोचर
जन्म : कार्तिक कृष्णा 14, संवत् 1963
मंगलवार, दिनांक : 16.10.1906
स्वर्गवास :मार्ग शीर्ष कृष्णा 5, संवत् 2031
दिनांक : 4.12.1974 बुधवार
स्थान : बीकानेर

भोजाई श्रीमती पानाबाई
स्वर्गवास : आसाढ़ कृष्णा 4, (दुजी),
संवत् : 2039, शुक्रवार
दिनांक 11.6.1982
स्थान : बीकानेर

अग्रज श्री कन्हैयालालजी कोचर
जन्म : भाद्रपद कृष्णा 7 रविवार ,
संवत् 1967 दिनांक 28 08.1910
स्वर्गवास : मार्गशीर्ष कृष्णा 5
संवत् 2033 शुक्रवार दिनांक : 12.11.1976
स्थान : बीकानेर

भोजाई श्रीमती पन्नादेवी कोचर
जन्म : फाल्गुन सुदी 14
संवत् 1973दिनांक 07.03.1917
स्वर्गवास : मार्ग शीर्ष सुदी 4
संवत् 2054 बुधवार दिनांक 3.12.1997
स्थान : विराटनगर (नेपाल)
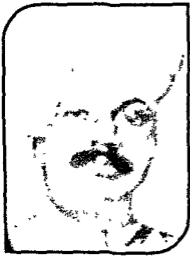
श्री शिखरचन्दजी कांचर

जन्म : श्रावण कृष्णा 6 रविवार,
संवत् 1972 दिनांक 1.8.1915
स्वर्गवास : भाद्रपद कृष्णा 9 संवत् 2041
दिनांक : 21.08.1984 मंगलवार
स्थान : नागदा (म.प्र.)

धर्मपत्नि श्रीमती प्रेमीबाई

स्वर्गवास : वैशाख सुदी 5 संवत् 2065
दिनांक : 09.05.2008 शुक्रवार
स्थान : बीकानेर
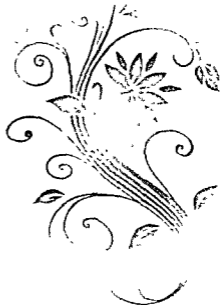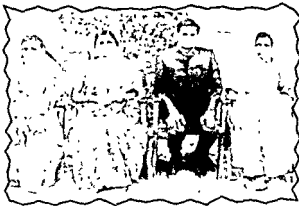
चरित्रनायक
की संतति:
माणक कुमारी
देवेन्द कुमार
किरण कुमारी
गुलाब कुमारी

बड़ी पुत्री
श्रीमती माणककुमारी
दीक्षित होने से पूर्व
साध्वी श्री दर्शन
श्री जी म.सा. के साथ
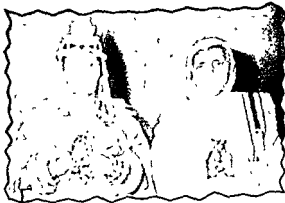
श्रीमती माणक कुमारी
(साध्वी श्री मंजुलाश्री म.सा.)
दीक्षावेष में,आचार्य
सुशील सूरिजी के साथ
(फाल्गुन कृष्णा 7
दिनांक 6.2.1972)

द्वितीय पुत्री
श्रीमती किरण कुमारी
दामाद श्रीनीलम चंदजी बोथरा
व दोहित्र अनिल, सुनील
व महेन्द्र बोथरा

युवावस्था में

सहपाठी प्रो. पृथ्वीराज जी जैन
संपादक : विजयानन्द 'मासिक'
अम्बाला सिटी

स्वीडिस विदुषी डॉ. हन्नारीड व अन्यों के साथ

धार्मिक कार्यक्रम में बोलते हुए
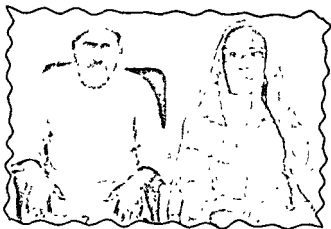
श्वसुर श्री मूलचंदजी वैद
एवं
सास श्रीमती पन्नीदेवी

अग्रज
श्री चम्पालालजी
व श्री कन्हैयालालजी
के साथ
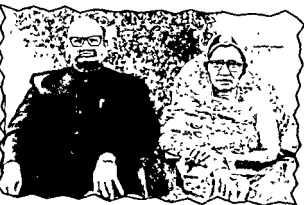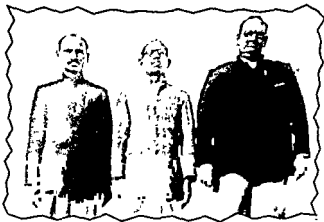
धर्म पत्नी
श्रीमती प्रेमीबाई के साथ

पुत्र श्री देवेन्द्रकुमार
एवं उनकी धर्म पत्नी
श्रीमती सम्पतकुमारी कोचर
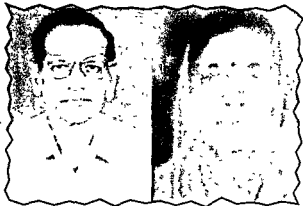
भतीजे श्री वल्लभदास
एवं उनकी धर्म पत्नी
श्रीमती सुन्दर कोचर

भतीजे श्री सुशील कुमार
एवं उनकी धर्म पत्नी
श्रीमती रतनदेवी कोचर
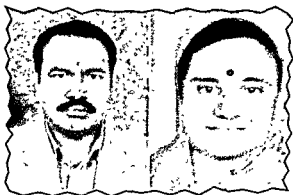
पौत्री दामाद
श्री दीपक कुमारजी सुराणा
एवं पौत्री
श्रीमती कुसुम सुराणा
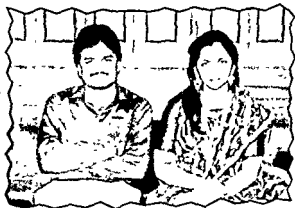
पौत्र
डॉ. नरेन्द्र कोचर
व उनकी धर्म पत्नी
श्रीमती सरीना कोचर
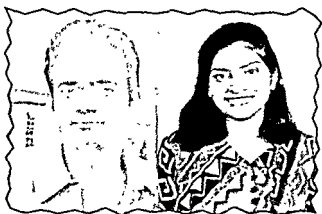
प्रपौत्र प्रपौत्री
नमन व सृष्टि

मेहता शिखरचंद्रजी कोचर की जन्म कुण्डली (Horoscope)

जन्म : 1 अगस्त 1915 श्रावण कृष्णा 6 संवत् 1972 रविवार

स्वस्ति श्री ऋद्धि वृद्धि जयो मंगलाभ्युदयश्च। अभिप्सीतार्थः सिद्धयर्थः पूजितो यो सुरासुरैः। सर्वविघ्नच्छेदै तस्मैः श्री गणाधिपतये नमः।। ब्रह्मा करोतु दीर्घायुः विष्णु करोतु संपदा। हरो रक्षतु गात्राणि यस्मेमा जन्म पत्रिका।।

अथास्मिन्शुभसंवत्सरे श्रीमन्नृपति विक्रमादित्य राज्यात् संवत् 1972 वर्षे शाके 1837 प्रवर्त्तमाने मासोत्तम मासे शुभे श्रावण मासे शुभे कृष्ण पक्षे षष्ठयां तिथौ रवौ वासरे घटि 19/57 रेवती नक्षत्रैभे घटि 33/54 ध्रुवनाम योगे घटि 39/25 एवं पंचांगे शुद्धौऽत्रदिने सूर्य्योदयात् इष्ट 2/30 सूर्य 3/14 लग्न 3/27 अत्र समये कोचर मेहता श्री अनाड्मलजी तत्पुत्र श्री जतनलालजी गृहे पुत्र जन्मः रेवती नक्षत्र इपादे जन्मः जन्म नाम चम्पालाल राशि 12 स्वामी गुरु गण देवता नाड़ी अंत्यः योनि गज वेर सिंहः। शुभं भूयात्

अथ जन्म लग्न

५ ल. श ३
सू
६ शु ४ बु २ मं
के
७ १
८ १० १२ बृ
रा चं
९ ११

अथ राशि

१ ११
ल.
२ मं १२ रा
चं बृ १०
३ श ९
सू
शु ४ बु ६ ८
के
५ ७

बहुआयामी व्यक्तित्व के धनी : मेहता शिखरचन्द्रजी कोचर

राजस्थान की धरती अपने शौर्य और वीरता की भूमि के रूप में जगत विख्यात है। भूत एवं वर्तमान में अनेक वीर पुरुषों एवं सन्नारियों ने युद्ध एवं अनेक विकट परिस्थितियों में शौर्य एवं वीरता का प्रदर्शन कर, अपनी जाति के साथ राज्य का भी गौरव बढ़ाया है। इसी धरती पर अनेक विद्वानों, संतों एवं मनीषियों ने भी जन्म लिया, जिन्होंने अपने व्यक्तित्व एवं कृतित्व से राज्य एवं भारतवर्ष का नाम उज्ज्वल किया। इसी शृंखला में मेहता शिखरचन्द्रजी कोचर का नाम बड़े सम्मान से लिया जा सकता है।

इतिवृत्त

श्री शिखरचन्द्रजी का जन्म दिनांक 1 अगस्त 1915 तदनुसार श्रावण कृष्णा 6 संवत् 1972, रविवार को मेहता अनाड़मलजी कोचर के सुपुत्र मेहता जतनलालजी कोचर के यहां बीकानेर में हुआ। मेहता जतनलालजी बड़े धर्मनिष्ठ एवं कर्त्तव्यपरायण व्यक्ति थे। वे भूतपूर्व बीकानेर रियासत में सुप्रिटेण्डेण्ट (कस्टम्स) थे। चरित्रनायक की माताजी श्रीमती धाई बाई, धर्म परायण एवं सहृदया महिला थी, जिनके गुणों प्रभाव उनकी संतानों में परिलक्षित होता है। इनके तीन पुत्र-मेहता चम्पालालजी, मेहता कन्हैयालालजी, मेहता शिखरचन्द्रजी थे।

श्री शिखरचन्द्रजी अध्यवसायी एवं प्रतिभा सम्पन्न थे। उनके व्यक्तित्व पर पारिवारिक, धार्मिक संस्कारों, साधुसन्तों और धर्मोचार्यों का गहरा प्रभाव पड़ा। विधाध्ययन में गहरी रुचि एवं ज्ञानार्जन हेतु तीव्र जिज्ञासा वृत्ति से सम्पन्न और नियमित कठोर पुरुषार्थ के धनी थे

श्री कोचरजी को 6 वर्ष की अवस्था में विद्याध्ययन हेतु हनुमानगढ़ में स्कूल में भर्ती कराया गया। उस समय उनके पिताजी श्री जतनलालजी हनुमानगढ़ में सुप्रिटेण्डेण्ट (कस्टम्स) थे।

सन् 1925-26 में शिखरचन्द्रजी को शीतला की भयंकर बीमारी हुई, जिसका प्रभाव रोगमुक्त होने के बाद भी काफी समय तक रहा। परन्तु जल्दी ही उन्होंने अपने भावी जीवन के संकेत देने शुरू कर दिये। श्री शिखरचन्द्रजी अत्यन्त ही अध्यवसायी एवं प्रतिभा संपन्न छात्र थे।

सन् 1930 में 8वीं कक्षा भादरा से प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण की एवं बीकानेर रियासत के सभी स्कूलों के विद्यार्थियों में प्रथम रहे। इस कारण श्री शिखरचन्द्रजी को बहुत सम्मान मिला। सन् 1930 में 9वीं कक्षा में डूँगर कॉलेज, बीकानेर में भर्ती हुए। 9वीं व 10वीं में तीन रुपये मासिक मेरिट स्कॉलरशिप मिली। सन् 1932 में हाई स्कूल की परीक्षा जोधपुर से दी। इसमें प्रथम श्रेणी प्राप्त की एवं इतिहास विषय में विशेष योग्यता मिली। राजपूताना बोर्ड की इस परीक्षा में दसवां स्थान रहा। जुलाई 1932 में बनारस हिन्दू यूनिवर्सिटी के सेन्ट्रल हिन्दू कॉलेज में भर्ती हुए। सन् 1934 में इन्टरमीडिएट साइंस परीक्षा उत्तीर्ण की। आई.एस.सी. पास करने के बाद रुड़की इंजीनियरिंग कॉलेज में प्रवेश के लिए बीकानेर राज्य से छात्रवृत्ति नहीं मिलने से सन् 1934 में बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय के सेन्ट्रल हिन्दू कॉलेज में तृतीय वर्ष (कला) में प्रवेश लेकर 1938 में बी.ए. की परीक्षा में विश्वविद्यालय में योग्यता क्रम में नौवां स्थान प्राप्त किया। जुलाई 1936 में एम.ए. (इतिहास) और एल.एल.बी. (प्रीवियस) में भर्ती हुए। सन् 1937 में वे एल.एल.बी. (प्रीवियस) में प्रथम श्रेणी से उत्तीर्ण हुए और विश्वविद्यालय में उनका द्वितीय स्थान रहा। 'लॉ ऑफ एविडेन्स' जैसे कठिन विषय में उन्होंने 100 में से 96 अंक प्राप्त किए। सन् 1938 में उन्होंने एल.एल.बी. की परीक्षा प्रथम श्रेणी से उत्तीर्ण की और विश्वविद्यालय में चतुर्थ स्थान रहा।

मेधावी और कुशाग्रबुद्धि श्री शिखरचन्द्रजी ने 26 मई 1938 से 31 मार्च 1941 तक वकालत की। 1 अप्रेल 1941 को बीकानेर रियासत की राजकीय सेवा में असिस्टेंट रजिस्ट्रार, हाईकोर्ट के पद पर रुपये 75/- मासिक पर नियुक्त हुए। उसके उपरान्त क्रमशः पदोन्नत होते गये और अन्त में राजस्थान राज्य सेवा में जिला एवं सत्र न्यायाधीश के पद पर पहुँचे। इस पद से दिनांक 1.8.1970 को झुंझनूं से सेवानिवृत्त हुए।

व्यक्तित्व के आयाम

गुरुभक्त

बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय में अध्ययन में वहाँ के कुलपति महामना पंडित मदन मोहन मालवीयजी का सान्निध्य मिला। पं. मालवीयजी की विद्वता और उत्तम चरित्र का सीधा प्रभाव श्री शिखरचन्द्रजी के चरित्र पर पड़ा। मालवीयजी विश्वविद्यालय के छात्रों के व्यक्तित्व के समग्र विकास के लिए विद्यार्थियों को राष्ट्रप्रेम, समाज-सेवा, नैतिक निष्ठा के भाव सुदृढ़ करने के लिए उद्बोधन देते रहते थे। उसके प्रभाव के फलस्वरूप श्री कोचरजी के वयैक्तिक व पारिवारिक जीवन, राजकीय सेवा कार्य, न्यायिक कार्य में कुशल, ईमानदार प्रशासक, सत्यनिष्ठ न्यायाधीश, धर्मनिष्ठ निस्वार्थ समाज सेवक एवं उच्च कोटि के विद्वान् साहित्यिक व्यक्ति के रूप में प्रतिष्ठित हुए।

विद्यानगरी काशी के विश्वविद्यालय की पूरी छाप उनके जीवन आदर्श और कार्य में प्रकट हुई। हिन्दी के प्रसिद्ध कवि एवं शिक्षक श्री अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध' का प्रभाव और उनके प्रति प्रेम श्री कोचरजी के साहित्यानुराग और काव्य रुचि में प्रकट हुआ है।

धर्मवृत्ति

वे बाल्यावस्था से धार्मिक प्रवृत्तियों से जुड़े हुए थे। प्रातःकाल ब्रह्मबेला से पूर्व निद्रा त्यागकर नित्य अनानुपूर्वि, नवस्मरण का पाठ व नवकार मंत्र आदि की मालाएं करना तदुपरान्त देव दर्शन हेतु मंदिर जाना तथा सायंकाल में भोजनोपरान्त माला व जप आदि उनके आजीवन नियमित कर्म थे।

बनारस में विद्यार्जन की अवधि में उन्हें विभिन्न धर्मों के दिग्गज आचार्यों, विद्वानों के प्रवचन सुनने एवं चर्चा करने का अवसर मिला।

उन्होंने आराध्य देवों की स्तुति में स्तवनादि की रचना की व धर्मगुरुओं के श्रद्धा-सुमन के रूप में प्रशस्तियां लिखीं।

सेवानिवृत्ति के बाद वे अपना अधिक समय धार्मिक गतिविधियों में बिताने लगे। जैन एवं जैनेतर आचार्यों व विद्वानों से उनका व्यक्तिगत सम्पर्क था। वे श्री कोचरजी को सम्माननीय व्यक्ति के रूप में देखते थे। उनके निधन के पश्चात् आये संदेशों से इस तथ्य की पुष्टि होती है, जिनका उल्लेख करना यहाँ प्रासंगिक है।

'उनका हमारे समुदाय से बहुत ही करीब का संबंध था और पू. पंजाब केशरी विजय वल्लभ सूरीश्वर महाराज के परम अनुरागी थे। उनका जीवन बहुत ही अच्छा था। न्यायाधीश के पद पर आसीन होकर भी उनके जीवन में अहंकार नहीं था। निरन्तर अध्ययनशील, धर्मसाधना आदि कार्यों को कभी भी नहीं छोड़ा। प्रगतिशील जमाने में भी वे बहुत सादगी से रहे।

- आचार्य विजय इन्द्रदिन्न सूरि

''बौद्धिकता और श्रद्धालुता का सहज समन्वय जिस व्यक्ति में था, जो साहित्य के गंभीर अध्येता थे और सत्य के प्रति सहज रूप में समर्पित थे। जैन दर्शन और धर्म के वे अन्तर हृदय से उपासक थे। श्री शिखरचन्द्रजी कोचर न्याय की कुर्सी पर बैठने पर धर्म को कभी विस्मृत नहीं करते थे।

- आचार्य श्री तुलसी

''कर्म से न्याय के क्षेत्र में और भावना से वे आध्यात्म के क्षेत्र प्रतिष्ठित थे। सहज-सरल जीवन, बाहर से सीधा सा व्यक्तित्व और भीतर में काफी गहरा, मेहता शिखरचन्द्रजी कोचर को इस रूप में देखा था। उनमें प्रबल जिज्ञासा थी। सांप्रदायिकभाव से अधिक, सत्य की जिज्ञासा का भाव उनमें विद्यमान था। आचार्यश्री तुलसी के प्रति अगाध श्रद्धा थी। अनेक जिज्ञासाएँ लेकर हमारे सामने आते और उन्हें प्रस्तुतकर समाधान पाने का प्रयत्न करते। उनकी सरल निश्छल जीवन शैली दूसरों के लिए भी अनुकरणीय है।

- युवाचार्य महाप्रज्ञ

''कुछ व्यक्ति ऐसे होते है जो जाने के बाद भी अपने कृतित्व की सुगन्ध छोड़ देते हैं। स्व. शिखरचंदजी मेहता/कोचर ऐसे ही व्यक्ति थे। न्याय के आसन पर बैठकर, उन्होंने जनता को जो आत्मीयता दी और उनका विश्वास अर्जित किया वह उनकी धार्मिक मनोवृत्ति का प्रतीक है।

- साध्वीप्रमुखा कनकप्रभा

वे शुद्ध आचरण वाले सुश्रावक तथा अनन्य गुरुभक्त थे। अपनी गुरु परम्परा आचार्यश्री आत्म-वल्लभ-समुद्र-इन्द्रदिन्न परम्परा में उनकी अटूट श्रद्धा थी।

- भंवरलाल कोठारी

अध्यक्ष, राजस्थान गौ सेवा आयोग

राजकीय क्षेत्र में ऊँचे पदपाकर भी उनकी सादगी सरलता और सज्जनता

आदर्श थी। जप, तप और धार्मिक आराधना में सदाअग्रणी रहते थे। जीवन में सादगी खूब प्रवेश कर गई थी। ऐसे व्यक्तियों से समाज गौरवान्वित होता है।

– हीराचंद वैद, जयपुर

समय-समय पर आयोजित धार्मिक शिविरों में उनकी अहम् भूमिका होती थी। कोचरों के चौक में स्थापित धार्मिक पाठशाला के प्रारम्भ से ही अध्यक्ष रहे।

उन्होंने समय-समय पर पारिवारिकजनों के साथ विभिन्न तीर्थों की यात्रा की एवं वहाँ दर्शन, पूजा व गुरुदर्शनों का लाभ लिया।

अपने पारिवारिक सदस्यों को धार्मिक एवं नैतिक सिद्धांतों को अपनाने की प्रेरणा देते थे। इसी कारण उनमें उत्तम संस्कार पड़े। उनकी सबसे बड़ी पुत्री माणक कुमारी ने जैन साध्वी की दीक्षा ग्रहणकर, अपना जीवन सफल बनाया और परिवार व समाज को गौरवान्वित किया।

जैन मुनियों, आचार्यों की स्मृति में प्रकाशित ग्रंथों, स्मारिकाओं, अभिनन्दन ग्रंथों में प्रकाशित लेखों से उनका धर्म तत्त्वों आदि के गहन अध्ययन की अनुभूति होती है।

"श्री शिखरचन्दजी साहब लगनशील, साहित्य प्रेमी और सहृदय सज्जन थे।

सं. 1991 में जब हमारा युग प्रधान श्री जिनचन्द्रसूरि ग्रंथ का लेखन-प्रकाशन हो रहा था तब ऐतिहासिक ग्रंथादि अन्वेषण करके डा. ईश्वरी प्रसाद के "A Short History of Muslim Rule in India" के प्रथम संस्करण के पृ. 506 से अनुवाद सहित उद्धृत करके एतद्विषयक अवतरण भेजा था। हमने अपने ग्रंथ में उसे प्रकाशित किया और प्रस्तावना में आपका आभार भी व्यक्त किया। साहित्यिक कार्यों में आपका हमें सहयोग प्राप्त था, 'कुशल निर्देश' में प्रकाशनार्थ आप लेख भी भेजते थे और सुपुत्र देवेन्द्रकुमार को भी प्रेरित कर भिजवाते थे।"

– भंवरलाल नाहटा

सम्पादक, कुशल निर्देश, कलकत्ता

वे विभिन्न सरकारी पदों पर रहते हुए भी धार्मिक आयोजनो में भाग लेते थे। अनेक आयोजन उनकी अध्यक्षता में ही होते थे। उन्होंने जैन शास्त्रों के अलावा गीता, रामायण, महाभारत आदि का विस्तृत अध्ययन किया था। वे उन पर विस्तार से चर्चा करते थे।

– वैद्य पंडित राम प्रसाद शर्मा शास्त्री, दर्शनालंकार, विविधोपाधि अलंकृत, खेतड़ी निवासी।

''मैंने श्रीमान् शिखरचन्द्रजी में प्रकाण्ड विद्वता पाई। संस्कृत काव्य पाठ, धार्मिक कथा प्रसंग, हिन्दी, उर्दू साहित्य ज्ञान व हिन्दू और जैन साहित्य की अभिरुचि में उनका सानिध्य हमेशा नीति के श्लोकों, लोक कथाओं से गूंजता रहता व हम सत्संग मण्डली वाले वृद्धजन दत्तचित्त होकर उन्हें सुना करते।''

- एस.एम. दुबे

रिटायर्ड डिप्टी क्लेक्टर, इन्दौर

कर्मयोगी

वे गीता के 'कर्म करते जाओ, फल की चिन्ता मत करो' एवं 'चरैवेति चरैवेति' के सिद्धान्त पर अटूट आस्था रखते थे।

अध्ययनकाल के उपरान्त, गृहस्थ जीवन में भी उन्हें अनेक विकट आर्थिक एवं पारिवारिक समस्याओं का भी सामना करना पड़ा लेकिन कभी भी अपने लक्ष्य से विमुख नहीं हुए एवं न ही कर्त्तव्य से च्युत् हुए।

''आप शांत प्रकृति के आदमी थे। हर काम, जहां तक संभव हो अपने हाथों से ही करते थे। शरीर भारी होते हुए भी बिना आलस, अपना काम खुद करते। कोई दुर्गुण या व्यसन नहीं था। न कभी ताश आदि खेलते। अवकाश के समय स्वाध्याय, सत्शास्त्र पठन ही उनका जीवन था।

- जसकरण कोचर

अवकाश प्राप्त जिला कोषाधिकारी, बीकानेर

''वे सहनशील व्यक्ति थे। उन्हें गुस्सा नहीं आता था। वे धैर्य से काम लिया करते थे। उनमें प्रमाद बिलकुल नहीं था। वे किसी कार्य को तुच्छ नहीं समझते थे। कठिन परिस्थिति में भी घबराते नहीं थे। उन्हें दूसरे की आलोचना कतई पसंद नहीं थी। वे कहा करते थे ''तुझे पराई क्या पड़ी अपनी निबेड़ तूं।'' उनकी याददाश्त जबर्दस्त थी। अपने जीवन में घटी घटनाएँ उन्हें अक्षरश: याद थी। अपने जीवन में पूर्णत: सजग रहे और ईमानदारी का जीवन जीया।

- श्रीमती किरण कुमारी बोथरा, रायपुर

न्याय निष्ठा

वे सदा न्याय के पक्षधर थे। अपने न्यायिक सेवाकाल के दौरान किसी भी मुकद्दमे का निर्णय सुनाने से पूर्व उसे पुख्ता करने के लिये संबंधित पक्षों को अत्यंत शांतिपूर्वक सुनने के बाद काफी विचार करते थे। उस पर कानून एवं उच्च न्यायालय व उच्चतम न्यायालय द्वारा दिये गये निर्णयों के आधार पर कसौटी पर कसते थे। तदुपरान्त ही अपना निर्णय सुनाते थे। वे सभी निर्णय स्वयं

अपने हाथ से लिखते थे। उसके उपरान्त टाईप करने को देते थे। यही कारण था
कि उनके द्वारा दिये गये निर्णय, ऊपरी न्यायालयों में कभी भी बदले नहीं गये
एवं उनके द्वारा समय-समय पर सराहे गये।

वे न्यायिक प्रक्रिया में किसी भी व्यक्ति के प्रभाव में नहीं आते थे। ऐसे
प्रसंग भी आये, जिनमें कई प्रभावशाली व्यक्ति चाहते थे कि किसी तरह उनके
मामलों का निर्णय उनकी इच्छानुसार उनके पक्ष में हो जाये। इसके लिये कई
तरह के प्रलोभन एवं प्रभाव डलवाने की चेष्टा भी की गई, लेकिन कोचरजी
विधि की मर्यादा में, ईमानदारी से, जो न्यायोचित होता, वही निर्णय देते। वर्तमान
काल में, जहाँ पैसा व सत्ता ही सर्वोपरि है, ऐसे विकट समय में सभी प्रलोभनों
से ऊपर उठकर एवं किसी भी प्रकार के प्रभाव में न आकर, न्याय की ही
प्रतिष्ठा रखना उनके लिए सहज था।

"श्री शिखरचन्द्रजी के साथ मेरा निकट संबंध चूरू में हुआ। वे चुरू में
जिला न्यायाधीश थे। ....ईमानदारी में इस जमाने में उनका मुकाबला करने वाला
विरला ही माई का लाल होगा। इसी कारण, वे अपनी कोठी में किसी से बातचीत
नहीं करते थे।....

मैंने सुन रखा था कि वे बहुत ईमानदार है। चूरू में इसका अनुभव हुआ।

रतनगढ़ के किसी कोचर का मुकदमा उस जिला न्यायालय में था।
रतनगढ़ से वे कोचर मेरे संबंधी (वैद) को लेकर मेरे पास आये और मुझे
सिफारिश करने को कहा। मैंने उनको साफ-साफ कह दिया कि भाई साहब
रतनगढ़ में मुन्सिफ रह चुके हैं। आपको जानते हैं। अगर केस सही है तो न्याय
होगा। मेरे कहने से तो आपको मदद नहीं मिलेगी। शायद गलत प्रभाव पड़े।

इसी प्रकार बीकानेर के एक स्वर्णकार, जो मेरा खूब परिचित था, उसके
भाणजे के विरुद्ध, जो सुजानगढ़ में रहता था, दूध में पानी मिलाना आदि सेल
भेल का मुकदमा सुजानगढ़ में था, जिसमें वह हार गया। उसकी अपील चूरू के
जिला न्यायालय में की। मेरा परिचित होने से मेरे पास आया। मैंने कहा, अगर
तुम्हारा केस मजबूत है तो न्याय होगा। वकील कर लो। उसकी अपील मंजूर हो गयी।"

– जसकरण कोचर

अवकाश प्राप्त जिला कोषाधिकारी, बीकानेर

"भाईजी अनेक मानवीय गुणों से संयुक्त थे। धीर, गंभीर और ईमानदार
तो थे ही। न्यायाधीश के पद पर रहकर भी उसकी प्रतिष्ठा को बनाये रखा।"

– हजारीमल बांठिया, कानपुर

समाजसेवी

वे समग्र समाज की सेवा में विश्वास रखते थे। बीकानेर की प्रतिष्ठित संस्था श्री जैन पाठशाला सभा के वर्षों तक सचिव पद पर रहे। अपने सेवाकाल के दौरान भी सदैव सेवा में तत्पर रहते थे। असहाय व निर्बल लोगों के लिये उनके दिल में सहानुभूति व यथाशक्य सहयोग देने की भावना सदैव रही। सेवानिवृत्ति के बाद वे विभिन्न सामाजिक संस्थाओं एवं विद्यालयों के प्रबंधन आदि से जुड़े रहे एवं अपने दीर्घकालीन अनुभवों से उन्हें लाभान्वित करते रहे।

"अवकाश प्राप्त करने के बाद तो अपना सारा जीवन समाज की सेवा, साधु- साध्वियों को धर्म ध्यान पढ़ाने में, पाठशाला में धार्मिक पढ़ाई करने में बिताया।"

-हजारीमल बाँठिया

"जज साहब में समता व सरलता कूट-कूट कर भरी हुई थी। कोचरों की गुवाड़ में किसी भाई के यहाँ शादी-विवाह, तपस्या, मरण या अन्य किसी प्रकार का कार्यक्रम हो, जज साहब बिना भेदभाव के हर एक के यहाँ निश्चित रूप से समय पर सम्मिलित होते थे।"

- रामकिशन कोचर, बीकानेर

"न्यायिक क्षेत्र में बहुत ऊँचे अधिमान स्थापित करते हुए तथा साहित्य सेवा को अनवरत रखते हुए तथा सामाजिक कुरीतियों को उन्मूलन के लिये कड़ा एवं प्रखर रुख रखते हुए उन्होंने जो जीवन जीया, वह उनके लिये तो शुभ एवं श्रेयस्कर रहा ही, हम लोगों के लिये भी बड़ा मार्गदर्शक रहा।"

-रायचंद जैन, एडवोकेट, श्रीगंगानगर

साहित्य-स्नेही

वे साहित्य सेवी एवं साहित्यानुरागी थे। उन्होंने अनेक पत्र-पत्रिकाओं में विभिन्न विषयों पर लेख लिखे। अपने गुरुदेवों के सम्मान में प्रशस्तियाँ लिखी जो काफी सराही गईं। इसके अलावा राजस्थानी व हिन्दी भाषाओं में काव्यों की रचना की, जो समय-समय पर विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हुईं। उनकी काव्य रचनाओं में बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय में शिक्षक रहे सुप्रसिद्ध कवि श्री अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध' की कविताओं की छटा देखने में आती है।

उनकी साहित्य जगत में की गई उल्लेखनीय सेवाओं के सम्मानार्थ सन् 1943 में अखिल भारतवर्षीय विद्वत् सम्मेलन में "हिन्दी साहित्य शिरोमणि" एवं सन् 1944 में "साहित्याचार्य" की उपाधियाँ प्रदान की गई।

उन्हें संस्कृत भाषा के सैंकड़ों श्लोक कण्ठस्थ थे। उर्दू भाषा के प्रसिद्ध शायरों के भी शेर बहुत याद थे। उन्हें वे समय-समय पर अपने उद्‌बोधन एवं भाषण में उदधृत करते थे। उन्हें समय समय पर कवि सम्मेलनों व मुशायरों में आमन्त्रित किया जाता था एवं अनेक बार ये आयोजन उनकी अध्यक्षता में होते थे।

वे हिन्दी, संस्कृत, अंग्रेजी, उर्दू, राजस्थानी व प्राकृत भाषा के विद्वान् थे।

सत्यं, शिवं, सुन्दरं के उपासक

वे सदैव सत्यं, शिवं, सुंदरं के उपासक रहे। उनका जीवन सत्य का दिग्दर्शन कराता है। शिवं भी उनके जीवन में प्रतिष्ठित था। सुन्दरम् की प्राप्ति हेतु निरन्तर प्रयत्नशील रहते थे। इसी कारण उनके जीवन में लौकिक एवं अलौकिक गुणों का समावेश था।

अनुपम व्यक्तित्व के धनी

उनका व्यक्तित्व अनुपमेय था। सामान्य जन उनको देखकर बहुत कठिनता से विश्वास कर पाते थे कि श्री कोचरजी इतने विद्वान्, गुणी एवं उच्चकोटि के न्यायविद् हो सकते है। 'सादा जीवन उच्च विचार' के सिद्धान्त के साक्षात् मूर्तिरूप एवं दृढ़ संकल्पी थे। उन्होंने हर वर्ग के लोगों से प्रतिष्ठा पाई। हर एक चीज की गुणवत्ता व ऐसी चीजें जो लोग निरुपयोगी समझें, उसका वे समुचित उपयोग कर लेते थे।

राजकीय सेवानिवृत्ति के पश्चात् श्री कोचरजी ने अपना सारा जीवन, अपने गृह नगर बीकानेर की सेवा में व्यतीत किया। वे बीकानेर नगर की विभिन्न सामाजिक, धार्मिक एवं शैक्षणिक संस्थाओं से जुड़कर सार्वजनिक जीवन को समुन्नत करने में सतत संलग्न रहे।

"मैं बिरलाग्राम में कार्यरत था, मुझसे समय-समय पर मिलने आते, पूरे परिवार की सार-सम्भाल करते। वे पितृ-ऋण से उऋण होने वाले पिता थे। विरला ग्राम में भी वे जैन समाज को सेवाएँ देते रहते थे। सन् 1984 में उनका स्वास्थ्य अचानक बिगड़ गया। वे 3 महीने तक अस्पताल में रहे व लम्बी बीमारी के दौरान, अर्ध बेहोशी में भी वे समता-भाव धारण किये हुये थे। इस दौरान उन्होंने कभी भी क्रोध नहीं किया एवं व्याधि की शिकायत नहीं की।"

– देवेन्द्रकुमार कोचर

उनका स्वर्गवास दिनांक 21 अगस्त 1984, भाद्रपद कृष्णा 9 संवत् 2041 को मध्यप्रदेश के उज्जैन जिले में स्थित बिरलाग्राम (नागदा) में हुआ।

□ □ □

बीकानेर के गौरव : मेहता चम्पालालजी कोचर

भारतवर्ष अतीत काल से शूरवीरों, कर्मयोगियों, धर्माचार्यों एवं विभि
क्षेत्रों के प्रकांड विद्वानों एवं मनीषियों की भूमि रही है, जिसकी ख्या
विश्वविख्यात हैं। इसी भारतवर्ष का मरुस्थलीय प्रदेश, राजस्थान भी अग्रगण
रहा है। यह प्रदेश अनेक विभूतियों की जन्मस्थली व कर्मस्थली रही है
राजस्थान की मरुभूमि में स्थित बीकानेर संभाग (पूर्व में बीकानेर रियासत)
भी ऐसे नररत्न हुए हैं, जिनके कृतित्व का गुणगान देश में ही नहीं अपितु विश
में गुंजित है। इसी शृंखला में हमारे चरित्रनायक मेहता चम्पालालजी का नाम ब
सम्मान के साथ लिया जा सकता है।

स्वनाम धन्य श्री चम्पालालजी का नाम स्मरण में आते ही, एक कुश
प्रशासक, कट्टर ईमानदार, धर्मप्राण, कर्त्तव्यपरायण व्यक्तित्व के रूप में मान
पर चित्रित हो जाता है, जो अपनी चारित्रिक उज्ज्वलता एवं अध्यवसाय के ब
पर कीर्ति के शिखर पर पहुँच पाये।

मेहता चम्पालालजी कोचर का जन्म दिनांक 16.10.1906 (संवत् 196
कार्तिक कृष्णा 14 दीपावली पूजन के दिन) मेहता जतनलालजी कोचर के य
परम पूज्य माता श्रीमती धाई बाई की कोख से हुआ। इनके पिताजी बीकानेर राज
में सुप्रिटेण्डेण्ट (कस्टम्स) थे। स्वयं बड़े ईमानदार एवं धर्मनिष्ठ व्यक्ति थे
इनकी माताजी बड़ी कुशाग्र बुद्धि वाली, परोपकारी एवं निष्ठावान महिला थी। श्री
चम्पालालजी के दो अन्य भाई - मेहता कन्हैयालालजी (सेवानिवृत्त विका
अधिकारी) एवं मेहता शिखरचन्द्रजी कोचर (सेवानिवृत्त जिला एवं सत्र न्यायाधीश
थे। आप उनके अग्रज थे।

इनका विवाह कातेला परिवार की श्रीमती पानाबाई से हुआ। इनकी धमपत्नी, *श्रीमती पानाबाई एक संस्कारिक, धार्मिक प्रवृत्ति की महिला थी।* यही संस्कार अपनी संतति में परिलक्षित होते हैं। उनके एक पुत्र श्री वल्लभदास कोचर एवं चार पुत्रियां क्रमशः श्रीमती सम्पतबाई, शांतिबाई, कमलाबाई व पुष्पाबाई हुई। सभी का विवाह सुप्रतिष्ठित परिवारों में हुआ।

वे बाल्यावस्था से ही अत्यन्त तीक्ष्ण बुद्धि के थे। वे हाईस्कूल तक शिक्षा प्राप्त कर उच्च शिक्षा हेतु बनारस गये। बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय से बी.ए., एल.एल.बी. तक शिक्षा प्राप्त कर बीकानेर आ गये।

राजकीय सेवा - बीकानेर आने पर राजस्व विभाग, बीकानेर राज्य में *नौकरी हेतु उनका चयन, ख्याति प्राप्त बीकानेर राज्य के प्रधानमंत्री मनुभाई एन.* मेहता की अध्यक्षता वाले चयन बोर्ड ने किया। इस प्रकार सितम्बर 1931 में उनकी राजस्व विभाग में राजकीय सेवा प्रारंभ हुई।

राजस्थान राज्य में विलय होने से पूर्व उन्होंने बीकानेर रियासत में तहसीलदार, चीफ कमिश्नर के व्यक्तिगत सहायक, श्रीगंगानगर राजस्व अधिकारी, नाजिम, कन्ट्रोलर ऑफ प्राइसेज, डायरेक्टर ऑफ सिविल सप्लाईज, स्पेशयल ऑफिसर रेवेन्यू विभाग, निर्वाचन उपायुक्त, कमिश्नर, बीकानेर संभाग की हैसियत से सफलतापूर्वक कार्य किया।

जब वे म्युनिसिपल कॉसिल में डेप्यूटेशन में थे, तब स्व. महाराजा श्री गंगासिंहजी, बीकानेर राज्य के राज्यारोहण की गोल्डन जुबिली समारोह सन् 1937 में हुआ। इस समारोह के दौरान उन्होंने बीकानेर शहर के बाजारों एवं सड़कों के स्वरूप को बदलकर सुव्यवस्थित किया। सन् 1941 में बीकानेर की राजकुमारी का शुभविवाह उदयपुर के महाराणा के साथ हुआ। उस समय वे विवाह के भोजन एवं उससे संबंधित व्यवस्थाओं के प्रमुख थे। जब वे सिविल सप्लाइज विभाग में थे, तब उन्होंने निजी फर्मो एवं अन्य राज्यों की सरकारों से व्यवहारों के दौरान बीकानेर राज्य को लाखों रुपयों का लाभ करवाया। उन्होंने अपने कुशलतापूर्वक कार्यों के लिये शासकों, मंत्रीगण एवं सामान्य जनता में सदैव अत्यन्त सम्मानपूर्वक स्थान पाया।

बीकानेर रियासत का राजस्थान राज्य में विलय होने पर उन्होंने सेटलमेंट ऑफिसर, जोधपुर, अतिरिक्त कमिश्नर, बीकानेर व उदयपुर संभाग, डायरेक्टर कोलोनाईजेशन, राजस्थान नहर, जिलाधीश नागौर, बीकानेर, उदयपुर, श्रीगंगानगर (4 बार) पदों पर कार्य किया।

सेटलमेंट ऑफिसर के रूप में उन्होंने सभी संबंधित पक्षों को संतुष्ट रखते हुए 3½ वर्षों का कार्य सिर्फ एक वर्ष में पूरा कर दिया।

डायरेक्टर, कॉलोनाईजेशन के रूप में कॉलोनाईजेशन का विभाग प्रारंभ किया, योजना आयोग से योजना की स्वीकृति प्राप्त की, क्षेत्र के विकास हेतु सारी योजनाएँ एवं व्यवस्थाएँ बनाई, विस्तृत सर्वेक्षण किया एवं विस्तृत रिकॉर्ड तैयार किया।

कलेक्टर, नागौर के कार्यकाल के दौरान भूमि संबंधी विकट समस्या का समाधान किया एवं हिन्दू-मुस्लिम संघर्ष को होने नहीं दिया। कलेक्टर, उदयपुर के कार्यकाल में वन एवं कृषि के विकास हेतु विभिन्न योजनाएँ प्रारम्भ की। कलेक्टर, बीकानेर के दौरान आर.ए.सी. को बहुत ही कुशलतापूर्वक सुसज्जित किया, जिसके कारण सितम्बर 1965 में पाकिस्तानी आक्रमण के समय उसका बहुत महत्त्वपूर्ण योगदान रहा। कलेक्टर, श्रीगंगानगर के कार्यकाल में 3½ महीने तक निरन्तर चलने वाले आबियाना आन्दोलन का समापन पूर्ण शांतिपूर्वक ढंग से हुआ। साम्यवादियों द्वारा कराये गये आन्दोलन व हड़ताल को सफलतापूर्वक नियंत्रित किया। भाखड़ा सिंचाई के संबंध में सरकार को लगभग 1½ करोड़ रुपयों की हानि से बचाया। घग्घर नदी को नियंत्रित किया एवं राष्ट्र को भारी जान-माल की हानि से बचाया। केवल एक वर्ष की अवधि में भूमि के स्थायी विक्रय के लगभग 20,000 मामलों का निपटारा किया, लेकिन किसी भी पक्षकार की ओर से किसी भी प्रकार की शिकायत या असंतोष का लक्षण नहीं मिला। यह अपने आप में विलक्षण कार्य था।

सितम्बर 1965 के पाकिस्तान आक्रमण के दौरान लोगों में राष्ट्रीयता की भावना को जगाया और उनका नैतिक साहस बढ़ाया। परिणामत: पाकिस्तान सीमा से लगे गाँववासी इस विकट समय में भी सामान्य रूप से कार्य करते रहे। उनके अथक प्रयत्नों एवं सूझबूझ से पाकिस्तानी आक्रमण को सफलतापूर्वक निष्फल कर दिया गया। उन्होंने सीमा सुरक्षा का प्रबंधन इतनी कुशलता से किया कि पाकिस्तानी फौजों के द्वारा किया गया आक्रमण निष्फल हुआ। साथ ही साथ दुश्मन, किसी भी भारतीय चौकी पर कब्जा न कर सके, न ही गंगानगर जिले की इंच भर जमीन पर अपना आधिपत्य जमा सके। यह सम्पूर्ण देश में अनुपम घटना थी।

उनकी विशिष्ट सेवाओं के लिये उन्हें समय समय पर सम्मानित किया गया। उन्हें पूर्व बीकानेर राज्य द्वारा स्वर्ण एवं रजत मेडल भी दिये गये। राजस्थान

के मुख्यमंत्री व अन्य मंत्रियों द्वारा प्रशस्ति पत्र प्रदान किये गये। अमरीका के राजदूत व अनेक गणमान्य व्यक्तियों ने उन्हें प्रशस्ति-पत्र दिये। राजस्व मंत्री ने आपात्कालीन समय में उनकी विशिष्ट सेवाओं के लिये सांकेतिक भेंट स्वरूप दो एकड़ सिंचित भूमि उन्हें प्रदान करने की भी सिफारिश की, जो अपने आप में एकाकी घटना थी। चौंतीस वर्ष की निष्ठापूर्ण, निष्कलंक एवं उपलब्धि पूर्ण राजकीय सेवा से प्रतिष्ठापूर्वक सन् 1966 सेवानिवृत्त हुए। सेवानिवृत्ति के उपरांत कई सामाजिक एवं धार्मिक संस्थाओं को मार्गदर्शन देते रहे। सेवाकाल के प्रारंभिक काल में बीकानेर की प्रसिद्ध श्री जैन पाठशाला सभा के सचिव रहे। उनका स्वर्गवास संवत् 2031 मार्गशीर्ष कृष्णा 5 बुधवार दिनांक 4 दिसम्बर 1974 को बीकानेर के पी.बी.एम अस्पताल में हुआ। उनका पार्थिव शरीर भले ही नष्ट हो गया लेकिन उनके यशस्वी कार्य सदैव प्रेरणास्पद रहेंगे।

व्यक्तित्व की विशेषताएँ

1. उनको प्रारम्भिक काल में घुड़सवारी, संगीत आदि का शौक था। कार्यभार बढ़ने से धीरे-धीरे कम हो गया।
2. वे सदैव सादा जीवन उच्च विचार में विश्वास रखते थे एवं पालन करते थे। घर में धोती व कुर्ते में ही रहते थे।
3. वे अपने से बड़े-छोटों से बड़ा स्नेह रखते थे। वे बच्चों से सदैव स्नेहिल व्यवहार रखते थे।
4. त्यौहार व अन्य विशिष्ट अवसरों पर आने वाले उपहार, भेंट आदि को बाहर से ही लौटा देते थे। किसी भी पारिवारिक सदस्य को भी न लेने की हिदायत थी।
5. ऑफिस में अपने व्यक्तिगत कार्य के लिये स्टेशनरी आदि अलग रखते थे।
6. *निजी आवश्यकता होने पर, अपने अधीनस्थ सरकारी गाडियों के उपयोग* के लिए उनमें पेट्रोल आदि का खर्च स्वयं वहन करते थे।
7. उनके निवास पर घर की महिलाएँ स्वयं अपने हाथों से गृह-काय करती थीं।
8. एक बार की बात है कि उनके बंगले के बाग में एक शीशम का बड़ा पेड़ टूटकर गिर गया। उससे काफी लकड़ी मिलने की संभावना थी, जिससे अच्छा फर्नीचर बन सकता था। परिवार के किसी सदस्य ने ऐसा सुझाया तो वे उस पर रोष प्रकट करते हुए बोले कि यह किसी के बाप का माल नहीं है, यह सरकार की सम्पत्ति है। इस वृक्ष की लकड़ी की नियमानुसार नीलामी होगी एवं इसका पैसा सरकारी खजाने में जमा होगा। यह उनकी ईमानदारी का विशिष्ट उदाहरण है।

9. उनकी बुद्धि बड़ी तीक्ष्ण थी। वे तुरन्त निर्णय ले लेते थे, जो सदैव सही होते थे।
10. वे बड़े से बड़े संकट में कभी घबराये नहीं। न ही किसी भी मन्त्री, नेता से भयभीत हुए। सदैव दो टूक बात कह देते थे।
11. वे सदैव पदलिप्सा से दूर रहे कर्त्तव्यपरायणता को ही लक्ष्य में रखकर कार्य किया। बड़े से बड़ा प्रलोभन कभी उन्हें कर्त्तव्य से डिगा न सका।
12. वे सर्वधर्म समभाव में विश्वास करते थे। जैन धर्म के सिद्धान्तों का जीवन में यथाशक्य पालन किया। छोटे से छोटे जीव की हिंसा न हो इसके प्रति वे पूर्णत: सजग रहते थे। यथासंभव उनको बचाने के लिये प्रयत्नशील रहते थे। गंदगी में पड़े जीवों को भी बचाने में उन्हें कभी किसी भी प्रकार का ग्लानि भाव नहीं आता था।

अन्त में, उनके जीवन से कुछ प्रेरणा लेकर हम भी अपने जीवन को ऊर्ध्वगामी बना सकें तो ही लेखन की सार्थकता होगी।

□ □ □

सरलमना, कर्त्तव्यनिष्ठ : मेहता कन्हैयालालजी कोचर

भारत भूमि बहुरत्ना वसुंधरा है। इस भूमि पर समय-समय पर अनेक महापुरुषों एवं सन्नारियों ने जन्म लिया। इसे अपनी कर्मभूमि बनाया। जिनका व्यक्तित्व एवं कृतित्व भावी पीढ़ी एवं वर्तमान पीढ़ी के लिये प्रेरणा का स्रोत रहा, जिसे कविवर लॉंगफेलो ने भी अपनी कविता के माध्यम से उजागर किया।

इसी भारत भूमि की उत्तर दिशा के मरुभाग में बीकानेर संभाग (पूर्व में बीकानेर रियासत) स्थित है। इस मरुभूमि में भी ऐसे ही अनेक पुरुषों ने जन्म लिया, जिन्होंने अपने जीवन में भारतीय संस्कृति के उदात्त मूल्यों को समाविष्ट कर गौरवान्वित हुए एवं जन-जन के पथ-प्रदर्शक बने।

बीकानेर शहर में ओसवाल वंश में, पहले से ही कोचर जाति का विभिन्न क्षेत्रों में गौरवपूर्ण स्थान रहा है। इस जाति के लोगों ने समय-समय पर जन्मभूमि की रक्षा एवं सेवा हेतु अपनी आन और बान न्यौछावर किये हैं। इन्हीं सेवाओं के सम्मानार्थ उन्हें राष्ट्र व राज्य स्तर पर, समय-समय पर सम्मानित किया गया है। बीकानेर रियासत के शासकों के द्वारा इस जाति के लोगों को अपने नाम के आगे 'मेहता' शब्द लगाने का गौरव प्रदान किया।

इस कोचर जाति के मेहता जतनलालजी कोचर, सरलहृदयी, धर्मनिष्ठ एवं कर्त्तव्यपरायण पुरुष थे। वे बीकानेर रियासत में सुप्रिन्टेण्डेण्ट (कस्टम्स) थे। उनकी धर्मपत्नी श्रीमती धाईबाई भी धर्मनिष्ठ, परोपकारी एवं कुशाग्र बुद्धि स्त्री थी। इस परिवार में तीन पुत्र हुए, जिनके नाम क्रमशः मेहता चम्पालालजी, कन्हैयालालजी एवं शिखरचन्द्रजी थे। इन तीनों भाइयों ने अपनी चारित्रिक उज्ज्वलता एवं अध्यवसाय के बल पर जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में अपनी कीर्ति-पताका फहराई।

बीकानेर राज्य में खादी के प्रचार एवं प्रसार के जनकों में से एक, स्वनाम धन्य पं. गिरधरलालजी किराडू के अनुसार, 'ये तीनों भ्राता ओसवाल कोचर समाज की त्रिवेणी हैं।'

मेहता कन्हैयालालजी कोचर का जन्म संवत् 1967 भाद्रपद कृष्णा 7 रविवार दिनांक 28.8.1910 को हुआ। इनका जन्म श्रीकृष्ण जन्माष्टमी के एक दिवस पूर्व हुआ था, अतः इनका नाम कन्हैयालाल रखा गया। ये बचपन से सुगठित शरीर एवं आकर्षक व्यक्तित्व के धनी थे।

बीकानेर से मेट्रिक तक शिक्षा प्राप्त कर, अपने अग्रज मेहता चम्पालालजी कोचर की भाँति उच्च शिक्षा हेतु बनारस गये। वहाँ महामना पं. मदनमोहन मालवीय द्वारा स्थापित 'बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय' में दाखिला लिया। वहीं लगभग 6 वर्ष तक अध्ययन कर बी.ए., एल.एल.बी. की डिग्रियाँ प्राप्त कर अपनी जन्मस्थली बीकानेर लौट आये।

अगस्त 1930 में बीकानेर रियासत के शिक्षा विभाग में शिक्षक रूप में नौकरी प्रारम्भ की। वहाँ उन्होंने लगभग 10 वर्षों तक सहायक शिक्षक एवं प्रधानाध्यापक के रूप में अपनी सेवाएँ दी। वे कुछ समय तक जैन गुरुकुल, गुजरांवाला (पाकिस्तान) के गवर्नर भी रहे।

जनवरी 1947 में तहसीलदार के पद पर नियुक्त हुए एवं लगभग 15 वर्षों तक इस पद पर कार्य करते रहे। इस पद पर उन्हें द्वितीय श्रेणी के मजिस्ट्रेट एवं सब रजिस्ट्रार के अधिकार प्राप्त थे। इस लम्बे अर्से के दौरान उन्होंने कई कठिन परिस्थितियों का दक्षता एवं निष्पक्षता से समाधान किया। वे त्वरित एवं निष्पक्षतापूर्ण कार्य के लिये सम्पूर्ण सेवाकाल के दौरान अधीनस्थ कर्मचारी वर्ग एवं जनता के बीच लोकप्रिय रहे। उन्होंने बीकानेर संभाग के संभागायुक्त के निजी सहायक के रूप में 2 वर्ष 4 महीने कार्य किया। उन्होंने खण्ड (ब्लाक) विकास अधिकारी के रूप में लगभग 1½ वर्ष कार्य किया। उन्होंने सचिव, जिला परिषद, सीकर (आर.ए.एस. पोस्ट) के रूप में लगभग 2 वर्ष कार्य किया।

वे सन् 1951 की जनगणना के दौरान बीकानेर जिले के सर्वोत्तम प्रभारी अधीक्षक के रूप में घोषित किये गये एवं राष्ट्रपति की ओर से रजत जनगणना मेडल एवं प्रशस्ति पत्र प्रदान किया गया।

भारतीय गणतंत्र के प्रथम आम चुनाव के समय मुख्य निर्वाचन अधिकारी पार्ट-1 के रूप में कार्य किया और बीकानेर जिले के जिला चुनाव अधिकारी

द्वारा उनकी सेवाओं को श्रेष्ठ सेवा के रूप में प्रशंसित किया गया। सन् 1962 व 1967 के आम चुनाव के दौरान उन्होंने क्षेत्रीय अधिकारी के रूप में कार्य किया। इसमें उन्हें बहुत ख्याति व सम्मान मिला।

उनके सेवाकाल के दौरान की गई उनकी सेवाओं एवं कर्त्तव्यनिष्ठा को उनके उच्चाधिकारियों, कर्मचारियों एवं जनता ने सदैव सराहा तथा उन सभी के साथ आपके संबंध सौहार्दपूर्ण रहे।

वे उच्चस्तरीय व्यापारी समाज के अंग थे। वे सदा कर्त्तव्यनिष्ठा, उत्तरदायित्व लेने में तत्पर एवं ईमानदारी में विश्वास करते थे।

सेवानिवृत्ति की आयु होने से 30 वर्ष से अधिक अवधि तक सेवा के उपरान्त 1 जुलाई 1967 को राजकीय सेवानिवृत्त हो गये।

उनका विवाह श्रीमती पन्नादेवी (सुपुत्री श्री सदासुखजी बेगाणी) से हुआ। उनकी धर्मपत्नी कुशल गृहणी एवं धार्मिक संस्कारों से ओतप्रोत थी। उनके पाँच पुत्रियां क्रमशः निर्मलाबाई, कंचनबाई, मनोहरीबाई, सुशीलाबाई एवं सुदर्शना बाई व एक पुत्र श्री सुशीलकुमार हुए। उनका निधन मार्गशीर्ष कृष्णा 5 संवत् 2033 शुक्रवार दिनांक 12.11.76 को बीकानेर में हुआ।

व्यक्तित्व की विशेषताएँ :- उनके व्यक्तित्व की कुछ विशेषताएँ निम्नानुसार है-

1. वे सरल प्रकृति के व्यक्ति थे, जो सदा सादा जीवन उच्च विचार के सिद्धान्त में पूर्ण विश्वास रखते थे एवं तदनुसार जीवन में आचरण करते थे।
2. उनकी धर्म में रुचि थी एवं धार्मिक क्रियाएँ पूर्ण निष्ठा से करते थे।
3. उनको संस्कृत भाषा का अच्छा ज्ञान था। संस्कृत के अनेक श्लोक कंठस्थ थे, जिन्हें वे समय समय पर उद्धृत करते थे।
4. वे संगीत के रसिक थे। घर में हारमोनियम पर समय समय पर धार्मिक भजन आदि गाया करते थे।
5. जीवनकाल में कई बार आर्थिक संकट आये। उन्हें कर्तव्यच्युत करने हेतु प्रलोभन दिये गये, किन्तु उन्होंने उन विकट परिस्थितियों में भी कर्त्तव्यनिष्ठा एवं ईमानदारी का साथ नहीं छोड़ा।

हम ऐसे नरपुंगव के चरित्र से कुछ ग्रहणकर, अपना जीवन उर्ध्वगामी बना सकें, तभी लेखन की सार्थकता होगी।

□ □ □

चारित्रनायक की धर्मपत्नी : श्रीमती प्रेमीबाई कोचर

श्रीमती प्रेमीबाई कोचर स्नेह, करुणा एवं प्रेम की प्रतिमूर्ति थी। उनके पावन चेहरे से ममता और स्नेह की सहज सरिता प्रवाहित होती रहती थी। जैन धर्म की आदर्श सुश्राविका के समस्त गुण उनमें विद्यमान थे। नियमित रूप से सामायिक, प्रतिक्रमण, जिन मन्दिर जाकर श्रद्धापूर्वक भक्ति भाव से विधिपूर्वक दर्शन व पूजा/अर्चना करना आदि दैनिकचर्या के अनिवार्य अंग थे। वृद्धावस्था में अस्वस्थ होने पर एवं पैरों में दर्द रहने पर भी, छड़ी का सहारा लेकर मंदिर जाना, उनकी प्रथम प्राथमिकता थी। जिन भगवान् के प्रति समर्पित भाव, उनके दर्शनों के लिये उनमें एक ऐसा नशा था, छटपटाहट थी कि उनका कमजोर शरीर भी एक नये जोश एवं उत्साह के साथ परमेश्वर के दर्शनों के लिए चल पड़ता था। वे जब तक स्वस्थ रहीं, बगैर रूके गृहकार्य दत्तचित्त होकर करती रहीं। वे एक बहुत बड़े अधिकारी की धर्मपत्नी होने के उपरान्त भी उन्हें किंचित मात्र भी घमण्ड नहीं था।

उनका स्वर्गवास दिनांक 09.05.08 वैशाख सुदी 4/5 संवत् 2065 को बीकानेर में लगभग 90 वर्ष की अवस्था में हो गया।

उनका सहज, सरल स्वभाव, हमारे लिये प्रेरणास्पद है। उनका आदर्श व्यक्तित्व हमारे पथ को सदैव प्रकाश पुंज की तरह प्रकाशित करता रहेगा। हमारा सिर उनके सम्मान में स्वतः ही नतमस्तक हो जाता है।

– वल्लभदास कोचर

1. निबन्ध एवं उद्‌बोधन

भगवान् महावीर और अहिंसा

(भगवान महावीर 2500वां निर्वाण महोत्सव प्रभु पुष्पांजलि स्मारिका 1974-75 श्री जैन परिषद्, बीकानेर में प्रकाशित)

"भगवान् महावीर और अहिंसा" नामक निबंध में आपने अहिंसा परमोधम के सिद्धांत की सहज एवं सशक्त अभिव्यक्ति की है। आज चतुर्दिक् हिंसा, आतंक, घृणा, भय, सांप्रदायिक वैमनस्य आपसी फूट का वातावरण परिव्याप्त है। ऐसे समय में इस प्रकार के निबंध एक ज्योति स्तंभ का काम करते हैं।

भगवान् महावीर के उपदेश, देश की दशा देखते हुए एक दिशा देते हैं। आपने हिंसा के स्वरूप, प्रकार और उससे होने वाली हानियों पर भी प्रकाश डाला है। संकल्पी हिंसा सर्वथा त्याज्य है। आज देश में संकल्पी हिंसा का सर्वत्र बोलबाला है और "हिंसा से हिंसा बढ़ती है" "वैर से बढ़ता है वैर" वाली बात आग में घी जैसी है। कोचर साहब ने इस निबंध में अहिंसा के महत्त्व पर प्रकाश डाला है और इस परमाणु युग में प्रेमाणु युग लाने की बात पर बल देते हुए प्रस्तुत निबंध लिखा है। "जैसा मन वैसा लेखन" वास्तव में शिखरचंद्रजी बड़े दयालु थे। उन्होंने कभी भी हिंसा कार्य नहीं किया। अपने जीवन में किसी से दो शब्द तक नहीं बोले यानि कि लड़ना-झगड़ना तो दूर की बात, किसी से कटुशब्द तक नहीं कहे।

सबसे स्नेहपूर्वक संबंध निर्वाह करते हुए अपना जीवनयापन कर, मधुर व्यवहारी हो, अमर संसारी हो गए। प्रस्तुत है उनके आचरण अनुरूप विचार-

आज संसार के प्रायः सभी मत-मतान्तर अहिंसा को धर्म का मुख्य अंग स्वीकार करते हैं, किन्तु आज से 2557 वर्ष पूर्व जिस समय भगवान महावीर का जन्म हुआ, संसार में सर्वत्र हिंसा का एकछत्र साम्राज्य था। यहाँ तक कि धार्मिक कार्यों तथा यज्ञ आदि में भी पशुओं की बलि दी जाती थी। भगवान महावीर ने इस परिस्थिति से विक्षुब्ध होकर हिंसा का मूलोच्छेदन करने के लिए अथक परिश्रम किया। उन्होंने साधुओं और श्रावकों के व्रतों में अहिंसा को सर्वोपरि स्थान दिया और बताया जिस प्रकार हमें अपने प्राण प्रिय हैं, उसी प्रकार अन्य जीवों को भी प्राण प्रिय हैं, इसलिए किसी जीव को मन, वचन अथवा काया से कष्ट देना हिंसा है। इस सिद्धांत को सूत्र रूप से इस प्रकार कहा जाता है कि "आत्मनः प्रतिकूलानि परेषां न समाचरेत्" अर्थात् "जो कार्य या व्यवहार हमें स्वयं के लिए प्रिय नहीं, उसका आचरण हम दूसरों के प्रति न करें।" उदाहरणार्थ, हम यह नहीं चाहते कि कोई व्यक्ति हमें धोखा दे, तो हमें भी किसी व्यक्ति को धोखा नहीं देना चाहिए। अहिंसा धर्म के सुचारु पालन के लिए भगवान महावीर ने जीव और अजीव को नवतत्वों में प्रधान स्थान दिया और उनका अत्यन्त विशद् विवेचन किया।

भगवान महावीर के अनुसार हिंसा के निम्नलिखित चार प्रकार हैं- (1) संकल्पी, (2) विरोधी, (3) आरम्भी और (4) उद्योगी।

(1) संकल्पी हिंसा- जो हिंसा संकल्प करके अथवा जानबूझकर की जाती है, उसे संकल्पी हिंसा कहते हैं। यथा, माँसाहार करने के लिए जीवों का वध करना अथवा किसी अन्य व्यक्तियों से उनका वध करवाकर अथवा उनका माँस मोल लेकर खाना। पशु-पक्षियों की बलि देना, अपने मनोरंजनार्थ पशुपक्षियों तथा मनुष्यों को परस्पर लड़ाना, क्रोध के आवेश में अन्य प्राणी को किसी प्रकार का शारीरिक अथवा मानसिक कष्ट पहुँचाना, कटु वचन बोलना आदि भी संकल्पी हिंसा के उदाहरण है।

(2) विरोधी हिंसा- किसी आक्रमणकारी से अपनी तथा अपने आश्रितों, अपने धन, धर्म और राष्ट्र की रक्षा करने में जो हिंसा हो जाती है, उसे विरोधी हिंसा कहते हैं।

(3) आरम्भी हिंसा- गृहस्थावस्था में रहते हुए प्रत्येक व्यक्ति को ऐसे अनेक कार्य करने पड़ते है, जिनमें हिंसा हो जाना अनिवार्य है जैसे- घर की सफाई करना, भोजन बनाना, अनाज आदि को साफ करना, घर बनवाना अथवा उसकी मरम्मत करवाना आदि।

(4) उद्योगी हिंसा- गृहस्थावस्था में रहते हुए प्रत्येक व्यक्ति को अपना तथा अपने आश्रितों का पालन-पोषण करने तथा जीविकोपार्जन के लिए कुछ उद्योग करना ही पड़ता है, जिनमें हिंसा होना अनिवार्य है, इस प्रकार की हिंसा को उद्योगी हिंसा कहते हैं। फिर भी हमें ऐसे उद्योग अथवा व्यवसाय नहीं करने चाहिए, जिनमें प्रत्यक्ष रूप से हिंसा होती हैं तथा मांस, मछली, अण्डे, चमड़े व हड्डी तथा उनसे निर्मित वस्तुओं का व्यापार नहीं करना चाहिए। ऐसे उद्योग अथवा व्यवसाय करने चाहिए, जिनमें हिंसा होने की संभावना कम से कम हो। उपर्युक्त चार प्रकार की हिंसा में से संकल्पी हिंसा तो सर्वथा त्याज्य है। शेष तीन प्रकार की हिंसा साधुओं के लिए सर्वथा त्याज्य है। इस प्रकार वे अहिंसा का पालन पूर्ण रूप से करते हैं। गृहस्थों को अवशिष्ट तीन प्रकार की हिंसा से यथाशक्ति बचना चाहिए। इन तीन प्रकार की हिंसा से पाप अवश्य होता है, किन्तु यदि बैर-विरोध की भावना से रहित होकर तथा सावधानीपूर्वक यथासंभव हिंसा कार्यों से बचते हुए भी यदि हिंसा हो जाती हैं तो इससे पाप कम होता है। वंदितु सूत्र में कहा भी है कि-

सम्मद्दिट्ठीजीवो जइवि हु पावसमायरइ किंचि।
अप्पोसि होइ बंधो, जेण न निद्धं धसकुणई।।

अर्थात् सम्यग्दृष्टि जीव, यदि कोई पाप करता भी है तो उसका बंध अल्प होता है, क्योंकि वह उसे निर्दयतापूर्वक नहीं करता है। दशवैकालिक सूत्र के अध्ययन 4 गाथा 8 में कहा गया है कि :

जयं चरे, जयं चिट्ठे, जय मासे जयं समे।
जयं भुजंतो भासंतो, पाव कम्मं न बंधई।।

अर्थात् सावधानीपूर्वक चलने, सावधानीपूर्वक बैठने, सावधानीपूर्वक सोने, सावधानीपूर्वक खाने और सावधानीपूर्वक बोलने पर पाप-कर्म नहीं बंधते।

हिंसा और अहिंसा का मनुष्य की भावना से घनिष्ठ संबंध है। अनेक कार्य प्रत्यक्षत: हिंसा के कार्य प्रतीत होते हैं, किन्तु वास्तव में उनमें हिंसा नहीं होती अथवा बहुत कम होती है। दूसरी ओर कुछ कार्य हिंसायुक्त प्रतीत नहीं होते, किन्तु वे हिंसाजनित होते हैं। उदाहरणार्थ, एक कुशल एवं अनुभवी शल्य चिकित्सक द्वारा अत्यन्त सावधानीपूर्वक रोगी की शल्य क्रिया किए जाने पर रोगी मर जाता है। साधारण दृष्टि से देखने पर शल्य क्रिया के फलस्वरूप रोगी को कष्ट होने तथा उसकी मृत्यु हो जाने से यह हिंसा का प्रतीत होता है, किन्तु

वास्तव में इस कार्य में हिंसा विल्कुल नहीं है, क्योंकि चिकित्सक का ध्येय रोगी को किसी प्रकार का कष्ट पहुँचाने का नहीं, अपितु उसे रोग-मुक्त करने का था। माता-पिता, गुरु, बालकों को सुधारने की दृष्टि से दण्ड देते हैं और न्यायाधीश अभियुक्तों को उनके अपराध के कारण दण्ड देते हैं, परन्तु ये कार्य भी हिंसा की कोटि में नहीं आते, क्योंकि वे किसी प्रकार की दुर्भावना से प्रेरित नहीं होते, अपितु बालकों को सुधारने तथा अपराधों की रोकथाम की दृष्टि से किए जाते हैं। इसके विपरीत यदि कोई व्यक्ति दुर्भावना से प्रेरित होकर अन्य व्यक्ति पर प्रहार करता है, तो चाहे उस व्यक्ति को चोट न पहुँचे, प्रहार करने वाला व्यक्ति हिंसा का दोषी है, क्योंकि उसका उद्देश्य उस अन्य व्यक्ति की हत्या करने अथवा उसे घायल करने का था। यदि कोई व्यक्ति किसी जीव को किसी प्रकार का कायिक अथवा मानसिक कष्ट पहुँचाने की दृष्टि से कोई कार्य करता है, तो चाहे उसे अपने कार्य में सफलता प्राप्त हो या न हो, वह हिंसा का दोषी है।

कुछ लोगों में भ्रांत धारणा फैली हुई है कि अहिंसा व्यक्ति को कायर बनाती हैं। राष्ट्रपिता महात्मा गांधी ने अपने उपदेशों तथा अहिंसात्मक सत्याग्रह आंदोलन के द्वारा यह भलीभाँति सिद्ध कर दिया कि, "अहिंसा कायरों का नहीं, अपितु वीरों का आभूषण है"। अहिंसा व्यक्ति को दूसरों पर अन्याय और अत्याचार करने से रोकती है, किन्तु वह उसे अन्याय व अत्याचार चुपचाप सहन करने की शिक्षा नहीं देती। वह कहती है कि अन्यायी व अत्याचारी व्यक्ति का सदुपदेशों आदि के द्वारा हृदय परिवर्तन करने की चेष्टा करो, किन्तु यदि वह किसी प्रकार भी न माने तो डटकर सामना करो। जो व्यक्ति अन्यायी एवं अत्याचारी का मुकाबला न करके उसके सामने सिर झुका देता है अथवा उससे डरकर पलायन कर देता है, वह अहिंसक नहीं, बल्कि कायर है। हम ऊपर देख चुके हैं कि गृहस्थों के लिए किसी आक्रमणकारी से अपनी तथा अपने आश्रितों, धन, धर्म, समाज और राष्ट्र की रक्षा के लिए "विरोधी हिंसा" करने की छूट रखी गई है। यदि हम अपने प्राचीन इतिहास का अध्ययन करें तो हमें ऐसे अनेक उदाहरण मिलेंगे, जब जैन राजाओं, सेनापतियों तथा श्रावकों ने आक्रान्ताओं का डटकर मुकाबला किया और उनके आक्रमणों को विफल करने के लिए अपना सर्वस्व बलिदान कर दिया। ऐसी दशा में अहिंसा में कायरता को किंचित् मात्र भी स्थान नहीं है।

हिंसा से बचने के लिए भगवान महावीर ने मांसाहार, शिकार खेलने, हिंसक कार्य करने आदि का तो निषेध किया ही, साथ ही साथ उन्होंने ऐसे कार्य

करने का भी निषेध किया, जिनमें हिंसा होने की संभावना हो, यथा-रात्रि भोजन। रात्रि भोजन में जीवों के मरने की अत्यधिक संभावना रहती है, इसलिए उन्होंने इसको सर्वथा त्याज्य बतलाया है।

अहिंसा का सिद्धांत "स्वयं जीओ और दूसरों को जीने दो" (Live and let others live) इस नियम पर आधारित है। मानव के सर्वोत्तम गुणों, यथा मैत्री, करुणा, उपकार, सहयोग आदि का उद्‌गम स्थान अहिंसा ही है। जिस हृदय में अहिंसा को स्थान नहीं, वह हृदय मानव का नहीं, अपितु किसी दानव का है। यदि मनुष्यों में अहिंसा की भावना नहीं होती तो न उनका परिवार होता, न कोई समाज, न कोई राष्ट्र और न ही कोई धर्म। अहिंसा के कारण ही केवल मनुष्य ही नहीं अपितु समस्त जीव पारस्परिक प्रेम से आबद्ध हैं। इसी कारण से अहिंसा को परम अथवा सर्वोत्कृष्ट धर्म कहा गया है। योग वशिष्ट में कहा गया है कि "अहिंसा प्रतिष्ठायां तत्सन्निधो प्राणीनां वैरत्यागः" अर्थात्, अहिंसा की स्थापना हो जाने पर उसके सान्निध्य में प्राणी परस्पर वैर त्याग देते हैं। यही कारण है कि ऋषियों के आश्रम में मृग और सिंह, सर्प और मयूर जैसे नैसर्गिक शत्रु अपने वैर-भाव को तिलांजलि देकर परस्पर प्रेमपूर्वक रहा करते थे। भगवान महावीर ने सृष्टि के इस मूलभूत धर्म-अहिंसा पर जितना अधिक बल दिया, उतना संसार के किसी अन्य धार्मिक नेता ने नहीं दिया। परस्पर विरोधी विचारधाराओं में सामंजस्य स्थापित करने के उद्देश्य से उन्होंने जिस स्याद्वाद अथवा अनेकांतमत की स्थापना की, वह मत भी अहिंसा सिद्धांत पर ही आधारित है। स्याद्वाद् की परिभाषा इस प्रकार की गई है- **एकस्मिन्वस्तुनि सापेक्ष रीत्या नाना विरुद्ध धम स्वीकारो हि स्याद्वाद** अर्थात् एक ही वस्तु में सापेक्ष रीति से नाना प्रकार के विरुद्ध धर्मों को स्वीकार करना, स्याद्वाद है। उदाहरणार्थ, एक व्यक्ति अपने पिता की अपेक्षा से पुत्र और पुत्र की अपेक्षा से पिता है। यदि वह अपने को केवल पिता या केवल पुत्र कहे, तो उसका कथन मिथ्या है। इसलिए किसी वस्तु का ज्ञान सम्यक् रूप से करने के लिए उसके किसी विशेष अंग का नहीं किन्तु उसके समस्त अंगों का निरीक्षण करना पड़ेगा, तभी हम पूर्ण सत्य को प्राप्त करने में समर्थ होंगे। हम में परस्पर संघर्ष तभी उत्पन्न होता है, जब हम अपने एकांगी दृष्टिकोण पर अड़े रहकर अन्य व्यक्तियों के दृष्टिकोणों की सर्वथा उपेक्षा कर देते हैं। इसके विपरीत यदि हम अन्य व्यक्तियों के दृष्टिकोणों पर भली-भाँति विचारकर आवश्यकतानुसार अपने दृष्टिकोण का संशोधन एवं परिमार्जन करें तो हम में पारस्परिक संघर्ष की कोई संभावना नहीं रहेगी, अपितु हम में पारस्परिक सद्भाव एवं सहयोग की भावना उत्पन्न होगी, जिसके कारण हम समाज, धर्म एवं राष्ट्र की उन्नति में योगदान कर सकेंगे।

आज संसार में अशान्ति, कटुता, विद्वेष, वैमनस्य और संघर्ष का, जो वातावरण व्याप्त है, वह हिंसा के कारण ही है। आज हम अपने तुच्छ व्यक्तिगत स्वार्थों की रक्षा के लिए समाज, राष्ट्र तथा विश्व के हितों को तिलाञ्जलि दे रहे हैं, जिसके फलस्वरूप विश्वभर में बेकारी, महंगाई, भ्रष्टाचार, भाई-भतीजावाद, जातिवाद आदि दुर्गुणों का साम्राज्य छाया हुआ है। इन दुर्गुणों के निराकरण तथा समाज एवं राष्ट्र में शांति एवं सहयोग की स्थापना के लिए हमें अपने जीवन, अपने समाज, अपने राष्ट्र तथा अखिल विश्व में अहिंसा धर्म की स्थापना के लिए भगीरथ प्रयत्न करने पड़ेंगे। अहिंसा-धर्म के मूर्तिमान स्वरूप भगवान महावीर के अनुयायी होने के नाते हम जैनों का यह विशेष उत्तरदायित्व है कि हम उनकी मंगलमय वाणी का प्रचार केवल भारतवर्ष में ही नहीं अपितु समस्त संसार में करें, जिससे कि अशांति की ज्वाला से दग्ध जनमानस को चिर शांति एवं शाश्वत् सुख की प्राप्ति हो, जनता में पारस्परिक वैमनस्य एवं वैर-भाव के स्थान पर सहयोग एवं सद्भावना की अभिवृद्धि हो और प्रत्येक मानव-हृदय विश्व-बन्धुत्व की लोक-मंगलकारी भावना से ओत-प्रोत हो। मुझे आशा ही नहीं अपितु पूर्ण विश्वास है कि भगवान महावीर के 2500वें निर्वाण शताब्दी महोत्सव के अवसर पर ऐसी योजनाएँ बनाई तथा कार्यान्वित की जायेंगी, जिनसे भगवान महावीर द्वारा उपदिष्ट अहिंसा धर्म का पूर्ण रूप से प्रचार एवं प्रसार होगा।

❑ ❑ ❑

भारत की एक महान् विभूति-विजय वल्लभ सूरि

(विजय वल्लभसूरि स्मारक ग्रंथ में प्रकाशित)

श्री कोचर सा. सफल निबंधकार थे, आपने हर विषय पर लेखनी चलाई, जिस विषय को लिया उसे बड़े विराट् एवं स्पष्ट रूप से प्रस्तुत किया। उनके साहित्यिक, सामाजिक, धार्मिक निबंध अपना एक अनुपम स्तर रखते हैं।

महान् विभूति पर लिखे निबंध सन्तों के समग्र जीवन को उतारने में सक्षम हैं। ऐसा लगता है निबंध पढ़ते समय महान् विभूतियाँ एक चित्र-सी आँखों के सामने नर्तन करने लगती हैं। शैली ही व्यक्तित्व है। कोचरजी की शैली उनके व्यक्तित्व की परिचायक है। अपने धार्मिक जैनाचार्यो के प्रति श्रद्धावनत हो लिखना उनकी धर्मभावना एवं 'संत सेवा सर्वोपरि' का सूचक है। प्रस्तुत है ऐसा ही एक निबंध-

---

प्रातः स्मरणीय जैनाचार्य श्रीमद् विजयवल्लभसूरीश्वरजी महाराज केवल जैन समाज की ही नहीं, अपितु अखिल भारतवर्ष की एक महान् विभूति थे। संवत् 1944 में केवल सत्रह वर्ष की अल्पायु में आपने समस्त सांसारिक सुख वैभव को तिलाञ्जलि देकर स्वनामधन्य सुप्रसिद्ध जैनाचार्य श्रीमद् विजयानंदसूरीश्वरजी (मूल नाम श्री आत्मारामजी) महाराज से भागवती दीक्षा के कठोर व्रत अंगीकार किए। तत्पश्चात्, अनवरत सड़सठ वर्ष के सुदीर्घ कालपर्यंत आपने तथा आपके आदेशानुसार आपके विशाल शिष्य समुदाय ने लोकहित के हेतु जो अनेकानेक सत्कार्य किए, यदि उनका वर्णन किया जाये तो एक सुविशाल ग्रन्थ का निर्माण करना पड़े। संक्षेप में, आप अनेक राष्ट्रीय, धार्मिक, सामाजिक, शैक्षणिक एवं नानाविध लोक मंगलकारी संस्थाओं के प्राण, अनेक जिन मंदिरों एवं मूर्तियों के

प्रतिष्ठापक, अगणित देवालयों एवं तीर्थों के जीर्णोद्धारक एवं व्यवस्थापक, अनेक मनीषियों, विद्वानों, लेखकों एवं कलाकारों के आश्रयदाता, सहस्रों मनुष्यों को कुमार्ग से दूर हटाकर सन्मार्ग पर चलाने वाले, लाखों मनुष्यों को सद्धर्मामृत का पान कराने वाले, अत्यन्त मधुरभाषी परन्तु स्पष्टवक्ता, जैन एवं जैनेतर दर्शनों के मार्मिक विद्वान्, निष्पक्ष समालोचक, अनेक भारतीय भाषाओं के ज्ञाता, संस्कृत एवं प्राकृत तथा अन्यान्य प्राचीन भारतीय भाषाओं के प्रकांड पंडित, जैन शास्त्रों में पारंगत, सुललित छंद एवं कोमल कांतपदावलियुक्त श्रुति मधुर तथा मनोहर काव्य रचना करने में सिद्हस्त, उत्तम संगीतज्ञ, अपनी पीयूषवर्षिणी वाणी द्वारा श्रोतागण को मन्त्र-मुग्ध करने में निष्णात, अनेक अभिमानी वादीगण का गर्व खर्व करने वाले विद्वान्, अनेक नेताओं सम्माननीय पुरुषों तथा राजा-महाराजाओं द्वारा पूजित, जनसाधारण द्वारा पूर्णरूपेण समादृत, गम्भीर विचारक, प्रखर दृष्टा सौम्याकृति, नवनीतोपमकोमल हृदय होते हुए भी कर्त्तव्य पालन में वज्रसम कठोर, पर दुःख भंजन में लवलीन, अहर्निश परोपकार परायण, अहिंसा एवं सत्य के अनन्य पुजारी, शांति के देवदूत, श्रेष्ठ समाज सुधारक एवं लोकसेवक, उग्र तपस्वी, महान् योगी, श्रेष्ठ आचार्य, अत्यन्त तेजस् एवं प्रभावशाली उच्चकोटि के शिक्षा शास्त्री, परम् देशभक्त एवं मनस्वी, पृथ्वी के समान सहनशील एवं सागर के समान गंभीर, क्षमा श्रमण, जिनशासनोद्धारा नाना विद्या निधान सकल सद्गुण समलंकृत महापुरुष थे।

आपने अपने जीवनकाल में जितना महान् कार्य किया, उतना अनेक संस्थाएँ मिलकर भी कठिनता से कर पाती। आपका जीवन अत्यन्त आदर्श, सरल एवं नियमित था। आप अपने अमूल्य समय का एक क्षण भी व्यर्थ नहीं गंवाते थे और सदैव लोकहित साधन तथा आत्मोन्नति के कार्यों में व्यस्त रहते थे। आप धर्म, समाज एवं राष्ट्र के हित के लिए अपना जीवन बलिदान करने में भी किंचित् मात्र संकोच नहीं करते थे। आपकी विचार सरणी अत्यन्त परिष्कृत एवं परिमार्जित तथा तात्त्विक दृष्टि से अत्यन्त प्रखर थी, जिससे आप कठिन से कठिन समस्याओं का समाधान अत्यन्त सरलतापूर्वक कर लेते थे। आपके प्रभावशाली व्यक्तित्व, सुमधुर वक्तृत्व, सौजन्यतापूर्ण एवं सौहार्दपूर्ण व्यवहार, निष्कलंक जीवन, अगाध पांडित्य एवं सहानुभूति से ओत-प्रोत हृदय के कारण सर्वसाधारण के हृदय पटल पर आपकी अमिट छाप अंकित हो जाती थी। आपका कट्टर से कट्टर विरोधी भी आपके समक्ष आने पर स्वयमेव नतमस्तक हो जाता और आपका परमभक्त बन जाता था। आपके संपर्क में, जो भी व्यक्ति आता था, वह आपकी भव्याकृति का दर्शन करके तथा आपकी सुधावर्षिणी वाग्धारा का

पान करके पूर्णतया तृप्त हो जाता था और आपके सामीप्य से दूर जाने पर उसके मन में आपके दर्शन-लाभ एवं उपदेश-श्रवण की उत्कट अभिलाषा बारंबार उत्पन्न होती रहती थी।

आपका रहन-सहन और खान-पान अत्यन्त सीधा-सादा और जैन मुनि के लिए आदर्श था। जैनाचार्यों में आपका स्थान निर्विवाद रूप से अप्रतिम था। जैन समाज ही नहीं, अपितु समस्त जैनेतर समाज में भी आपकी प्रतिष्ठा अत्यधिक थी। आप जहाँ भी जाते, वहीं जनता का समुद्र उमड़ पड़ता था और प्रत्येक जाति अथवा संप्रदाय के लोग आपके समुपदेशों से लाभान्वित होते थे। इतने महान् प्रभावशील युगवीर आचार्य होते हुए भी आपको अभिमान छू तक नहीं था। आप अपने आपको एक साधारण जैनमुनि अथवा जनता का सेवक ही समझते थे। आपकी सरल-हृदयता विनयशीलता, उदार स्वभाव, शान्त वृत्ति एवं त्याग भावना अत्यन्त मर्मस्पर्शी थी। आपकी गुरु भक्ति एवं निर्लोलुपता इतनी बढ़ी चढ़ी थी कि आपने अपने अनवरत परिश्रम द्वारा संस्थापित समस्त संस्थाओं का नामकरण अपने पूज्य गुरुदेव के नाम पर अथवा अन्य नाम पर किया। बाह्याडंबर एवं यश आकांक्षा तथा पदलिप्सा से आप कोसों दूर रहते थे। आप सरल जीवन एवं उच्च विचार (Plain Living and High Thinking) के मूर्तिमान उदाहरण थे।

समाज की जड़ों को खोखला बनाने वाले कलह, अविद्या, अन्धविश्वास, दुर्व्यसन, आलस्य, अपव्यय, बेकारी आदि समस्त दुर्गुणों का उन्मूलन कर समाज को सुशिक्षित, सुसंगठित, सुसंस्कृत, सामयिक जाग्रत एवं क्रियमाण बनाने में, आपने जो योगदान दिया, वह सर्वविदित है। जैन-धर्म के समस्त मत-मतांतरों में सामंजस्य-साधना एवं एकता-स्थापना के लिए आपका परिश्रम बेजोड़ सिद्ध हुआ, जिसका अंकुर आज सर्वत्र दृष्टिगोचर हो रहा है।

अपनी जर्जर, अस्थि चर्मावशिष्ट देह यष्टि को लिए हुए, अदम्य उत्साह के साथ घोरातिघोर कष्टों का निर्भीकतापूर्वक सामना करते हुए आप गांव गांव और घर घर में सत्य, अहिंसा एवं विश्वमैत्री का मन्त्रोच्चार करते हुए निरवलंब, नंगे पाँव, पैदल घूमते रहते थे। सर्दी-गर्मी, भूख-प्यास तथा अन्यान्य-कष्टों अथवा असुविधाओं और विरोधियों तथा स्वार्थियों के कुचक्रों की ओर से सदैव उदासीन रहकर, राग और द्वेष से मुक्त आप अपने कर्त्तव्य-पथ पर निर्विकार-भाव से अग्रसर होते रहते थे और अपने शिष्य समुदाय को भी एतदर्थ प्रेरित करते थे। वृद्धावस्था तथा घोर कष्ट सहन के कारण आपका शरीर जीर्ण-शीर्ण हो गया था, किन्तु आपके आत्मिक तेज की वृद्धि उत्तरोत्तर होती जाती थी। आपका जोश

युवकों के जोश को भी मात करता था। मानापमान की ओर किंचित् मात्र ध्यान न देकर, अपने सुख और दुःख से निरपेक्ष, अविचल मन एवं अनवरत परिश्रम द्वारा आपने लोकहित के लिए सत्कार्य एवं गुजरात के जैन समाज की जो आपने महान् सेवा की है, वह तो कभी भुलाए नहीं भूली जा सकती। आपके स्थापित किए अनेकानेक विद्यालय, गुरुकुल, कॉलेज तथा अन्यान्य संस्थाएँ जैन समाज व राष्ट्र को आपकी अनुपम देन है। जैन समाज व भारत देश आपके ऋण से कभी उऋण नहीं हो सकेगा। आपने अपने नवयुवकों को उच्च-शिक्षा प्राप्त करने के लिए प्रेरणा दी और सहायता दी, प्राचीन जैन ग्रन्थ भण्डारों की सुव्यवस्था एवं उत्तमोत्तम ग्रन्थ प्रकाशन के लिए व्यवस्था की। लोक हित के जिस कार्य में आपने हाथ डाला, उसे उत्तम रूप से पूर्ण किया, जिस संस्था पर आपकी दृष्टि हुई, उस संस्था में नव जीवन संचार कर दिया। आपके सदुपदेशों के कारण सहस्त्रों मनुष्यों में काया पलट हो गया और उन्होंने दुर्लभ नर-तन प्राप्त करने का वास्तविक लाभ उठाया।

यद्यपि आप एक संप्रदाय के आचार्य थे, परन्तु आप में साम्प्रदायिक संकीर्णता का सर्वथा विलोप था। आप प्रत्येक धर्म एवं संप्रदाय के अनुयायी का यथोचित् सत्कार करते थे और उनकी शंकाओं का समाधान अपनी विलक्षण तर्क शैली द्वारा किया करते थे। आपके उज्ज्वल चरित्र, उदार स्वभाव एवं अलौकिक प्रतिभा के कारण आपका समादर प्रत्येक क्षेत्र में होता था और प्रत्येक संप्रदाय अथवा समुदाय के नेता आपसे परामर्श करने एवं मार्गदर्शन लेने के लिए मिलते रहते थे। आप में देशभक्ति की भावना पूर्ण रूप से भरी हुई थी और आपका कार्य देश हित का विशाल दृष्टिकोण लिए होता था। आप सदैव शुद्ध खादी पहनते और जनता को भी सदैव खादी पहनने का उपदेश देते थे। देश हित के प्रत्येक कार्य में, सदुपदेशों से सदैव देश भक्ति की पावन धारा अविच्छिन्न रूप से प्रवाहित होती रहती थी।

यद्यपि आपकी नश्वर देह आज हमारे बीच में नहीं है और आपके निधन के कारण आज हम सब अपने आपको अनाथ-सा अनुभव कर रहे हैं, तथापि आपका आदर्श जीवन, आपके सदुपदेश आपके दिव्य भक्तिपूर्ण काव्य और आपके अगणित कार्यकलाप एक महान् प्रकाश स्तंभ के समान हमारे तमसावृत्त मानस पटल के अज्ञानान्धकार को विदीर्ण कर सुमार्ग प्रदर्शन के लिए प्रस्तुत हैं और सदैव प्रस्तुत रहेंगे। आपकी पुनीत स्मृति में आपका भक्त समुदाय पार्थिव स्मारक बनवा रहा है और भविष्य में भी बनवाएगा, तथापि आपके सर्वोत्तम

स्मारक तो आपके निःस्वार्थ कार्य-कलाप ही हैं। आपका वास्तविक स्मारक तो तब बनेगा जब हम आपके छोड़े हुए अपूर्ण कार्य की पूर्ति में कटिबद्ध होकर उसकी पूर्णाहुति में योगदान देंगे। शासनदेव से प्रार्थना है कि वे हमें इन महान् युगवीर आचार्य के प्रदर्शित मार्ग पर अविचलित रूप से चलने की सुबुद्धि एवं शक्ति प्रदान करें, जिससे कि हम स्वतंत्र भारत के सुयोग्य नागरिक कहलाने की योग्यता प्राप्त कर, स्व एवं पर हित साधना में समर्थ हो सकें।

□ □ □

युगप्रधान जैनाचार्य; श्री पार्श्वचन्द्र सूरि

(जीवन ज्योत्स्ना मुनिश्री पद्‌मयशचन्द्र)

जैन धर्माचार्यों के प्रति उनकी श्रद्धा एवं आस्था ने उनसे ऐसे कई निबन्ध लिखवाए। आपने उनके उपदेशों, व्याख्यानों, विचारों एवं कृतियों आदि का ऐसा समग्र विवेचन किया, जिससे संतों, आचार्यों का व्यक्तित्व एवं कृतित्व सांगोपांग रूप में सामने आ सका। आपके निबंधों की यह विशेषता है कि वे बड़े सारगर्भित एवं चित्ताकर्षक हैं।

आप द्वारा लिखा हुआ ''युग प्रधान जैनाचार्य; श्री पार्श्वचन्द्र सूरि'', ''सूरिजी'' के व्यक्तित्व एवं कृतित्व को सार रूप में उजागर करने में सक्षम निबंध प्रस्तुत है -

---

जैन धर्म के महान् ज्योतिर्धर आचार्यों में युगप्रधान श्री पार्श्वचन्द्र सूरि का अप्रतिम स्थान है। उनका जन्म राजस्थान राज्यान्तर्गत सुप्रसिद्ध आबू पर्वत के निकट हमीरपुर नामक ग्राम में विक्रम संवत् 1537 की चैत्र शुक्ला 1 शुक्रवार को हुआ था। उनके पिता विशापोरवाड गोत्रीय श्रीयुत् बेलगशाह और उनकी माता का नाम श्रीमती विमलादेवी था। वे दोनों दृढ़धर्मी जैन मतानुयायी थे और उन्होंने अपने बालक में उत्तमोत्तम संस्कारों का बीज वपन करने में कोई कमी नहीं रखी। बालक पार्श्वचन्द्र मेधावी एवं कुशाग्र बुद्धि थे, जिसके फलस्वरूप उन्होंने उन संस्कारों को पूर्णरूपेण आत्मसात् किया और अपनी मनोवृत्ति को सांसारिक सुख सुविधाओं से पराङ्मुख करके वैराग्य की ओर मोड़ दिया। उनकी वैराग्य भावना को जैनाचार्य श्री साधुरत्न सूरिजी के उपदेश श्रवण से पुष्टि मिली और उन्होंने अपने माता-पिता से चरित्र अंगीकार करने के लिए अनुमति मांगी। यद्यपि उनके माता पिता को अपनी आंखों के तारे, लाल को अपनी ममतामयी गोद से दूर

करने में घोर आन्तरिक वेदना का सामना करना पड़ा, परन्तु उन्होंने अपने सुपुत्र की तीव्र वैराग्य भावना तथा भविष्य में उनके द्वारा होने वाली महान् शासन सेवा की संभावना को ध्यान में रखकर अपनी अनुमति प्रदान कर दी। कुमार पार्श्वचन्द्र ने आचार्यश्री साधुरत्न सूरिजी के कर कमलों से संवत् 1546 वि. के अक्षय तृतीया के पावन पर्व पर भागवती दीक्षा नागपुरीय तपागच्छ के अन्तर्गत अंगीकार की और वे मुनि पार्श्वचन्द्र बन गये।

मुनि पार्श्वचन्द्र ने अपने गुरु के सान्निध्य में शास्त्राभ्यास किया और अपनी प्रखर बुद्धि, सच्ची लगन और अनवरत अध्यवसाय के द्वारा स्वल्प समय में पट्शास्त्र, व्याकरण, साहित्य, काव्य, संगीत, रस अलंकार, तर्क, आगम, श्रुति, स्मृति, आयुर्वेद, ज्योतिष आदि अनेक विषयों तथा संस्कृत, प्राकृत, अपभ्रंश आदि अनेक भाषाओं में पारदर्शिता प्राप्त की। स्वमत मंडन तथा परमत खंडन में उनकी विलक्षण प्रतिभा, उनकी मर्मस्पर्शिणी वक्तृत्व कला, उनके अगाधपांडित्य, उनके मृदु व्यवहार तथा उनकी उच्च कोटि की संयम साधना की अमिट छाप आबालवृद्ध के हृदय पटल पर पड़ी और स्वल्प समय में उनके अनुपम गुणों की प्रसिद्धि दिग्दिगन्त व्यापिनी बन गई। उन्होंने भारतवर्ष के अनेक प्रांतों में विहार किया और जन साधारण को धर्म का सच्चा स्वरूप समझाया। वे जहां जाते वहाँ धार्मिक कार्यों की बाढ़-सी आ जाती और उनके सम्पर्क में आने वाले व्यक्ति दुर्गुणों का परित्याग कर सद्गुणों को अपनाने का यथासाध्य प्रयत्न करते। उनके इन गुणों से प्रभावित होकर संवत् 1554 की अक्षय तृतीया को उन्हें नागौर में अत्यन्त धूमधामपूर्वक उपाध्याय पद से विभूषित किया गया।

उपाध्याय श्री पार्श्वचंद्र ने संवत् 1564 में संवेगी संप्रदाय में व्याप्त शिथिलाचार को दूर करके लोगों को विशुद्ध मार्ग पर लाने हेतु घोर परिश्रम किया, जिसके फलस्वरूप इस सम्प्रदाय में क्रिया का उद्धार हुआ और अनेक व्यक्तियों ने शास्त्रानुमोदित शुद्ध संयम को अंगीकार किया। उनकी बहुमुखी प्रतिभा तथा सर्वांगीण शासन सेवाओं से मुग्ध होकर चतुर्विध संघ ने अत्यन्त हर्षोल्लासपूर्वक तथा अट्ठाई महोत्सव के साथ संवत् 1565 की अक्षय तृतीया को उन्हें जोधपुर में आचार्य पद तथा संवत् 1599 को अक्षय तृतीया को शंखल (सलक्षण) पुर में युग प्रधान पद पर प्रतिष्ठित किया। हमारे चरित्रनायक को पद लोलुपता अथवा मान प्रतिष्ठा की लालसा किंचित् मात्र भी नहीं थी, परन्तु अपने गुरु महाराज तथा चतुर्विध संघ की उत्कृष्ट भावनाओं को ध्यान में रखते हुए अनिच्छापूर्वक इन पदों को स्वीकार करना पड़ा।

उन्होंने सहस्त्रों व्यक्तियों को जैन बनाया और अनेक राजाओं को प्रतिबोध दिया। उनके सदुपदेशों के फलस्वरूप मुणोत गोत्रीय क्षत्रियों के 2200 कुटुम्ब श्रावक बने और वे ओसवाल कहलाए। उन्होंने निम्नलिखित 22 गोत्रों के व्यक्तियों को प्रतिबोध देकर जैन बनाया-

(1) बांठिया (2) दफ्तरी (3) बेगाणी (4) तातेड़ (5) लोढ़ा (6) छारिया (7) नवलखा (8) खटोल (9) बरड़िया (10) राखेचा (11) रामपुरिया (12) दुगड़ (13) मुणोत (14) आंचलिया (15) गोगड़ (16) भणशाली (17) श्रीमाल (18) भंडारी (19) टेटिया (20) चौधरी (21) सोनी और (22) घोड़ावत।

उन्होंने संस्कृत, प्राकृत, हिन्दी, गुजराती आदि भाषाओं में अनेकानेक उच्चकोटि के ग्रन्थों, स्तुतियों, स्तवनों , सज्झायों आदि के द्वारा माता सरस्वती के वाङ्‌गमय का भंडार भरा और वे अपने सुयोग्य शिष्य समुदाय को इस क्षेत्र में सतत् उद्यमशील रहने के लिए सदैव प्रेरित करते रहे।

उन्होंने अनेक स्थानों पर विभिन्न सभाओं में अपनी अकाट्य युक्तियों के द्वारा अपने विरोधियों को निरुत्तर किया और सुदेव, सुगुरु तथा सुधर्म के स्वरूप को भली-भांति समझाकर सर्वत्र जिनमत की पताका फहराई।

उन्होंने अनेक तीर्थों और जैन मंदिरों का जीर्णोद्धार कराया और जिन मंदिरों तथा जिन प्रतिमाओं की प्रतिष्ठा कराई।

अनेक सदुपदेश के फलस्वरूप अनेक स्थानों पर धार्मिक पाठशाला तथा कन्याशाला आदि तथा अनेक स्थानों पर पौषधशाला एवं धर्मशाला स्थापित की गई।

उनके सदुपदेश से अहिंसा तथा जीवदया के अनेक विध कार्य अनेक स्थानों पर सम्पन्न हुए और सहस्त्रों व्यक्तियों ने मद्य-मांसादि दुर्व्यसनों का त्याग करके मानव जीवन को सफल बनाया।

परोपकार तथा शासन सेवा के कार्यों में अहर्निश संलग्न रहते हुए भी उन्होंने आत्मोत्थान की प्रगति में कोई कमी नहीं आने दी और नाना प्रकार की कठोर तपःश्चर्या के द्वारा अपना कर्मबन्धन शिथिल किया।

इस महापुरुष ने निज तथा पर हित के अनेकानेक कार्य कर, 66 वर्ष तक निर्मल चरित्र पालन कर, 47 वर्ष तक आचार्य पद तथा 13 वर्ष तक युग प्रधान पद को सुशोभित कर लगभग 75 वर्ष की आयु में संवत् 1612 की मार्गशीर्ष

शुक्ला 3 रविवार के दिन राजस्थान राज्यान्तर्गत जोधपुर नगर में, अपनी ईहलीला का संवरण किया। उनकी स्मृति रक्षा के लिए अनेकानेक भक्तों ने गुरु मंदिर तथा अन्यान्य स्मारक स्थापित किए और भविष्य में भी करेंगे, किन्तु उनके वास्तविक स्मारक तो उनका आदर्श व्यक्तित्व और प्रेरणादायक कृतित्व है, जो शताब्दियों से जैन समाज का प्रकाश स्तम्भ के समान मार्गदर्शन करता रहा है और भविष्य में भी करता रहेगा। ऐसे महान् ज्योतिर्धर युगप्रधान जैनाचार्य को मेरा कोटिशः वंदन।

□ □ □

मनुष्य जाति का सर्वोत्तम आहार : शाकाहार

(मुनिश्री हजारीमल स्मृति ग्रन्थ में प्रकाशित आलेख)

आप उच्चकोटि के वक्ता, कवि एवं निबंधकार थे। आपने अपने निबंधों से मानवता की महत्ता पर प्रकाश डाला। आपको सब धर्मों से प्रेम था, सभी धार्मिक ग्रन्थों का ज्ञान था। निबंधों से सिद्ध होता है कि वे सर्व धर्म समभावी थे। उनकी दृष्टि में गीता, पुराण, रामायण, महाभारत, कुरान समादरणीय थे। पाश्चात्य दार्शनिक चिंतकों, विचारकों के प्रति भी सम्मान था। वे अहिंसावादी थे, उनमें मानवता के प्रति आस्था थी। इसीलिए उन्होंने मांसाहारी न होने की बात कही और सिद्ध किया कि मानव के लिए सर्वोत्तम आहार शाकाहार है।

प्रस्तुत है उनका एक निबंध, जो उन्होंने श्री हजारीमल स्मृति ग्रंथ के लिए लिखा था। ठीक ही कहा गया है कि गद्य कवियों की कसौटी है और निबंध गद्य की कसौटी। वास्तव में कोचरजी की निबंधशैली द्विवेदी युग, छायावादी युग की याद दिलाती है। आपकी भाषा भावानुगामिनी है।

मनुष्य प्रकृति से ही शाकाहारी प्राणी है। उसके शरीर की रचना दुग्धपेयी प्राणियों की शरीर रचना से मिलती जुलती है। राष्ट्रपिता महात्मा गांधी ने लिखा है-

"शरीर की रचना से जान पड़ता है कि कुदरत ने मनुष्य को वनस्पति खाने वाला बनाया है। दूसरे प्राणियों के साथ तुलना करने से जान पड़ता है कि हमारी रचना फलाहारी प्राणियों से बहुत अधिक मिलती है अर्थात् बन्दरों से बहुत ज्यादा मिलती है। बन्दर हरे और सूखे फल फूल खाते हैं। फाड़कर खाने वाले शेर, चीते आदि जानवरों के दांत और दाढ़ों की बनावट हमसे भिन्न प्रकार की होती है। उनके पंजे सदृश हमारे पंजे नहीं है। साधारण पशु मांसाहारी नहीं है।

जैसे- गाय, बैल; हम इनसे कुछ-कुछ मिलते हैं, परन्तु मांस आदि खाने के लिए आरे जैसी आंतें उनकी हैं, हमारी नहीं है। इन बातों से बहुत से शोधक ऐसा कहते हैं कि मनुष्य मांसाहारी नहीं है। रसायनशास्त्रियों ने प्रयोग कर बतलाया है कि मनुष्य के निर्वाह के लिए जिन तत्त्वों की आवश्यकता है, वे सब फलों में मिल जाते हैं। केले, नारंगी, खजूर, अंजीर, सेब, अनान्नास, बादाम, अखरोट, मूंगफली, नारियल आदि में तन्दुरुस्ती को कायम रखने वाले सारे तत्त्व हैं। इन शोधकों का मत है कि मनुष्य को रसोई पकाने की आवश्यकता नहीं है। जैसे प्राणी सूर्य ताप से पकी हुई वस्तु पर तन्दुरुस्ती कायम रखते हैं वैसे ही हमारे लिए भी होना चाहिए।"

मनुष्य अनादिकाल से शैशवावस्था में मातृदुग्ध और उसके अभाव में गोदुग्ध द्वारा पोषित होता रहा है। इसी प्रकार मनुष्य जाति अनादिकाल से ही शाकाहारी चली आ रही है। संसार के प्रायः सभी धर्मों में अहिंसा को प्रधानता दी गई है। जैन धर्म का तो प्राण ही अहिंसा-सिद्धांत है। अन्यान्य धर्मों में भी इस सिद्धांत पर अत्यधिक बल दिया गया है। श्रीमद्भगवद्गीता में कहा गया है-

आत्मौपम्येन सर्वत्र समं पश्यति योऽर्जुन
सुखं वा यदि वा दुःखं स योगी परमो मतः।

– अ. 6 श्लोक 32

अर्थात् जो सभी जीवों को अपने समान समझता है और उनके सुख एवं दुःख को अपने सुख दुःख के समान समझता है, वही परम योगी है। यथाः

समं पश्यन्हि सर्वत्र, समवस्थितमीश्वरम्।
न हिनस्त्यात्मनात्मानं, ततो याति परां गतिम्।

– अ. 13 श्लोक 28

अर्थात् ज्ञानी पुरुष ईश्वर को सर्वत्र व्यापक जानकर हिंसा नहीं करता, क्योंकि वह जानता है कि किसी प्राणी की हिंसा करना आत्महत्या करने के समान है। इस प्रकार से वह सर्वोच्च गति को प्राप्त होता है। महात्मा बुद्ध ने भी कहा है –

पाणे ने हने घातयेय, न चानुमन्या हनंत परेसं।
सव्वेसु भूतेसु निघाय दंडं, ये थावरा ये च तसंति लोके।

– सुत्तनिपात धम्मिक सुत्त

इसका भावार्थ यह है कि त्रस अथवा स्थावर जीवों को मारना या मरवाना

नहीं चाहिए और न ही त्रस या स्थावर जीवों को मारने वाले का अनुमोदन करना चाहिए।

अपरिमितैर्ग्यहामते कारणैर्मासं सर्वभक्ष्यम्, सर्वभूतात्म भूतानुयागन्तु मेनका सर्व जन्तु प्राणिभूतसंभूंतंभूनमांसं कथामिव भक्ष्यं।।

– लंकावतार सूत्र 80

अर्थात् सब प्रकार का मांस, दयावान के लिए अगणित कारणों से अभक्ष्य है। जो सर्व प्राणियों को अपने समान जानने वाला है, वह इन सब प्राणियों के वध से उत्पन्न हुए मांस को कैसे भक्षण योग्य समझेगा ?

महात्मा ईसा मसीह ने भी कहा है कि "देखो मैंने तुम्हें हर एक बीज तथा उपजाऊ वनस्पति दी है, जो पृथ्वी पर पैदा होती है और हर एक वृक्ष भी दिया है जिस वृक्ष में उपजाऊ बीज के फल लगे हैं, ये सब तुम्हारे लिए भोजन सामग्री है....तुम न तो चर्बी खाओगे और न ही खून पीओगे।"

– लेविटिक्स 3, 5, 27

महात्मा जरथुस्त ने कहा है कि "प्रत्येक व्यक्ति को प्रत्येक प्राणी का मित्र होना चाहिए....दुष्ट व्यक्ति, जो अनुचित रूप में पशुओं और भेड़ों तथा अन्य चौपायों की घोर हत्या करता है, उसके अवयव नष्ट किये जायेंगे।"

– आर्दविरफ 174-192

पैगम्बर मुहम्मद साहब ने कहा है कि "हमने स्वर्ग से मेह बरसाया, जिससे बाग पैदा हुए और अनाज की फसल उगी, तथा खजूरों से लदे हुए वृक्ष उत्पन्न हुए, जो मनुष्य के लिए भोजन होंगे।"

– कुरान सूरा काफ 9.11

"जो दूसरे के प्राणों की रक्षा करता है, वह गोया तमाम मानव जाति के प्राणों की रक्षा करता है।"

– कुरान, 5

सिक्ख धर्म के प्रवर्तक गुरु नानक ने कहा है–

मांस मांस सब एक है, मुर्गी हिरनी गाय।
आंख देख नर खात है, ते नर नरकहिं जाय।।

महात्मा कबीर ने कहा है–

मांस मछलियाँ खात है, सुरा पान के हेत।
ते नर नरकहिं जायेंगे, माता-पिता समेत।
तिलचर मछली खायके, कोटि गऊ दे दान।
काशी करवत ले मरे, तो भी नरक निदान॥

शाकाहार का प्रचार एवं प्रसार संसार के सभी देशों एवं समस्त कालों में रहा हैं। ग्रीस देश के प्रसिद्ध दार्शनिक विद्वानों पिथागोरस, इम्बीडोक्लिस, प्लेटो, सोक्रेटिज, ओविड, सेनेका, पोर्फिरी, प्लूटार्क आदि ने तथा ऑरिजेन, टरट्यूलियन, क्रिसोस्टोम तथा अलेक्जेंड्रिया के क्लीमेंट जैसे ईसाई धर्म गुरुओं ने भी शाकाहार का प्रतिपादन किया है। भारतवर्ष के महान् सम्राट् अशोक ने अपने विशाल साम्राज्य में स्थान-स्थान पर इस आशय के शिलालेख उत्कीर्ण करवाये थे कि कोई व्यक्ति किसी प्राणी की हत्या न करे। मुगल सम्राट अकबर ने भी आदेश दिया था कि उसके साम्राज्य में विशेष पर्वों के अवसरों पर किसी प्रकार का प्राणी वध न किया जाये। संसार के प्रसिद्ध विद्वान् स्वीडन बोर्ग, टाल्सटाय, वाल्टेयर, मिल्टन, वेस्ले आइजक न्यूटन, बूथ, आइजक पिटमैन, बर्नार्ड शा इत्यादि शाकाहारी थे और उन्होंने अपनी रचनाओं में शाकाहार का पूर्णरूपेण प्रतिपादन किया है। मैं विस्तारभय से उनके विचारों को इस लेख में उद्धृत करने में असमर्थ हूँ। मांसाहार के पक्ष में कुछ लोग यह युक्ति देते हैं कि मांसाहार से शक्ति बढ़ती है परन्तु यह युक्ति निस्सार है, क्योंकि हम देखते हैं कि शाकाहारी हाथी किसी मांसाहारी प्राणी से कम शक्तिशाली नहीं होता, संसार में अनेक डॉक्टरों तथा वैज्ञानिकों ने इस बात पर मतैक्य प्रकट किया है कि फलों तथा शाक भाजी एवं गो दुग्ध में मांस की अपेक्षा अधिक पोषक तत्त्व विद्यमान रहते हैं, जिनके सेवन से मनुष्य की शक्ति, स्फूर्ति तथा बुद्धि की अभिवृद्धि होती है, और मांस सेवन से जो नाना प्रकार की हानियाँ होती हैं, उनसे शाकाहार में सर्वथा मुक्त होता है। शाकाहारी मनुष्य में मांसाहारी मनुष्य की अपेक्षा उदारता, सहनशीलता, धैर्य, परिश्रमशीलता इत्यादि गुणों का अधिक समावेश दृष्टिगोचर होता है। प्राचीन समय में भारतवर्ष की सर्वांगीण उन्नति का प्रधान कारण भारतीय जनता का अहिंसा धर्म का पूर्ण रूप से पालन ही था। संसार में शांति एवं समृद्धि का सर्वोत्कृष्ट साधन अहिंसा ही है और यदि हमें राष्ट्रों के मध्य प्रेम शांति एवं सौहार्द्र की स्थापना करनी अभीष्ट है, तो हमें संसार के सभी धर्म प्रवर्तकों द्वारा समर्थित अहिंसा एवं शाकाहार को अपनाना ही पड़ेगा।

□ □ □

जैन कर्म सिद्धांत का मूलमंत्र : स्वावलंबन

(मरुधरकेसरी मुनिश्री मिश्रीमलजी महाराज अभिनंदन ग्रंथ)
(प्रकाशक-मरुधर केसरी अभिनंदन ग्रंथ
प्रकाशन समिति जोधपुर, ब्यावर)

आप धर्म विषयक निबंध लिखने में भी सिद्ध हस्त थे। हर धर्म के बारे में आपको विशद् ज्ञान था। जैन धर्म के तो आप विशेष ज्ञाता और अध्येता थे।

यहाँ तक कि जैन साधु साध्वियों के बीच धार्मिक विषयों पर चर्चा चलती तो संत लोगों के पूछने पर आप विनम्रता से संतोषजनक समाधान कर देते। जैन धर्म से संबंधित कई परीक्षाएँ देते रहे। सन् 1984 तक आप विद्यार्थी बन कर जीए। अध्ययन रचनाओं में प्रस्फुटित हुए बिना नहीं रहता, यही स्थिति उनके निबंधों में दृष्टिगत होती है। जैन धर्म में कर्म सिद्धांत का मूल मंत्र स्वावलंबन है, आपने इस मंत्र को जीवन में चरितार्थ कर रखा था। आप कथनी-करनी एक करने वाले तो थे ही, आपकी लेखनी भी आचरणनुरूप थी। प्रस्तुत है एतद् विषयक् उनका निबंध 'जैन कर्म सिद्धांत का मूलमंत्र स्वावलंबन'

जैन धर्म के अनुसार, प्रत्येक आत्मा कर्म करने तथा उसका फल भोगने में पूर्णरूपेण स्वतंत्र है। कहा भी है कि-

स्वयं कर्म करोत्यात्मा, स्वयं तत्फलमश्नुते।
स्वयं भ्रमति संसारे, स्वयं तस्माद्विमुच्यते।।

अर्थात् आत्मा स्वयं कर्म करती है और स्वयं उसका फल भोगती है। वह संसार में भ्रमण करती है और स्वयं भव भ्रमण से मुक्ति प्राप्त करती है।

पूज्य आचार्य श्री अमितगतिजी ने लिखा है कि-

स्वयं कृतं कर्म यदात्मना पुरा, फलं तदीयं लभते शुभाशुभम्।
परेण दत्तं यदि लभ्यते स्फुटं, स्वयं कृतं कर्म निरर्थकं तदा॥
निजार्जितं कर्म विहाय देहिनो, न कोऽपि कस्यापि ददाति किंचन।
विचारयन्नेवमनन्यमानसः, परो ददादीति विमुंच शेमुषीम्॥

अर्थात् आत्मा जैसे कर्म करती है, उसके अनुसार उसे शुभाशुभ फल प्राप्त होते हैं। यदि उसे अन्य कृत कर्मों के फल को प्राप्ति माना जावे तो स्वयं कृत कर्म निरर्थक हो जाते हैं। वास्तव में स्वयं कृत कर्मों के अतिरिक्त कोई किसी को फल प्रदान करने में समर्थ नहीं है। इस बात को भलीभाँति समझकर अन्य द्वारा फल प्राप्ति की आशा का परित्याग कर देना चाहिए।

जैन सिद्धांत के अनुसार आत्मा पर से कर्मों का आवरण दूर हो जाने पर वह सिद्धावस्था की प्राप्ति करती है और जन्म मरण के बंधन से सदा के लिए मुक्त हो जाती है। कहा भी है-

दग्धे बीजे यथात्यंतं, प्रादुर्भवति नांकुरः।
कर्म-बीजे तथा दग्धे, न रहति भवांकुरः॥

अर्थात् जिस प्रकार बीज के जल जाने पर अंकुर उत्पन्न नहीं होता, उसी प्रकार कर्म रूपी बीज के जल जाने पर भव रूपी अंकुर उत्पन्न नहीं हो सकता।

इसी कारण से जैन मान्यतानुसार आत्मा के परमात्मा बन जाने के पश्चात् उसका अवतरण नहीं हो सकता। इसे दूसरे शब्दों में यों कहा जा सकता है कि जैन धर्म परमात्मा का अवतार होना स्वीकार नहीं करता।

जैन धर्म के सर्वोच्च मंत्र "नमोकार मंत्र" में जिन पाँच परमेष्ठियों को वंदन किया गया है, वे ईश्वर के अवतार अथवा दैवी-शक्ति सम्पन्न व्यक्ति नहीं हैं, किन्तु उनकी आत्माएं भी साधारण आत्माओं जैसी थीं अथवा हैं। अन्तर केवल इतना ही है कि उन्होंने दृढ़ निष्ठापूर्वक आत्मा के गुणों का विकास किया अथवा कर रहे हैं, जबकि साधारण आत्माओं में वे गुण प्रसुप्त पड़े हैं। जैन मतानुसार किसी आत्मा को परमात्म दशा प्राप्ति के लिए किसी बाह्य सहायता की आवश्यकता नहीं है। उस आत्मा को स्वयं ही अपने गुणों का क्रमशः विकास करते रहने की आवश्यकता है। भगवान महावीर पर अनेक घोर उपसर्ग आने पर उन्होंने सबका वीरतापूर्वक सामना किया। देवराज इन्द्र ने उनकी सेवा करने के लिए उनसे प्रार्थना की, किन्तु उन्होंने उस प्रार्थना को यह कहकर अस्वीकार कर

या कि तीर्थंकर पद की प्राप्ति, किसी अन्य व्यक्ति की सहायता से नहीं, पितु अपने बल पर ही होती है। जैन सिद्धान्तानुसार जाति जन्म से नहीं, किन्तु र्म से होती है। भगवान महावीर का कथन है कि-

कम्मुणा बम्भणो होई, कम्मुणा होइ खत्तिओ,
कम्मुणा वइसो होइ, कम्मुणा होइ सुद्दओ।

किसी भी जाति का स्त्री या पुरुष अपने पुरुषार्थ से अपने कर्मों का ह्रास था आत्मिक गुणों का विकास करता हुआ परमात्मा बन सकता है। इस प्रकार न कर्मसिद्धांत हमें जिस पुरुषार्थ एवं स्वावलम्बन का अनुपम पाठ पढ़ाता है, ह अन्यत्र अत्यन्त दुर्लभ है।

❑ ❑ ❑

श्री नाहटाजी द्वारा लिखित एवं सम्पादित कतिपय ग्रन्थ

(संदर्भ-श्री अगरचन्द नाहटा अभिनन्दन ग्रन्थ
प्रधान संपादक-डॉ. दशरथ शर्मा)

श्री नाहटाजी द्वारा लिखित एवं सम्पादित ग्रन्थों की संख्या साठ से ऊपर है। उनमें से कतिपय ग्रंथों का संक्षिप्त परिचय निम्नलिखित है-

1. युगप्रधान श्री जिनचन्द्रसूरि :

यह ग्रन्थ नाहटाजी ने अपने भतीजे श्री भँवरलालजी के सान्निध्य में लिखा है और विक्रमी संवत् 1992 में प्रकाशित हुआ है। मध्यकालीन भारतीय इतिहास वेत्ताओं को विदित है कि सम्राट अकबर पर जैन धर्म का प्रभाव पड़ा था जिन जैनाचार्यों ने उसे विशेष रूप से प्रभावित किया उनके नाम हैं - श्री हीरविजयसूरिजी, श्री जिनचन्द्रसूरिजी। श्री हीरविजयसूरिजी का जीवन चरित्र तो मुनि विद्याविजयजी द्वारा कई वर्ष पूर्व काफी खोज शोधपूर्वक प्रकाशित किया जा चुका था, किन्तु श्री जिनचंद्रसूरिजी का प्रामाणिक जीवन चरित्र पर्याप्त ऐतिहासिक सामग्री उपलब्ध न होने के कारण प्रकाशित नहीं किया जा सका था। इस अभाव की पूर्ति इस ग्रन्थ के लेखकों ने कई वर्षों के परिश्रम एवं अनुसन्धान से की है। इस ग्रन्थ में कई चित्रों, फरमान-पत्रों, उत्कीर्ण लेखों तथा अन्यान्य उपलब्ध प्राचीन सामग्री का समावेश किया गया है, जिससे इसकी उपयोगिता एवं प्रामाणिकता बहुत बढ़ गयी है। इस ग्रन्थ के अनुवाद गुजराती एवं संस्कृत भाषाओं में भी प्रकाशित हो चुके हैं। इस पुस्तक की प्रस्तावना प्रसिद्ध गुजराती लेखक स्व. श्री मोहनलाल दलीचन्द देसाई ने लिखी है।

2. ऐतिहासिक जैन काव्य संग्रह :

इस ग्रन्थ का सम्पादन श्री नाहटाजी ने अपने भतीजे श्री भँवरलालजी के सान्निध्य में किया है और विक्रमी संवत् 1994 में प्रकाशित हुआ है। इस ग्रन्थ की प्रस्तावना प्रसिद्ध विद्वान् प्रोफेसर हीरालाल जैन ने लिखी है। इस ग्रन्थ में बारहवीं शताब्दी से लेकर बीसवीं शताब्दी तक लगभग आठ सौ वर्षों के ऐतिहासिक जैन काव्य संग्रहीत हैं, जिनसे जैन-इतिहास तथा भाषाओं के क्रमिक विकास पर पर्याप्त प्रकाश पड़ता है। ये काव्य अपभ्रंश, प्राकृत, संस्कृत राजस्थानी, गुजराती आदि भाषाओं में है, जिनके अध्ययन से इन भाषाओं के विज्ञान तथा व्याकरण आदि को हृदयंगम करने में प्रचुर सहायता प्राप्त होती है कई काव्य रस, अलंकार, पद- विन्यास, भाषा-सौष्ठव, अर्थ गांभीर्य आदि गुणों की दृष्टि से भी अनुपम हैं, जिनके मनन एवं अनुशीलन से अनिर्वचनीय आनन्द की प्राप्ति होती है। ग्रन्थ के प्रारंभ में "काव्यों का ऐतिहासिक सार" नाम से विस्तृत भूमिका तथा "संक्षिप्त कवि परिचय" भी दिये गये हैं, जिनसे इस ग्रन्थ की उपयोगिता में अभिवृद्धि हो गयी है।

3. दादाश्री जिनकुशलसूरि :

यह पुस्तक श्री नाहटाजी ने अपने भतीजे श्री भँवरलालजी के सान्निध्य में लिखी है और इसका प्रथम संस्करण विक्रमी संवत् 1996 में प्रकाशित हुआ है। खरतरगच्छ में "दादाजी" के नाम से सुप्रसिद्ध चार महान् आचार्य हुए हैं- 1. युगप्रधान श्री जिनदत्तसूरिजी, 2. मणिधारी श्री जिनचन्द्रसूरिजी, 3. श्री जिनकुशलसूरिजी और 4. युगप्रधान श्री जिनचन्द्रसूरिजी। इन चारों महान् आचार्यों के अनेक स्मारक देश के कोने-कोने में विद्यमान हैं और उनमें धर्म-प्राण जनता की अटूट श्रद्धा है। विद्वान् लेखकों ने यह ग्रन्थ काफी परिश्रमपूर्वक लिखा है और इसकी प्रस्तावना प्रसिद्ध जैन विद्वान मुनि जिनविजयजी ने लिखी है।

4. मणिधारी श्री जिनचन्द्रसूरि :

यह पुस्तक भी श्री नाहटाजी ने अपने भतीजे श्री भँवरलालजी के सान्निध्य में लिखी है और इसका प्रथम संस्करण विक्रमी संवत् 1997 में प्रकाशित हुआ है। इस पुस्तक में उपर्युक्त चार "दादाजी" में से द्वितीय "दादाजी" का जीवन चरित्र, विद्वान् लेखकों द्वारा उपलब्ध ऐतिहासिक सामग्री के आधार पर वर्णित किया गया है। इसकी प्रस्तावना सुप्रसिद्ध विद्वान् डॉ. दशरथ शर्मा ने लिखी है।

5. युगप्रधान श्री जिनदत्तसूरि :

यह पुस्तक भी श्री नाहटाजी ने अपने भतीजे श्री भँवरलालजी के सान्निध्य में लिखी है और इसका प्रथम संस्करण विक्रमी संवत् 2003 में प्रकाशित हुआ है। विद्वान लेखकों द्वारा उपर्युक्त चार "दादाजी" में से प्रथम "दादाजी" का चरित्र चित्रण इस ग्रन्थ में विशेष खोज शोध एवं परिश्रमपूर्वक किया गया है। इस ग्रंथ की प्रस्तावना सुप्रसिद्ध जैन लेखक मुनि कान्तिसागरजी ने लिखी है।

6. ज्ञानसार ग्रन्थावली :

इस ग्रन्थ का सम्पादन श्री नाहटाजी ने अपने भतीजे श्री भँवरलालजी के सान्निध्य में किया है और इसकी प्रथमावृत्ति वीर संवत् 2485 में प्रकाशित हुई है। उन्नीसवीं शताब्दी में योगिराज ज्ञानसार नामक एक महान् संत हुए हैं, जिनका साधारण जनता से लेकर राजा महाराजाओं पर बड़ा प्रभाव था और जिन्होंने उस प्रभाव का उपयोग अपनी व्यक्तिगत स्वार्थ सिद्धि के लिए नहीं, किन्तु सर्व साधारण के लाभ के लिए किया था। विद्वान् सम्पादकों ने इस ग्रन्थ के द्वारा इन महान् संत की जीवनी कई वर्ष के परिश्रम और छानबीन के पश्चात् प्रस्तुत की है और उनकी विशिष्ट आध्यात्मिक रचनाओं को प्रकाशित किया है। इस ग्रन्थ की प्रस्तावना प्रसिद्ध विद्वान् स्व. श्री राहुल सांस्कृत्यायन ने लिखी है। इस ग्रंथ के प्रारंभ में योगिराज श्रीमद्ज्ञानसारजी के व्यक्तित्व एवं कृतित्व का 112 पृष्ठों में विस्तृत परिचय विद्वान् सम्पादकों द्वारा दिया गया है।

7. बीकानेर जैन लेख संग्रह :

श्री नाहटाजी ने कई वर्षों के अनवरत परिश्रम से बीकानेर एवं जैसलमेर के सहस्राधिक अप्रकाशित लेखों का संग्रह किया और उन्हें अपने भतीजे भँवरलालजी के सान्निध्य में वीराब्द 2482 में विस्तृत भूमिकादि सहित इस वृहदाकार ग्रन्थ के रूप में प्रकाशित किया। इस ग्रंथ में नवमी, दशमी शताब्दी से लेकर वर्तमान काल तक के लेखों का संग्रह किया गया है, जिससे तत्कालीन इतिहास पर अपूर्व प्रकाश पड़ता है। इस ग्रन्थ के रूप में विद्वान् सम्पादकों ने भारती के भण्डार में एक अनुपम रत्न प्रस्तुत किया है और एतद्विषयक अनुसंधानकर्त्ताओं का सुन्दर मार्गदर्शन किया है। इस ग्रंथ का प्राक्कथन, प्रसिद्ध विद्वान् डॉ. वासुदेवशरण अग्रवाल ने लिखा है। इन लेखों से बीकानेर के प्रमाणिक जैन इतिहास के अतिरिक्त तत्कालीन जैन स्थापत्य कला, मूर्तिकला तथा चित्रकला पर भी पर्याप्त प्रकाश पड़ता है। इन लेखों के द्वारा हमें अनेक

स्थानों, राजाओं, गच्छों, आचार्यों, मुनियों, श्रावकश्राविकाओं, जातियों आदि का परिचय मिलता है और तत्कालीन रीति-रिवाजों, उपासना-पद्धतियों तथा धार्मिक, सामाजिक एवं राजकीय परिस्थितियों का विशद् ज्ञान प्राप्त होता है। उदाहरणार्थ, भूमिका के पृष्ठ 87 से 96 तक सचित्र विज्ञप्ति पत्रों का वर्णन किया गया है, जिनके अवलोकन से तत्कालीन सामाजिक, राजनीतिक एवं सांस्कृतिक परिस्थितियों का भली-भाँति परिचय प्राप्त होता है और उनमें दिए हुए चित्र तो हमारे समक्ष तत्कालीन जीवनशैली का चलचित्र सा प्रस्तुत कर देते हैं। इस ग्रन्थ की विस्तृत भूमिका में बीकानेर के जैन इतिहास, बीकानेर के राज्य स्थापना एवं जैनों का हाथ, बीकानेर नरेश तथा जैनाचार्य, बीकानेर में ओसवाल जाति के गोत्र, बीकानेर जैन उपाश्रयों का इतिहास, बीकानेर के जैन ज्ञान भण्डार, बीकानेर के जैन श्रावकों का धर्म प्रेम आदि विषयों का विशद् विवेचन किया गया है।

8. समय सुन्दर कृत कुसुमांजलि :

सत्रहवीं शताब्दी में उपाध्याय समयसुन्दर नामक एक प्रकांड जैन विद्वान् और महान् कवि हुए, जिन्होंने विपुल साहित्य का निर्माण किया और अनेक ग्रन्थों पर विद्वतापूर्ण टीकाएं लिखीं। जैन शास्त्रों में पारंगत विद्वान् होने के अतिरिक्त उनका व्याकरण, न्याय, अनेकार्थ कोष छंद, साहित्य, संगीत आदि पर भी पूर्ण अधिकार था, जिसके कारण उसकी रचनाओं का विद्वत्समाज तथा जन साधारण में बड़ा भारी आदर था और आज भी है। उनके प्रखर पांडित्य का परिचय इसी बात से चल जाता है कि उन्होंने सम्राट अकबर की विद्वत्सभा में दिये आठ अक्षरों "राजानो ददते सौख्यं" पर आठ लाख अर्थों की रचना की। यह ग्रन्थ "अर्थ रत्नावली" के नाम से प्रसिद्ध है। इस महान् कवि की 563 लघु रचनाओं का संग्रह श्री नाहटाजी ने अपने भतीजे श्री भँवरलालजी के सान्निध्य में विक्रम संवत् 2013 में उपर्युक्त नाम से प्रकाशित किया है। इस ग्रन्थ के प्रारम्भ में विद्वान संपादकों तथा महोपाध्याय विनयसागरजी द्वारा इन महान् कवि के कृतित्व का विस्तृत विवेचन किया गया है। इस ग्रन्थ की भूमिका प्रसिद्ध विद्वान् डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी ने लिखी है।

9. रत्नपरीक्षा :

इस ग्रन्थ का संपादन भी श्री नाहटाजी ने अपने भतीजे श्री भँवरलालजी के सान्निध्य में किया है। विद्वान् संपादकों ने 'ठक्करफेरूकी' लगभग छः सौ वर्ष प्राचीन इस रचना को विशद भूमिका के साथ प्रकाशित किया है। ग्रन्थ के प्रारम्भ में उसका परिचय 80 पृष्ठों में डॉ. मोतीचन्द्र द्वारा दिया गया है, जिससे इस विषय पर पर्याप्त प्रकाश पडता है।

10. सीताराम चौपाई :

महोपाध्याय कविवर समयसुन्दर कृत इस ग्रन्थ का सम्पादन श्री नाहटाजी ने अपने भतीजे श्री भँवरलालजी के सान्निध्य में किया है और यह ग्रन्थ संवत् 2019 में प्रकाशित हुआ है। इस ग्रन्थ के प्रारम्भ में सम्पादकीय भूमिका तथा प्रो. फूलसिंह "हिमांशु" द्वारा "राजस्थानी का एक रामचरितकाव्य" के शीर्षक से इस ग्रन्थ तथा उसके लेखक का विस्तृत परिचय, सीतारामचरित्रसार तथा डॉ. कन्हैयालाल सहल द्वारा लिखित "सीताराम चौपाई" में प्रयुक्त राजस्थानी कहावतें नामक लेख दे दिये हैं, जिनमें इस ग्रन्थ की उपयोगिता में चार चाँद लग गये हैं।

11. श्रीमद्देवचन्द्र स्तवनावली :

इस पुस्तक का संपादन श्री नाहटाजी ने अपने भतीजे श्री भँवरलालजी के सान्निध्य में किया है और यह पुस्तक संवत् 2012 में प्रकाशित हुई है। अठारहवीं शताब्दी में श्रीमद् देवचन्द्रजी नामक एक प्रसिद्ध विद्वान सन्त हुए हैं, जिन्होंने संस्कृत, प्राकृत, हिन्दी, गुजराती आदि भाषाओं से अनेक ग्रन्थों, सज्झायों आदि की रचना की है, जिनका प्रचलन वर्तमान काल में अत्यधिक है। पुस्तक के प्रारंभ में भी श्री नाहटाजी ने श्रीमद् देवचन्द्रजी के व्यक्तित्व तथा कृतित्व के संबंध में पर्याप्त प्रकाश डाला है।

12. धर्मवर्द्धनग्रंथावली :

इस ग्रन्थ का संपादन श्री नाहटाजी ने किया है और यह ग्रन्थ संवत् 2017 में प्रकाशित हुआ है। इस ग्रन्थ के प्रारंभ में ही श्री नाहटाजी ने महोपाध्याय धमवर्द्धन के व्यक्तित्व एवं कृतित्व के संबंध में विस्तृत जानकारी दी है। आप अठारहवीं शताब्दी के एक महान् विद्वान संत थे और उन्होंने राजस्थानी भाषा में काव्य रचना की है। इनकी पाँच बड़ी रचनाओं को छोड़कर अवशिष्ट समस्त उपलब्ध रचनाओं का समावेश इस ग्रन्थ में किया गया है, जो श्री नाहटाजी के अनेक वर्षों की खोज शोध तथा परिश्रम का फल है। इस ग्रन्थ की भूमिका राजस्थानी के सुप्रसिद्ध विद्वान् डॉ. मनोहर शर्मा ने लिखी है।

13. जिनराजसूरि कृति कुसुमांजलि :

सत्रहवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में खरतरगच्छ में श्री जिनराजसूरि नामक प्रसिद्ध आचार्य हुए हैं, जिन्होंने संस्कृत तथा राजस्थानी भाषाओं में अनेक ग्रन्थों की रचना की है। उनमें से कतिपय उपलब्ध राजस्थानी काव्यों का प्रकाशन श्री

नाहटाजी ने इस ग्रन्थ के द्वारा किया है। यह ग्रन्थ विक्रम संवत् 2010 में प्रकाशित हुआ है। इस ग्रन्थ के प्रारंभ में श्री नाहटाजी ने श्री जिनराजसूरि के व्यक्तित्व एवं कृतित्व पर अच्छा प्रकाश डाला है। इस ग्रन्थ के साहित्यिक अध्ययन के संबंध में प्रो. नरेन्द्र भानावत का एक लेख ग्रन्थ के प्रारंभ में प्रकाशित हुआ है।

14. बीकानेर के दर्शनीय जैन मन्दिर :

श्री नाहटाजी ने बीकानेर के दर्शनीय जैन मन्दिरों के संबंध में सामान्य जानकारी के लिए यह पुस्तिका लिखी है, जो विक्रम संवत् 2012 में प्रकाशित हुई है। यह पुस्तक एतद्विषयक् ज्ञान के लिए बड़ी उपयोगी सिद्ध हुई है।

15. मणिधारी श्री जिनचन्द्रसूरि अष्टम् शताब्दी स्मृति ग्रन्थ :

खरतरगच्छ में "दादाजी" के नाम से सुप्रसिद्ध चार आचार्यों में से द्वितीय "दादाजी" का अष्टम् शताब्दी समारोह, वर्ष 1971 में दिल्ली में बड़े पैमाने पर मनाया गया था। उस सुअवसर पर श्री नाहटाजी तथा उनके भतीजे श्री भँवरलालजी द्वारा सम्पादित इस ग्रन्थ का प्रकाशन समारोह समिति द्वारा किया गया था। इस ग्रन्थ के प्रथम खण्ड में विभिन्न विषयों पर 43 महत्त्वपूर्ण निबंध प्रकाशित किये गये हैं, जिनमें से 20 निबंध इस ग्रन्थ के विद्वान् सम्पादकों ने 40 वर्षों की खोज, शोध और परिश्रम के उपरांत तैयार किए हैं, जो खरतरगच्छ के संबंध में अनुसंधान करने वाले व्यक्तियों के लिए वहुत ही उपयोगी हैं। इस ग्रन्थ में अनेक प्राचीन एवं अर्वाचीन चित्र भी दिये गये हैं, जिनसे उसकी शोभा में अभिवृद्धि हुई है।

□ □ □

राजस्थान ऋषिकुल ब्रह्मचर्याश्रम, रतनगढ़, बीकानेर के तीसवें वार्षिकोत्सव पर दिया गया अध्यक्षीय भाषण

आपने स्वतंत्रता प्राप्ति के छः माह उपरान्त एक ऋषिकुल ब्रह्मचर्याश्रम के 30वें वार्षिकोत्सव पर अपना एक प्रेरणास्पद अध्यक्षीय भाषण दिया, जो वास्तव में विद्यार्थियों के लिए देश-प्रेम, सदाचार सीख, समय अनुपम की त्रिवेणी वहाने वाला था। आपने शिक्षा का उद्देश्य, पाठ्यक्रम, राष्ट्रभाषा ज्ञान और सुयोग्य नागरिक आदि के स्वरूपों को अपने विचारों से स्पष्ट किया।

भाषण

अज्ञानतिमिरान्धानां, ज्ञानाञ्जन शलाकया।
चक्षुरून्मीलितं येन, तस्मै श्री गुरवै नमः॥

श्री राजस्थान ऋषिकुल ब्रह्मचर्याश्रम के अध्यापकगण ! स्नातकों ! तथा उपस्थित महानुभावों !

ब्रह्मचर्याश्रम के प्रबन्धकर्त्ताओं ने मुझे सभापति पद के लिये मनोनीत किया। इसके लिये मैं उनका आभार मानता हूँ। यद्यपि मैं इस पद के लिये सर्वथा अनुपयुक्त हूँ, तथापि उनके स्नेहपूर्ण अनुरोध की अवज्ञा करना मेरे लिये अशक्य है। कहा भी है कि "गुरोराज्ञा पालनीया" अर्थात् अपने से बड़ों की आज्ञा की पालना करनी ही चाहिये।

आश्रम को स्थापित हुए 29 वर्ष हो चुके हैं। इस सुदीर्घकाल में इसने अर्थाभाव के रहते हुये भी जो आश्चर्यजनक उन्नति की है, उसका परिचय

आपको समय समय पर वार्षिक रिपोर्ट द्वारा दिया जाता रहा है और आज भी दिया गया है। आश्रम का भव्य-भवन तथा उसकी व्यवस्था भी आप के समक्ष है, परन्तु जिस प्रकार किसी फैक्ट्री के भवन तथा मशीन और व्यवस्था की सुन्दरता से ही उसे सफल नहीं कहा जा सकता, उसकी वास्तविक सफलता उसके द्वारा निर्मित वस्तुओं की सुन्दरता एवं उपादेयता पर निर्भर रहा करती है, इसी प्रकार किसी विद्यालय की सफलता उसके द्वारा शिक्षित विद्यार्थियों पर निर्भर रहा करती है। यदि किसी विद्यालय के विद्यार्थी शिक्षा प्राप्ति के पश्चात् सच्चरित्र एवं उच्चकोटि के नागरिक सिद्ध होते हैं तो उस विद्यालय को सफल समझना चाहिये, अन्यथा नहीं। आपको भलिभांति विदित है कि इस ब्रह्मचर्याश्रम के द्वारा शिक्षित विद्यार्थी प्राय: सुयोग्य नागरिक एवं विद्वान् तथा अध्यवसायी सिद्ध हुए हैं, अतएव इस ब्रह्मचर्याश्रम की सफलता एवं उपादेयता में किञ्चित्मात्र सन्देह को स्थान नहीं। वास्तव में यह ब्रह्मचर्याश्रम केवल बीकानेर राज्य में ही नहीं अपितु राजस्थान प्रांत के उत्तम ब्रह्मचर्याश्रमों में गिने जाने योग्य है।

इस आश्रम की सफलता का प्रधान श्रेय पं. माधवप्रसादजी शर्मा को है, जो अनेक कार्यों में व्यस्त रहते हुए भी अपने अथक् परिश्रम द्वारा इसे आदर्श शिक्षा संस्था बनाने के लिए आरम्भ से ही भागीरथ प्रयत्न करते रहे हैं और जिनके अनवरत परिश्रम द्वारा सिंचित आश्रम अंकुर, आज आपके समक्ष पुष्पित एवं पल्लवित विशाल वटवृक्ष के समान विद्यमान है, जिसकी सुखद छाया में रहकर ब्रह्मचारीगण पूर्ण शांति लाभ करके जीवन पथ में अग्रसर होने की तैयारी करते हैं। हमें हर्ष है कि पं. माधवप्रसादजी आज भी हमारे बीच उपस्थित हैं और आश्रम तथा जनता जनार्दन के लिये अपनी अमूल्य सेवाएं समर्पित कर रहे हैं। आश्रम के अन्यान्य संरक्षकों तथा सहायकों के नाम तथा उनके कार्यकलाप भी आश्रम के इतिहास में स्वर्णाअक्षरों में अंकित किये जाने योग्य हैं। परमपिता परमात्मा की असीम अनुकम्पा से छः मास पूर्व भारतवर्ष के भाग्याकाश में स्वतन्त्रता सूर्य का उदय हुआ है। यद्यपि देश में कलह, अविद्या एवं दरिद्रता रूपी अंधकार का अद्यावधि प्राबल्य है तथा शान्ति एवं सुव्यवस्था का साम्राज्य पूर्णतया स्थापित नहीं हो पाया है, तथापि यह बात निर्विवाद सिद्ध है कि भारतवर्ष का भविष्य अत्यन्त उज्ज्वल है और वह अचिरकाल में संसार के प्रगतिशील राष्ट्रों में सर्वोच्च स्थान प्राप्त करेगा।

समस्त संसार के विद्वानों ने यह बात एक स्वर से स्वीकार की है कि भारतवर्ष अतीतकाल में सभ्यता एवं संस्कृति के सर्वोच्च शिखर पर आरूढ़ था,

उसका ज्ञान-विज्ञान, कला-कौशल और समृद्धि-उन्नति की पराकाष्ठा पर पहुँच चुके थे। यह बात उस समय की है जबकि संसार के अन्यान्य राष्ट्र घोर अज्ञानान्धकार में परिवेष्ठित थे। उन दिनों स्वर्गलोक के देवता भी भारत भूमि में जन्म लेने की आकांक्षा रखते थे और भारतवासियों का जीवन धन्य समझते थे :-

गायन्ति देवाकिल गीतकानि, धन्यास्तु ये भारत भूमिभागे।
स्वर्गापवर्गस्यच हेतुभूते भवन्ति भूयः पुरुषाः सुख्यात्॥

भारतवर्ष का विद्या-प्रेम और चरित्र की दृढ़ता विश्वविश्रुत थे और भारतीयों ने ही प्रावीन समय में भूमंडल पर ज्ञान विज्ञान और सभ्यता का प्रचार किया था। मनुस्मृति में लिखा है कि :-

एतद्देशप्रसूतस्य, सकाशादग्रजन्मनः।
स्वं स्वं चरित्रं शिक्षेरन् पृथिव्यां सर्वमानवाः॥

उन दिनों मानव जीवन चार विभागों में विभक्त किया जाता था, जिन्हें आश्रम कहा जाता था। इन आश्रमों में सबसे पहला आश्रम ब्रह्मचर्याश्रम था, इस आश्रम में ऋषि-मुनियों तथा गुरुओं के निवास स्थान पर रहकर विद्यार्थी वर्ग पूर्ण ब्रह्मचर्य का पालन करते हुए समस्त शास्त्र एवं विद्याओं का अध्ययन करता था।

उस समय में आजकल के समान जनाकीर्ण स्थानों के बीच में पाठशालाएं नहीं हुआ करती थीं, अपितु ऋषि-मुनियों के आश्रम जनपदों से बहुत दूर एकान्त स्थल में हुआ करते थे, जहाँ पर शिष्य समुदाय अपने गुरुओं के समीप रहकर, उनके निरीक्षण एवं तत्त्वावधान में विद्याध्ययन करता था। शिष्य लोग जनपद में जाकर भिक्षा माँगते और उसके द्वारा उनका तथा उनके गुरुओं का भरण-पोषण होता था। गुरु तथा शिष्य समुदाय के उस विशाल समूह को कुल के नाम से सम्बोधित किया जाता था और गुरु उस कुल के कुलपति हुआ करते थे। कुलपति और उनके शिष्य समुदाय का पारस्परिक सम्बन्ध आजकल जैसे वेतनभोगी अध्यापकों तथा शिक्षा शुल्क देकर पढ़ने वाले छात्रों-सा नहीं किन्तु पिता पुत्र सा हुआ करता था। कुलपति का कर्त्तव्य अपने शिष्य समुदायों के ईहलौकिक तथा पारलौकिक विद्यायों से पारंगत करना और उन्हें सर्वगुण सम्पन्न नागरिक बनाना था। आश्रम में पूर्ण शिक्षा प्राप्त करके उपरान्त ही छात्र गृहस्थाश्रम में प्रवेश करने की आज्ञा प्राप्त कर सकते थे। ऐसे आश्रम समग्र देशों में स्थान-स्थान पर थे, जहाँ पर दूर-दूर के देशों से छात्रगण तथा नामी विद्वान् शिक्षा प्राप्त करने के लिए उपस्थित होते थे। ये आश्रम प्रायः एकान्त एवं सुरम्य वनस्थलियों में हुआ करते थे, जहाँ पर छात्र सघन कुंजों में माता धारित्री के अंक

में बैठकर शीतल मन्द और सुगन्धित समीर का सेवन करते हुए देवी शारदा की उपासना करके यथेष्ट ज्ञानोपार्जन करते थे। उनका स्वभाव अत्यन्त सरल, भोजन अत्यन्त स्वल्प और साधारण वेशभूषा ब्रह्मचारियों के अनुरूप और जीवन अत्यन्त प्राकृतिक हुआ करता था। ऐसे उत्तम वातावरण में पलकर तथा ऐसे कुलपतियों के द्वारा विद्या लाभ कर यदि वे विद्यार्थी पूर्ण विद्वान्, शक्तिशाली, धर्मात्मा, सदाचारी तथा परोपकार परायण बनते थे, तो इसमें किंचित्मात्र आश्चर्य की बात नहीं है।

हमारे प्राचीन दृष्टाओं तथा मनीषियों ने ईहलौकिक विद्या की अपेक्षा पारलौकिक विद्या को ज्यादा महत्त्व दिया था। उनका कहना था कि "सा विद्या या विमुक्तये" अर्थात् विद्या वही है, जिससे मुक्ति मिले। श्रीमद्‌भगवद्‌गीता में अध्यात्म विद्या को ही सर्वश्रेष्ठ विद्या कहा गया है। भारतीय मस्तिष्क से जो विचार उस समय उत्पन्न हुए वे हमारी अमूल्य निधि हैं और हमारी जीवन-यात्रा में पथ प्रदर्शन के लिये प्रकाश स्तम्भ के समान है। आज भी संसार के प्रकाण्ड पण्डित भारतीय दर्शनों के आगे नतमस्तक होते हैं और उनका अध्ययन कर अपने जीवन को सफल बनाते हैं।

यद्यपि भारतवर्ष में अध्यात्म विद्या को सब विद्याओं से प्रधानता दी जाती थी, तथापि हमारे पूर्वज अन्यान्य विद्याओं से उदासीन नहीं थे। प्राचीन समय में भारतीय साहित्य, गणित, ज्योतिष, संगीत, शिल्प, वास्तुकला, चित्रकला, वस्त्र निर्माण कला, स्थापत्य कला, तक्षण कला आदि विषयों में पारंगत थे। भारतवर्ष का व्यापार दूर-दूर के देशों के साथ होता था और यहाँ की बनी हुई वस्तुओं का उन देशों में बड़ा आदर होता था। भारतवर्ष उस समय उन्नति की पराकाष्ठा पर था। हमारी असावधानी से भारत की अनेक विद्याएं लुप्त हो चुकी हैं। हमारे प्राचीन ग्रन्थों की अनेक बातों को मानने की सहसा इच्छा नहीं होती परन्तु जब आधुनिक आविष्कारों द्वारा उनकी पुष्टि होती है तो हमें यह जानकर चकित रह जाना पड़ता है कि उस पुरातनकाल में भी हमारे पूर्वज इन बातों से अभिज्ञ थे। किन्तु "नीचैर्गच्छत्युपरिच दशाचक्रमेण" वाले सिद्धांत के अनुसार किसी राष्ट्र या व्यक्ति के दिन सदैव एक जैसे नहीं रहते। हमारे पारस्परिक कलह ने हमारी शक्ति को छिन्न भिन्न कर दिया, हम दासता की शृंखलाओं में बन्ध गये और हमारा धन विदेशों में चला गया। हम अपने प्राचीन आदर्शों तथा अपनी विद्याओं को विस्मृत कर असहाय तथा किंकर्त्तव्यविमूढ़ बन गये। प्राचीन शिक्षा प्रणाली के स्थान पर हमें आधुनिक शिक्षा प्रणाली से शिक्षा दी जाने लगी, जो देश के लिए सर्वथा अनुपयुक्त सिद्ध हुई। प्राचीन शिक्षा प्रणाली का उद्देश्य था – छात्रों को

विनीत, सरल, धर्मात्मा, विद्वान्, बलवान और सच्चरित्र बनाना तथा अर्वाचीन प्रणाली का उद्देश्य था- मनुष्य को येन-केन-प्रकारेण रुपया कमाने की मशीन बनाना। भारतवर्ष के नैतिक तथा भौतिक पतन का उत्तरदायित्व का बहुत बड़े अंश वर्तमान शिक्षा प्रणाली पर है, जो हमें अपना प्राचीन गौरव विस्मृत करा अपने पूर्वजों के प्रति अनादर भाव प्रकट करना, उपयोगी घरेलू धन्धों को तुच्छ समझना, अपने माता-पिता तथा गुरु के प्रति श्रद्धाभाव न रखना, असंयमित, उच्छृंखल विलासपूर्ण एवं कृत्रिम जीवन व्यतीत करना, शक्ति और ब्रह्मचर्य के प्रति उपेक्षा रखना तथा परमुखापेक्षी बनना सिखलाती है। हमने पाश्चात्यों के समस्त अवगुणों को तो प्राय: अपना लिया परन्तु उनके उत्तमोत्तम गुणों यथा- अनुशासनप्रियता, देशभक्ति, दृढ़ लगन, अथक् परिश्रम, नियमितता आदि को ग्रहण नहीं किया। हमने पाश्चात्य ज्ञान और विज्ञान को सीखा अवश्य, परन्तु उससे कोई लाभ नहीं उठाया। हमारी वर्तमान अवस्था पर निम्नलिखित श्लोक लागू होता है :-

यथा खरश्चन्दन भारवाही भारस्यवेत्ता तु चन्दनस्य।
तथैव शास्त्राणि बहुन्यधीत्य, क्रियाविहीना खरवद् वहन्ति॥

जब तक हम लोग केवल परीक्षोत्तीर्ण होने में विद्याध्ययन की और अपने तथा अपने कुटुम्ब के भरण पोषण में अपने जीवन की सार्थकता समझते रहेंगे, तब तक हम लोगों से देश को लाभ होने की आशा करना मृगमरीचिकावत् प्रवंचन मात्र है।

मेरा कहने का यह अभिप्राय कदापि नहीं कि पाश्चात्य शिक्षा में केवल दुर्गुण ही दुर्गुण हैं और उसे ग्रहण करना भारत के लिये सर्वथा हानिकारक है, *अपितु मैं तो कहूंगा कि वर्तमान समय में पाश्चात्य भौतिक विज्ञान और साहित्य* ने जो सर्वांगीण उन्नति की है, उसका ज्ञान प्राप्त करना, प्रत्येक भारतीय के लिये आवश्यक है। वर्तमान समय में पाश्चात्य विज्ञान ने अत्यधिक उन्नति की है और यातायात तथा विचारों के आदान प्रदान के साधन अत्यन्त सुलभ बना दिये हैं, जिसके परिणामस्वरूप शक्ति और समय की बड़ी भारी बचत होने लगी है और विश्व बहुत छोटा मालूम पड़ता है। *इन रचनात्मक आविष्कारों के साथ साथ* विज्ञान के द्वारा अनेक विध्वंसक आविष्कार भी हुए हैं, जिनसे युद्धकाल में निर्दोष जनता का भीषण संहार किया जाता है। परन्तु इन विध्वंसक आविष्कारों के कारण विज्ञान का परित्याग करना वैसी ही मूर्खता होगी जैसी ज्वलनशीलता के कारण अग्नि का परित्याग करना। जब संसार उत्तरोत्तर उन्नति कर रहा है तो हमें भी उसके साथ प्रगतिशील बनना चाहिये और यदि विदेशों से हमें कोई

उपयोगी विद्या प्राप्त हो सकती हो तो उसे अवश्य ग्रहण करनी चाहिये। प्राचीनता के मोह में फँसकर आधुनिक ज्ञान विज्ञान से वंचित रहना नितांत मूर्खता है। कहा भी है कि :-

पुराणमित्येव न साधु सर्व, नवीनमित्येव न गर्हणीयम्।

अतः हमें अपनी शिक्षा प्रणाली की व्यवस्था इस प्रकार करनी चाहिये, जिससे छात्रों का पौरस्त्य तथा पाश्चात्य दोनों प्रकार के ज्ञान की उपलब्धि हो सके और साथ-साथ उनमें ब्रह्मचर्य, सदाचार, परोपकारिता, अनुशासनशीलता आदि सद्गुणों का संचार हो, जिससे वे उत्तम नागरिक कहलाने के अधिकारी बन सकें। यह तभी हो सकता है जब छात्रों की शिक्षा-दीक्षा ग्राम से दूर एकान्त स्थान में उच्चकोटि के विद्वान् एवं पूर्ण सच्चरित्र अध्यापकों के द्वारा हो। अध्यापकों को केवल छात्रों के स्वास्थ्य तथा चरित्र के लिये उत्तरदायी समझा जाना चाहिये। अध्यापकों को यह बात सदैव ध्यान में रखनी चाहिये कि छात्रों को पठित मात्र बना देने से ही उनका कर्त्तव्य पूर्ण नहीं हो जाता, परन्तु उनका कर्त्तव्य उन्हें उच्च कोटि के नागरिक बनाना है। हमें हर्ष है कि पिछले कई वर्षों में ऐसे अनेक गुरुकुलों तथा आश्रमों की स्थापना हुई है, जिनमें उपर्युक्त लक्ष्य को सामने रखकर विद्यार्थियों को शिक्षा दी जाती है। जनता का कर्त्तव्य है कि वह तन-मन-धन से इसकी सहायता करे और अपने बालकों को इसमें भेजकर, उनके चरित्र निर्माण में सहायक हो।

मेरी सम्मति में वास्तविक नागरिक बनने के लिए प्रत्येक विद्यार्थी को निम्नलिखित दस विषयों की शिक्षा दी जानी चाहिये :-

1. मातृभाषा
2. यदि मातृभाषा हिन्दी न हो तो राष्ट्रभाषा। हिन्दी हो तो कोई एक प्रांतीय भाषा।
3. गणित
4. इतिहास
5. भूगोल
6. विज्ञान
7. सदाचार
8. व्यायाम
9. कला और व्यवसाय
10. नागरिकता

इन दस विषयों में शिक्षा दिये जाने के उपरान्त विद्यार्थी की रुचि के अनुसार उसे विशिष्ट विषयों में उच्च शिक्षा दी जानी चाहिये। विद्यार्थियों को कोई पाठ रटाने की अपेक्षा उसे भली भाँति हृदयंगम कराना चाहिये, जिससे कि वे उसके अनुसार अपने जीवन में आचरण कर सकें। आपको महाभारत की वह कथा भली भाँति स्मरण होगी जिसके अनुसार बालक युधिष्ठिर को अपने गुरु

को दिये हुए 'क्रोध न करने' के पाठ को हृदयंगम कराने में कितना कष्ट उठाना पड़ा था। विद्यार्थियों से पिष्टपेषण कराने के स्थान पर उनकी जिज्ञासावृत्ति को उत्तेजित करना चाहिये, जिससे वे आगे चलकर विभिन्न विषयों में मौलिक साहित्य का निर्माण तथा वैज्ञानिक आविष्कार करके अपने राष्ट्र का मुख उज्ज्वल कर सकें। हमें यह सदैव स्मरण रखना चाहिये कि आज के बालक कल नागरिक बनेंगे और उन्हीं को देश का सारा भार संभालना होगा। अतएव उनकी शिक्षा दीक्षा में किसी प्रकार की त्रुटि को स्थान नहीं दिया जाना चाहिये। उपर्युक्त दस विषयों की उपयोगिता स्वयं सिद्ध है। अतएव उनका विशद् विवेचन करने की आवश्यकता नहीं है और समय का अभाव भी है। अतएव मैं इस प्रकरण को केवल इतना कहकर समाप्त करूंगा कि निर्दिष्ट विषयों में से अन्तिम चार विषयों का समावेश छात्रों को स्वावलम्बी और आदर्श नागरिक बनाने की दृष्टि से प्रत्येक कक्षा के पाठ्यक्रम में अवश्यमेव शामिल किया जाना चाहिये।

ऋषिकुल के स्नातकों से मैं निवेदन करूंगा कि वे अपनी सारी शारीरिक एवं मानसिक शक्तियों को ज्ञानार्जन करने तथा अपने आपको सुयोग्य नागरिक बनाने की तैयारी करने में लगा दें। परम सौभाग्य से उन्हें इस ऋषिकुल के ब्रह्मचारी बनने का सुअवसर प्राप्त हुआ है अत: उन्हें इसका पूरा पूरा लाभ उठाना चाहिये। यदि वे इसे खो देंगे तो उन्हें जीवनपर्यन्त पश्चात्ताप की अग्नि में जलना पड़ेगा और वे अपने साथियों से पिछड़ जायेंगे। उन्हें अपने दैनिक कार्यक्रम को लिखकर कमरे में टांग लेना चाहिये और उसका काल विभाग करके उसी के अनुसार उपयुक्त समय पर कार्य करना चाहिये। इस नियमितता के कारण उनमें आत्मनिर्भरता उत्पन्न होगी और वे किसी परीक्षा में असफल नहीं रह सकेंगे। समय को खोने का अर्थ जीवन को खोना है क्योंकि जीवन समय ही तो है। चतुर मनुष्य वही है जो अपने समय का पूरा-पूरा उपयोग करे और एक मिनिट भी व्यर्थ न खोए। विद्यार्थियों को महापुरुषों का जीवन चरित्र पढ़ते रहना चाहिये। उनसे जो शिक्षाएं मिलती हों उन्हें अपने जीवन में उतारना चाहिये। कोई मनुष्य उत्पन्न होते ही महापुरुष नहीं बन जाता, बड़ी बड़ी विपत्तियों को धैर्यपूर्वक सहन करने पर ही उसे यह पद प्राप्त हो सकता है। यह बात किसी महापुरुष की जीवनी को पढ़ने से ज्ञात हो जायेगी। हमारे महाभारत, रामायण, पुराण आदि और संसार के इतिहास ग्रन्थ महापुरुषों के चरित्रों से भरे पड़े हैं, विद्यार्थियों को उनसे अपने चरित्र निर्माण में पूरी सहायता मिल सकती है। विद्यार्थियों को अपने कमरों में उपदेशप्रद वाक्य लिखकर टांग लेने चाहिये, जिससे कि वे उन्हें सदैव स्मरण रहें। विद्यार्थियों को बालचरों के समान अपने देश, नरेश, महेश की सेवा में सदैव

तत्पर रहना चाहिये। इसके अतिरिक्त उन्हें अपने माता-पिता और गुरु की आज्ञा का भी सदैव पालन करना चाहिये। इनका हमारे ऊपर जो उपकार है, वह अवर्णनीय है और हम कभी उससे उऋण नहीं हो सकते। इनकी सदैव यही इच्छा रहती है कि हम लोग उनसे भी अधिक योग्य बनें। कहा भी है कि "सर्वत्र जयमिच्छेत्पुत्राच्छिष्यात्पराजयम्" विद्यार्थियों को सदैव परस्पर प्रेम रखना चाहिये और अवसर पड़ने पर एक दूसरे की सहायता उसी प्रकार करनी चाहिये जिस प्रकार श्रीकृष्ण ने अपने सहपाठी सुदामाकी की थी। श्रीकृष्ण एक राजा के पुत्र थे और सुदामा एक दरिद्र ब्राह्मण के, परन्तु उनका परस्पर कितना प्रगाढ़ प्रेम था। एक बार गुरु ने उन्हें वन से लकड़ियां तोड़ कर लाने की आज्ञा दी तो वे दोनों सहर्ष लकड़ियां लाने चले गये। श्रीकृष्ण ने अपने मन में तनिक भी इस विचार को स्थान नहीं दिया कि ऐसा करने से उनके सम्मान में ठेस पहुंचेगी। विद्यार्थियों को यह बात सदैव ध्यान में रखनी चाहिये कि किसी उपयोगी कार्य के करने से किसी की मानहानि नहीं होती, अप्रतिष्ठा होती है किसी कार्य को बुरे ढंग से करने पर। आदर्श पुरुष वही है जो छोटे से छोटे कार्य को उसी तत्परता से करे जिसके साथ वह बड़े कार्य करता है। अतएव विद्यार्थियों को प्रारम्भ से ही छोटे-छोटे कार्य को सुचारू रूप से सम्पादन करने का अभ्यास करना चाहिये। इससे वे किसी कार्य में नहीं चूकेंगे। उन्हें अपना तन-मन सदैव स्वच्छ रखना चाहिये। मन को पवित्र रखने के लिये प्रातःकाल उठते समय और रात्रि को शयन से पूर्व नित्य ईश-प्रार्थना अवश्य करनी चाहिये और उत्तमोत्तम धार्मिक ग्रन्थों का पारायण नियमपूर्वक करते रहना चाहिये। शयन से पूर्व उन्हें अपने दैनिक कृत्यों का स्मरण कर सोचना चाहिये कि कहीं किसी कर्त्तव्य में त्रुटि तो नहीं रह गई। यदि कोई त्रुटि रह गई हो तो उसे दूसरे दिन सुधार करना चाहिये। विद्यार्थियों को अपना आहार-व्यवहार स्वच्छ और परिमित, आचरण परिमार्जित और विचार पवित्र रखना चाहिये, जिससे कि वे उच्चकोटि के नागरिक बन सकें और उनके आश्रम (विद्यालय), नगर, राज्य और राष्ट्र को उन पर गर्व हो।

अन्त में, मैं अपने पूज्य कुलपति महामना स्वर्गीय पं. मदनमोहन मालवीय जी महाराज के उस दोहे को उद्धृत करके अपना भाषण समाप्त करता हूं, जिसे वे प्रायः हम विद्यार्थियों को सुनाया करते थे :-

दूध पीओ, कसरत करो, और जपो हरिनाम।
देशभक्ति में रत रहो, पूरे हों सब काम॥

❑ ❑ ❑

2. स्तवन एवं काव्य

भगवान् श्री शीतलनाथ-स्तवन

शीतलनाथ जिनेश्वर तुमको कोटि प्रणाम।।टेक।।
भद्दिलपुर में जन्म तुम्हारा, दृढ़रथ-नंदा-नंदन प्यारा।
इक्ष्वाकु-कुल-अभिराम, तुमको लाखों प्रणाम।। शीतलनाथ....

दीक्षा ले निजकर्म खपाये, स्वल्प-काल में केवल पाये।
थापा तीर्थ ललाम, तुमको लाखों प्रणाम।। शीतलनाथ....

अगणित प्राणी तुमने तारे, सम्मेदशिखर में मोक्ष सिधारे।
पूर्ण हुए सब काम, तुमको लाखों प्रणाम।। शीतलनाथ...

भव-दावानल में जो जलते, वे तुरन्त हैं शीतल बनते।
लेकर तेरा नाम, तुमको लाखों प्रणाम।। शीतलनाथ....

जो जन तुमको निशि-दिन ध्यावें, मन वांछित फल निश्चय पावें।
जावें अविचल ठाम, तुमको लाखों प्रणाम।। शीतलनाथ....

पाप नष्ट करता तव दर्शन, अक्षय सुख देता तव पूजन।
वन्दन आठों याम, तुमको लाखों प्रणाम।। शीतलनाथ....

दादाबाड़ी अतिशय सुन्दर, उसमें तव प्रतिमा है मनहर।
जनपद बिरलाग्राम, तुमको लाखों प्रणाम।। शीतलनाथ....

शिखरचन्द्र करता तव कीर्तन, काटो मम कर्मों का बन्धन।
दो मुझको शिव धाम, तुमको लाखों प्रणाम।। शीतलनाथ....

भगवान् श्री पार्श्वनाथ स्तुति

(तर्ज - हे मातृभूमि ! तेरे चरणों में शीष नवाऊँ)

हे पार्श्वनाथ तेरे, गुण नित्य प्रति मैं गाऊँ।
तेरी अपूर्व छवि को, हरदम हृदय में ध्याऊँ॥1॥

करुणानिधान तूने, करुणा का मत प्रचारा।
अनगिनत प्राणियों को तूने, प्रभो उबारा॥2॥

तव सम न और कोई, चिन्ता-हरण जगत् में।
तेरे समान सच्चा, साथी नहीं विपत् में॥3॥

तू ही पिता व माता, तू ही गुरु व भ्राता।
मेरा जगत् में तू ही एकमात्र त्राता॥4॥

मुझ दीन-हीन जन का, केवल तू ही सहारा।
मुझ डूबते हुये को, तू ही दिखा किनारा॥5॥

कर्मों ने मुझ को घेरा छाया घना अन्धेरा।
अज्ञान-तिमिर-भानु, कर शीघ्र तू सवेरा॥6॥

तेरी शरण में आया, हे नाथ तू बचा ले।
तेरे चरण-युगल की, छाया में विभु बिठा ले॥7॥

कर्मों का आवरण हट, आत्म-स्वरूप झलके।
उन्नति शिखर पर चढ़कर, परमात्म रूप प्रकटे॥8॥

♦•♦•♦

वीतराग वाणी

("विजयानन्द" मासिक वर्ष 27 अंक 2 फरवरी सन् 1983 में प्रकाशित)

वीतराग की वाणी में आनन्द ही आनन्द है (टेक)

(1)

देह में आनन्द नहीं, आत्मा में आनन्द है,
भोग में आनन्द नहीं, त्याग में आनन्द है।
हिंसा में आनन्द नहीं, दया में आनन्द है,
असत्य में आनन्द नहीं, सत्य में आनन्द है ।। वीतराग।।

(2)

चोरी में आनन्द नहीं, दान में आनन्द है,
विषयों में आनन्द नहीं, विनय में आनन्द है।
संग्रह में आनन्द नहीं, देने में आनन्द है,
ममता में आनन्द नहीं, समता में आनन्द है ।। वीतराग।।

(3)

क्रोध में आनन्द नहीं, क्षमा में आनन्द है,
मान में आनन्द नहीं, विनय में आनन्द है।
माया में आनन्द नहीं, सरलता में आनन्द है,
लोभ में आनन्द नहीं, तृष्णा-त्याग में आनन्द है।। वीतराग।।

(4)

द्वेष में आनन्द नहीं, प्रेम में आनन्द है।,
कलह में आनन्द नहीं, मेल में आनन्द है।
अज्ञान में आनन्द नहीं, ज्ञान में आनन्द है,
अधर्म में आनन्द नहीं, धर्म में आनन्द है ।। वीतराग।।

(5)

शक्ति में आनन्द नहीं, भक्ति में आनन्द है,
रति में आनन्द नहीं, विरति में आनन्द है।
आत्म वल्लभ समुद्र गुरुवर की शिक्षा में आनन्द है,
निज परहित साधन करने में आनन्द ही आनन्द है ।। वीतराग।।

न्यायाम्भोनिधि जैनाचार्य श्रीमद् विजयानन्द सूरीश्वर (आत्मारामजी महाराज) प्रशस्ति

(''विजयानन्द'' मासिक पर्युषण अंक अगस्त/सितम्बर 1956 पृ. 16 पर प्रकाशित)

(1)

जैन धर्म आकाश व्याप्त था, निविड़ तिमिर से,
सुप्त पड़ी थी जाति लगाकर बाजी शव से।
कलह, अविद्या, द्वेष आदि का राज्य प्रबल था,
जैनधर्म का कहीं न किंचित् भी संबल था।।

(2)

जैन जाति शत्-शत् भागों में बँटी हुई थी,
पन्थ, गच्छ के झगड़ों में वह फँसी हुई थी।
जैन धर्म का द्रुत गति से था ह्रास हो रहा,
पर समाज था लंबी ताने पड़ा सो रहा।।

(3)

जिन शासन नभ भानु सकल सद्गुण रत्नाकर,
मोह निशा अज्ञान-तिमिर हर दिव्य दिवाकर
पीड़ित वसुधा कष्ट हरण हित सौम्य सुधाकर
प्रकट हुए तब श्रीमद् विजयानन्द सूरीश्वर।।

(4)

लघु वय में दीक्षा ले जग का बन्धन तोड़ा,
झेले भीषण कष्ट सदा सुख से मुख मोड़ा।
पूर्णाभ्यास किया गुरु ने सारे सूत्रों का,
तुलनात्मक अध्ययन किया सारे धर्मों का।।

(5)

प्रकटित करने गौरव गरिमा जैन धर्म की,
नाना उत्तम ग्रन्थों की गुरु ने रचना की।
मंदिर, विद्यालय स्थापित कर स्थान-स्थान में,
जैन धर्म दुन्दभी बजाई ग्राम-ग्राम में।।

(6)

यद्यपि गुरु थे संस्कृत, प्राकृत में पारंगत,
नत होते थे उनके सम्मुख दिग्गज पंडित।
फिर भी निज ग्रन्थों की रचना हिन्दी में कर,
भाषा वाङ्मय कोष भरा मणियों से सुन्दर।।

(7)

निज अकाट्य युक्तियों से वादी मद मर्दन कर,
फैलाया देश-देश में जिन मत पावन।
हिन्दू, मुस्लिम, सिक्ख, पारसी और क्रिश्चियन,
मन्त्र मुग्ध सम गाते थे गुरुवर गुण गायन।

(8)

कर कुरीति उच्छेद, ध्यान रख देश, काल का,
प्रतिनिधि भिजवाए गुरु ने यूरोप, अमरीका।
सब लोगों की शंकाओं का समाधान कर,
जैन धर्म-ध्वज फहराया जगती में मनहर।।

(9)

जैन जाति म्रियमाण-देह में भर नव-जीवन,
मन्त्र एकता का फूँका गुरुवर ने पावन।
कभी न उतरेगा हम से उनका गुरुत्तम ऋण,
कभी न विस्मृत होंगे, उनके अनुपम सद्गुण।।

(10)

गुरु उपदिष्ट मार्ग के द्वारा जग के मानव,
पायेंगे सुख शान्ति सुधा-रस गौरव अभिनव।
वैर विरोध त्यागकर सब सप्रेम रहेंगे,
जन सेवार्पित करके निज जीवन सफल करेंगे।।

जैनाचार्य श्रीमद् विजय वल्लभ सूरीश्वर प्रशस्ति

"युगवीर आचार्य - भाग बीजो" (गुजराती) वि.सं. 2004 में प्रकाशित

(1)

जिन-शासन के दिव्य-दूत, हे परम तपस्वी,
विश्व-वंद्य-विजयानन्द-गुरु के शिष्य यशस्वी।
धीर, वीर, गंभीर, प्रखर वक्ता वर पंडित,
शान्त, दान्त, संभ्रांत, सकल सद्गुण समलंकृत॥

(2)

निखिल शास्त्र-निष्णात, मनस्वी, आगम आकर,
विद्या-वारिधि योग शास्त्र नय कुमुद कलाधर।
सौम्याकृति, निजवाणी से बरसाते अमृत,
मन्त्रमुग्धवत् हो जाते श्रोता सब सकृत॥

(3)

बालपने में लिए आपने पंच महाव्रत,
भीष्म तुल्य ही पालन करते अति भीषण व्रत।
धर्म-धीरता, दया, शीलता, नीति-निपुणता,
विश्व विदित है आज आपकी शील सुजनता।

(4)

जीवन का तज मोह सहे अति दुःस्सह परीषह
हँसते हँसते सहन किए सब कष्ट भयावह।
आत्मोन्नति के लिए आपने सब कुछ छोड़ा,
सारे बन्धन तोड़, जगत् से नाता जोड़ा।

(5)

स्थान-स्थान पर बनवाए, सुन्दर देवालय,
ठौर-ठौर पर खुलवाए कॉलेज, विद्यालय।
गुरुकुल, ग्रन्थागार, सभाओं को स्थापित कर,
ज्ञानदान के हेतु किए साधन सब सत्वर॥

(6)

मरुधर, गुर्जर और पंचनद आदि प्रान्त में,
किया ज्ञान-उद्योत आपने ग्राम-ग्राम में।
सभी विकीर्ण शक्तियों को एकत्र मिलाकर,
किया संघ को पूर्ण संगठित एक बनाकर॥

(7)

शास्त्रार्थों में गर्व खर्व कर वादी गण का,
पूर्ण प्रचार किया भारत में जैन धर्म का।
जैन धर्म की पूर्ण महत्ता को प्रकटित कर,
किया अमित उपकार आपने अखिल विश्व पर॥

(8)

दिग्दिगन्त में व्याप्त आपकी गौरव गरिमा
है अकथ्य शत् शेष-शारदा से तव महिमा।
भावच्चन्द्र-दिवाकर अक्षय कीर्ति रहेगी,
भूमण्डल पर कथा आपकी अमर रहेगी॥

(9)

यश सौरभ से सुरभित होंगी दिशि विदिशाएँ,
कोटि कण्ठ कुञ्जित होगी गुरु-गुण गाथाएँ।
तव उपदिष्ट मार्ग पर चलकर जैन जाति सब,
प्राप्त करेंगी गुरुतर गौरव, अभिनव, वैभव।

(10)

शत्-शत् वर्षों तक स्थिर हो तव पावन जीवन,
होती रहे सदा ही जिसमें पर हित साधन।
बसे आपकी अमृत वाणी मन मन्दिर में,
जन-सेवा रत रहे भुलाकर भेद, स्व पर में॥

श्रीमद् इन्द्रदिन्न सूरीश्वर प्रशस्ति

(सूरीश्वरजी के 57वें जन्मदिवस पर ता: 14.10.79 को बीकानेर में पठित)
"विजयानन्द" (मासिक) वर्ष 23, अंक 12 (दिसंबर, 79) में प्रकाशित)

(1)

शासन रत्न समुद्र सूरीश्वर शिष्य पट्टधर,
मोह-निशा-अज्ञान-तिमिर हर दिव्य दिवाकर।
जन-मन कुमुद विकास हेतु अति सौम्य सुधाकर,
दुःख पुंज दावानल प्रशमन अभिनव जलधर ॥

(2)

इन्द्र सूरीश्वर इन्द्र सदृश अमृत बरसाते,
पीयूष-वर्षिणी वाणी से मानस सरसाते।
जन तज माया मोह सरलता को अपनाते,
पाप-मार्ग को छोड़, धर्म-पथ पर हैं जाते॥

(3)

जिन स्थानों में होता है प्रवास गुरुवर का,
उन स्थानों को निश्चय मिलता वर प्रभुवर का,
कलह, अविद्या, द्वेष आदि अघ दूर भगाकर,
स्थापित करते ऐक्य आदि सब सद्गुण गुरुवर॥

(4)

गच्छ पन्थ के घेरों से वे ऊपर उठकर,
स्थापित करते सभी जनों में प्रेम परस्पर।
उनके पावन उर में निज पर भेद नहीं है,
उनकी जीवन नैया में किंचित् भी छेद नहीं है॥

(5)

मानापमान समदृष्टि रख, कर पर हित साधन,
देव, धर्म, गुरु सेवा-रत रहते हैं निशि दिन।
जरा-जर्जरित देह-यष्टि, पर क्लांति कहाँ है ?
सब विद्या-निष्णात, स्वल्प भी भ्रान्ति कहां है ?

(6)

परमार क्षत्रियोद्धारक गुरुवर, अब जग का उद्धार करो,
प्रभु उपदिष्ट मार्ग पर चल, जग में सुख, शान्ति, समृद्धि भरो।
धर्म-ध्वज फहराओ जग में, सत्य, अहिंसा का हो राज्य,
धर्मनिष्ठ बनकर सब छोड़ें, दुर्गुण जो अवश्य हो त्याज्य।।

(7)

गुरुवर गुण समूह से होकर प्रेरित हमने,
श्रद्धा-सुमन चढ़ाकर संजोये हैं सपने।
गुरुवर प्रसन्न होकर हमको देवें यह वरदान,
धर्म-मार्ग में अविचल रहकर, करते रहें आत्मकल्याण।।

(8)

गुरुवर शतायु हों, हम सबकी है इच्छा उत्कट,
उनका मार्ग प्रशस्त रहे टल जावें संकट।
यश सौरभ से सुरभित हो दशों दिशाएँ,
कोटि-कंठ-गुञ्जित हो, गुरु-गुण गाथाएँ।।

उद्बोधन

"ओसवाल" वर्ष 12 अंक "वीरपुत्र" वर्ष 1 अंक 2 ता : 25.06.46 ई. में प्रकाशित

(1)

यश-वैभव की विमल ध्वजा जिसकी फहराती,
महिमा सुरभित ललित-लता जग में लहराती।
दया दान के गीत गिरा गाती न अघाती,
ओसवाल कुल-कीर्ति कथा का पार न पाती।

(2)

अंतःस्पर्शी यश-समुद्र था जिसका अनुपम,
धैर्य, शौर्य, दाक्षिण्य, शील का जो था संगम।
नीति-निपुणता, धर्म-वीरता, अविचल संयम,
ओसवंश में व्यक्त हुए सारे गुण उत्तम।।

(3)

ललित कला में सर्वोत्तम जिसके देवालय,
अगणित अलभ्य ग्रन्थ पूरित जिसके ग्रन्थालय।
कूप, सरोवर, अतिथि गृहादिक ओसवंश के
अद्यावधि स्मारक मिलते हैं, गत वैभव के।

(4)

वही जाति हा ! आज खड़ी है सवसे पीछे,
जो ऊँची थी वहुत, आज है पहुँची नीचे।
कलह, अविद्या, द्वेष आदि अवगुण आच्छादित,
स्वार्थ त्यागकर, करता कोई विरला पर-हित।।

(5)

ओसवाल नवयुवकों ! जागो, कमर कसो अव,
कर कुरीति-उच्छेद, मिटाओ भेदभाव सव।
वन समाज सेवा में तन, मन, धन से तत्पर,
फैलाओ सद्ज्ञान, वढ़ाओ प्रेम परस्पर।।

(6)

ऊँच नीच के गहन पंक में जाति धँसी है,
गच्छ, पन्थ के वाड़ों में यह खूव फँसी है।
विखरी हुई शक्तियों को अव शीघ्र मिला दो,
वीरो ! उठकर शीघ्र संगठन विगुल वजा दो।।

(7)

स्थापित कर दो स्थान-स्थान में निज सम्मेलन
अर्पित कर दो जन-सेवा में सारा जीवन।
प्रकट करो वसुधा पर अपना गौरव अभिनय,
गर्व करें जिससे तुम पर सव जग के मानय।।

तुम बढ़े चलो हे नौजवान !

"वीरपुत्र" वर्ष 1 अंक 6-7 ता : 18.09.46 ई. में प्रकाशित

(1)

कण्टकमय मार्ग तुम्हारा है,
ऊबड़ खाबड़ पथ सारा है।
पर्वत, दुर्गम जलधारा है,
एकाकी तुम, न सहारा है।।

जीवन में साहस ज्योति जगा,
बन दृढ़ प्रतिज्ञ कर दो प्रयाण।
तुम बढ़े चलो हे नौजवान।।

(2)

मानव जीवन क्षणभंगुर है,
यह विश्व चराचर नश्वर है।
पर आत्मा अजर, अनश्वर है,
आत्मा ही बनता ईश्वर है।।

जीवन का मोह त्याग करके,
तुम साधन करो आत्मकल्याण।
तुम बढ़े चलो हे नौजवान।।

(3)

कर्मठ का जग में आदर है,
जो हटे, कर्म से कायर है।
उसका ही जग में यश स्थिर है,
जो सदा कर्म में तत्पर है।।

यह कर्मभूमि वसुधा करती,
आतुरता से तुमको आह्वान।
तुम बढ़े चलो हे नौजवान।।

(4)

जड़, जल, थल, चन्द्र, सूर्य, तारे,
निज कार्यक्षेत्र में रत सारे।
लेते विश्रान्ति का नाम नहीं,
रुकने का क्या कुछ काम कहीं ?

तुम चेतन हो क्यों रुको भला,
क्यों कर आवे तुमको थकान ?
तुम बढ़े चलो है नौजवान॥

(5)

तुम भारत के हो नौनिहाल,
माँ की गुदड़ी के छिपे लाल।
तुम पर ही जग की आँख लगी,
तुम पर ही सबकी आस टिकी॥

तुम पर आबाल वृद्ध सबके,
उर में हैं टिके हुए अरमान
तुम बढ़े चलो है नौजवान॥

(6)

तुम अपने भाग्य विधाता हो,
नव संस्कृति के निर्माता हो।
तुम दीन दुखी जन-भ्राता हो,
तुम असहायों के त्राता हो।

परहितसाधन में अपना तन,
मन, धन, सब कर दो बलिदान।
तुम बढ़े चलो हे नौजवान॥

(7)

यश-वैभव की मत चाह करो,
पर उन्नति लख मत डाह करो।
सुखदुख की मत परवाह करो,
तुम कभी न मुख से आह भरो॥

अपने जीवन का लक्ष्यबिन्दु,
स्थिरता से करो स्वयं सन्धान।
तुम बढ़े चलो हे नौजवान॥

(8)

सब सुप्त जनों को जाग्रत कर,
विछुड़ों में मेल करो सत्वर।
अघ, कलह, अविद्या नाश करो,
जग में सुख, शान्ति, समृद्धि भरो॥

अपना जीवन निर्माल्य बना,
भारत का कर दो अभ्युत्थान।
तुम बढ़े चलो हे नौजवान॥

वीरपुत्र

("वीरपुत्र" साप्ताहिक के वर्ष 2 अंक 9 ता : 05.10.47 ई. में प्रकाशित)

(1)

तुम वीरपुत्र हो, पुरुष सिंह संतान तुम्हीं हो।
भारत-उर चिर-संचित प्रिय अरमान तुम्हीं हो॥
अखिल राष्ट्र के एकमात्र अभिमान तुम्हीं हो।
भारत की वह नई, निराली शान तुम्हीं हो॥

(2)

नित नूतन अनुपम नैसर्गिक गान तुम्हीं हो।
विश्व चराचर वीणा मृदुतम तान तुम्हीं हो॥
राष्ट्र-सरोवर स्थित सरसिज अम्लान तुम्हीं हो।
भारत-भाग्य-विधाता वर वरदान तुम्हीं हो॥

(3)

चिर आकांक्षित विश्वशांति के दूत तुम्हीं हो।
परम प्रगति पथ पथिक, राष्ट्र रथ सूत तुम्हीं हो॥
भारत माता भक्ति परायण पूत तुम्हीं हो।
परहित साधन हेतु बने अवधूत तुम्हीं हो॥

(4)

जीवन वासर मंजुलतम मधुमास तुम्हीं हो।
अखिल जगत् मुख मंगल-मंजुल हास तुम्हीं हो।।
दीन दुखी शोषित पीड़ित जन दास तुम्हीं हो।
जन-मन-मानस में स्थित दृढ़तम आस तुम्हीं हो।।

जो प्रगतिशील, वह जीवन है

("वीरपुत्र" के वर्ष 1 अंक 20 ता : 20.03.47 में प्रकाशित)

(1)

ऊषा रंजित नभ-मंडल ने,
दिव्याभायुत्त वसुधा-तल ने,
निर्झर की अविरल कलकल ने
सरिता के मंजुल छलछल ने,
संदेश सुनाया पावन है।
जो प्रगतिशील, वह जीवन है।।

(2)

निशि-नाथ, भानु, तारामंडल,
जगती के जड़, चेतन, अविकल,
निज कर्म क्षेत्र में रत, अविचल,
फँसते प्रमाद में एक न पल,
यह स्थिर सिद्धान्त पुरातन है।
जो प्रगतिशील, वह जीवन है।।

(3)

द्रुतगति जलधारा जाती है,
गिरी कारा रोक न पाती है,
वह निज मग आप बनाती है,
हमको यह मंत्र सुनाती है,
जग में यह सत्य-सनातन है।
जो प्रगतिशील, वह जीवन है।।

(4)

बढ़ता चल मानव, क्लांति कहाँ,
जीवन पथ में विश्रान्ति कहाँ,
किंचित् दिखलाई भ्रान्ति जहाँ,
होगी विनष्ट सुख-शान्ति वहाँ,
चलता चल, जब तक स्थिर तन है।
जो प्रगतिशील, वह जीवन है॥

(5)

वह दूर-दूर उस क्षितिज पार,
मीलित कपाट है लक्ष्यद्वार,
मानो कहता हो वह पुकार,
भीतर आओ, मुझको उघार,
चलना ही उन्नति साधन है।
जो प्रगतिशील, वह जीवन है॥

(6)

लेकर परिजन का मधुर प्यार,
लेकर जीवन का स्निग्ध सार,
इच्छाओं का ले मृदुल भार,
लेकर साहस संबल उदार,
आगे बढ़ना जीवन-पन है।
जो प्रगतिशील, वह जीवन है॥

(7)

तुम व्यर्थ गँवाओ एक न क्षण,
देखो समुद्र भरते जल-कण,
आलस्य देहका रिपु भीषण,
उसका तुम त्याग करो तत्क्षण
कितना अमूल्य यह जीवन है।
जो प्रगतिशील, वह जीवन है॥

(8)

चलते जाओ, आगे बढ़ते,
गिरि पर्वत हों, जाओ चढ़ते,
जो वीर, न वे पीछे हटते,
वे सदा यही मन में रटते,
"यह उत्तम सूत्र सुहावन है।
जो प्रगतिशील, वह जीवन है।।"

सुंदर, नूतन प्रभात आया

'ओसवाल'' साप्ताहिक के वर्ष 13 अंक 12 ता : 01.01.47 ई. में प्रकाशित
'राजस्थानी गौरव' वर्ष 1 अंक 2 में प्रकाशित)

(1)

शैशव की स्वप्न-उमंगों में,
यौवन की तरल तरंगों में,
आक्रान्त-मनुज के अंगों में,
जीवन के नाना रंगों में,
फैला प्रकाश, भागी छाया।
सुंदर, नूतन प्रभात आया।

(2)

पादप, पल्लव, प्रसून, फल ने,
कोमल किसलय, दूर्वादल ने,
लतिका, कलिका, नव-उत्पल ने,
अविकल हरीतिमा मंजुल ने,
देखो, अभिनव जीवन पाया।
सुंदर, नूतन प्रभात आया।

(3)

निर्झर के अविरल कल-कल में,
सर, सरिता के निर्मल जल में,
वन, उपवन-मञ्जुल भूतल में,
दिव्याभायुत्त नभमंडल में,
सबका मन बरबस हरषाया।
सुंदर, नूतन प्रभात आया।

(4)

कर के कल कूंजन कोयल ने,
कर नर्तन केकी मंडल ने
करके मृदु भन-भन मधुपों ने,
पर, विविध-वर्ण के विहगों ने,
मिलकर स्वागत गायन गाया।
सुंदर नूतन प्रभात आया।

आशा

(1)

ज्ञात नहीं है घर की राह,
पड़ा हुआ हूँ वन में आह।
लगी हुई है तन में दाह;
कौन करे उसकी परवाह ?
भटक रहा हूँ धीरज-धर,
मिलती नहीं राह है पर।
कौन दिखावे मुझको राह,
भटक रहा हूँ बेबस आह।।

(2)

अटक रहे आशा में प्रान,
मार्ग नहीं पर पड़ता जान।
भानु सुखाये देता जान
फेंक-फेंक कर निज कर-बान।
घूमा बहुत विपिन के माँह,
कहीं न देखी मैंने छाँह।
डाल गया है वन में कौन,
बोलो कोई; क्यों हो मौन ?

(3)

प्रतिध्वनि वापस आती पर,
देवे कौन मुझे उत्तर ?
हिंस्र जीव अपना रव कर,
उपजाते हैं उर में डर।।
निज नीडों में पक्षी बैठे,
घोर गुहाओं में पशु पैठे
मना रहे आनंद मंगल,
नहीं सताता उनको जंगल।।

(4)

वही खा रहा मुझको काट,
और रहा जीवन-कण चाट।
उर में रहा निराशा पाट,
लगा रही पर आशा डाट।।
इसीलिए दुखों को सहकर राह खोजने में हूँ तत्पर।
नहीं रही अब तन में शक्ति, नहीं छूटती पर आसक्ति।।

(5)

भूख-प्यास से हूँ आक्रान्त,
तन भी है अब अति ही क्लान्त।
नहीं खतम होता वन-प्रान्त,
दग्ध हो रहे हैं पादान्त।।
सारा तन तेजी से जलता,
जिससे सारा रक्त उबलता।
झुलस रहे हैं नेत्र युगल,
गिर पड़ता हूं मैं पल-पल।।

(6)

अति तेजी से है लू चलती,
जिससे सारी देह झुलसती।
लोहू को है गाढा करती,

और है श्रम-करण-धारा बहती॥
चकाचौंध है आतप करता,
आँखों में अन्धेरा भरता।
गिरकर हूँ तुरन्त उठ जाता,
चलने पर भी राह न पाता॥

(7)

उष्ण बरसाती रेत अंग पर,
मानों हो अति क्षुद्र अग्नि-शर।
धूलि-धूसरित सब अंगों पर;
श्रम-कण से कीचड़ आया भर॥
फिर भी घूम रहा आशा धर,
कर ही क्या सकता हूँ मैं फिर ?
छाया नहीं दिखाई देती,
रज चरणों को झुलसा देती॥

(8)

चारों ओर रेत के टीले,
रवि-किरणों से लगते पीले।
गर्म देख होवें सब पीले,
आवें कभी न छाता भी ले।
चलता रहा किन्तु मन मार,
और न मैंने मानी हार।
आशा मुझे भगाती जाती
और धैर्य भी देती जाती॥

(9)

आखिर लगी प्यास अति घोर,
मैं अति भय से हुआ विभोर।
अब आया जीवन का छोर,
चला न आशा का कुछ ज़ोर॥
छोड़ी सब आशा जीवन की,
सुधि न रही कुछ अपने तन की।
गिरने ही वाला था मैं फिर,
इतने में जल-धार पड़ी सिर॥

(10)

ऊपर देखा आँख उठाकर,
छिड़क रहा इक जन करुणाकर।
उससे फिर मैं राह पूछकर,
आया सीधा अपने घर पर।।
आँख खुली मेरी इतने में,
सोचा सब देखा सपने में।
सीखा पर मैंने इक पाठ,
"कभी न होना उचित निराश"

ओसवाल

"ओसवाल" के 12वें वर्ष के अंक (2) "नव-वर्षांक" में प्रकाशित

ओसवाल-सम्मेलन दृढ़तर करने, फैलाने सद्ज्ञान,
जाति संगठित कर सिखलाने, विश्वबंधुत्व पाठ महान्

शील, दया, दाक्षिण्य, दान, सद्गुण गण का करने सुविकास,
"ओसवाल" - रवि पाक्षिक करता, कलह, अविद्यातम का ह्रास।

मधुकर

"वीर लोंकाशाह" के जयन्ति अंक (वर्ष 3 अंक 3) ता. 30.10.46 में प्रकाशित

मधुकर, मधुर कुसुम-मधु पीकर झूम रह मदमाता।
कोमल कलिका, कलित कोकनद का कल गायन गाता।।

नित नूतन निसर्ग का अनुपम नव सन्देश सुनाता।
-जीर्ण-शीर्ण मानव में अभिनव, जीवन-ज्योति जगाता।।

02.03.39

स्वागत (1)

(श्री जुबिली नागरी भंडार के वार्षिकोत्सव तथा रंगीली एकादशी उत्सव पर पठित जो महाराज श्री सर भैंरूसिंहजी बहादुर के.सी.एस.आई. की अध्यक्षता में हुआ था।)

(1)

स्वागत हे महाराज, गिरा के परम उपासक।
विविध नागरी-ग्रंथ-दीप्ति, भूलोक प्रकाशक।।
राज-भक्ति-रस-लीन, परम भावुक, सहृदय अति।
नाना-गुण-आगार, ज्ञान-भंडार, विपुल मति।।

(2)

स्वागत कविता-कान्त मनोहर काव्य-प्रणेता।
मूक भाव मुखरित करने वाले अभिनेता।।
छहराते जो काव्य-धार अति सरस सुशीतल।
हो जाता परितुष्ट व्यथा संतप्त महीतल।।

(3)

स्वागत वक्ता-वृंद वाणी के विज्ञ विधायक।
गुण माधुर्य, प्रसाद, ओज के नागर नायक।।
अभिधा, लक्षणा, व्यंजना शक्ति-संपन्न सुबुधवर।
सुप्त जगत को जाग्रत कर देते जो सत्वर।।

(4)

स्वागत एकदश रंगीली, होली दूती।
रस निमग्न हो जाता जिस-जिस को तू छूती।।
हो जावें सब रंग रंगीले जग के मानव।
छोड़ परस्पर द्वेष, प्रेम उपजावें अभिनव।।

(5)

स्वागत सभ्य-समाज, सभा सरसाने वाले।
स्वागत सरल-स्वभाव, प्रेम बरसाने वाले।।
स्वागत होली-पर्व, उमंगे भरने वाला।
स्वागत बसंत ऋतुराज दिव्य जग करने वाला।।

11.12.1932

स्वागत (2)

(आर्य समाज, काशी विश्वविद्यालय के वार्षिकोत्सव के कवि सम्मेलन के अवसर पर पठित, जो कविवर 'हरिऔध' जी की अध्यक्षता में हुआ था।)

स्वागत हे कविराज ! काव्य रचना में नागर,
किया आपने हिन्दी-दीपक पुनः उजागर।

कोमल-कान्त कलेवर-पद की रचना नव,
नहीं दोष दिखलाई पड़ते जिसमें लाघव।।

'बन सकती है नहीं खड़ी बोली में कविता'
तत्कालीन पंडितों का ऐसा ही मत था।

इस जन-मत को गलत सिद्ध कर दिया आपने,
हिन्दी का वह रिक्त स्थान भर दिया आपने।।

लोकमान्य वह 'प्रिय-प्रवास' हिन्दी को देकर,
उसका कोष भरा मरकत-मणियों से सुन्दर।

आज पधारे आप हमारे बीच कृपा कर,
स्वागत करता है कवि-सम्मेलन, हे कविवर !

स्वागत है कवि लोग कृपा कर आये हैं जो
अपनी मञ्जुल रचनाओं को लाये हैं जो।

स्वागत है सब लोग आपका भी परम सुहृद्वर
आये सुनने कवियों की कविताएँ सुन्दर

अमित हर्ष है हमें आपको यहाँ देखकर,
बनी सभा है आज आपके कारण सुन्दर।

स्वागत है भारत माता के प्यारे सुत सब,
हुआ सुशोभित आज आपके द्वारा उत्सव।।

कल्पने के प्रति

(1)

मधुर कल्पने ! उड़ी जा रही हो किस पथ की ओर।
तज सुरम्य, मृदु, शस्य-श्यामला, वसुन्धरा के छोर ?
वन, उपवन, सागर, सर, निर्झर, गिरिवर, सरिता कूल।
व्यक्त किए कमनीय कुसुम, तरु, लता, जलज, सुखमूल।।

(2)

व्यथित वियोग तुम्हारे सारे, शुक-सारिका, विहंग।
कालिंदी-कल-कदंब, कौमुदी, केकी, कुमुद, कुरंग
करती हो तुम मूक प्रकृति के भावों की अभिव्यक्ति।
फिर भी क्यों न तुम्हें है होती, वसुधा में आसक्ति ?

(3)

ऋषि, मुनि, कविगण और दार्शनिक, बड़े बड़े विद्वान्
पृथ्वी पर के सारे मानव देते तुमको मान।
पर तुम तो उड़ती फिरती हो द्रुत गति से उद्भ्रान्त।
घोर आपदाओं से भी तुम होती किन्तु न क्लान्त।।

(4)

ज्योतिर्मय किरीट सी लगती हो, कविता के भाल।
फिर भी जकड़ा हुआ तुम्हें है, कवि-स्वप्नों का जाल।
सुखमय जग में भी बन्दी बन कर रहने पर क्लेश।
कुण्ठित करता है क्या तुमको रात दिवस अनिमेष ?

(5)

अच्छा जाओ, क्षितिज पार से लाओ नव सन्देश।
जिससे रहे न जगती-तल पर वैर भाव लव-लेश।।
पृथ्वी-मंडल में छहरावे, प्रीति-सुधा-रस-सागर।
इसी सुधा से भरें विश्व के मानव निज उर-गागर।।

(6)

इस सागर की धाराओं को सब जग में छितरा दो।
लोभ, मोह, मद, द्वेष, क्रोध, छल, उनमें सभी बहा दो।।
उनके पवन-जल से घुलकर शान्ति लता लहरावे।
अखिल विश्व में जिससे अति ही मञ्जुलता छा जावे।।

कल्पने !

(1)

अरी कल्पने ! उड़ी जा रही हो किस पथ की ओर ?
कहीं दिखाई पड़ता है क्या आशा का कुछ छोर ?
वन, उपवन, सागर, सरिता, सर, गिरिवर-शिखर-विशाल
सबसे स्नेह छोड़कर तुम क्यों कर जाती हो बेहाल ?

(2)

कवि जन तुम ही से तो करते एकमात्र अति स्नेह,
कारण क्या छोड़े देती हो, फिर कवि-उर सा गेह ?
वायु आवरण में जाती हो, द्रुत गति से उद्भ्रान्त,
तिस पर भी न दिखाई पड़ती रंच मात्र भी क्लान्त

(3)

गगनस्थल में कर दोगी क्या, तुम नूतन रचना ?
क्षण भर हो जाएगा सच्चा क्या कवि का सपना ?
सुन्दरता के सागर में क्या लहराएगी शान्ति ?
हो जाएंगी क्या विलुप्त वे क्लान्ति और उद्भ्रान्ति ?

अप्रेल 1932

निराशा

(1)

अहह ! निराशा यामिनि, फिर तू कित चलि आई।
करने क्षीण-प्रकाश आश मम को, नीचे ! तू है इत आई।
आई है मम हृदय-स्थल पर वज्रपात करने को तू क्या ?
आई है तू श्री-हत करने मम सौभाग्य भानु को अथवा ?

(2)

कर देगी क्या नष्ट भ्रष्ट मेरी आशाएँ ?
तोड़-ताड़ डालेगी किंवा मम विचार-मालाएँ ?
शोषण कर देगी क्या मेरी शान्त्यमृत हृदयस्थल में का ?
धू धू करती सुलगा देगी चिन्तानल उसमें तू फिर क्या ?

(3)

चिन्तानल की ज्वालाएं मम देह-रक्त को पीवेंगी जब,
फिर तू मम हृदय-श्मशान में ताण्डव-नृत्य करेगी क्या तब ?
भस्मसात् हो जावेगा क्या, कल्पित सोने का घर मेरा ?
उसकी राख-राशि पर भी क्या होगा दुष्टे ! तेरा डेरा ?

(4)

धू-धू कर जल जाएगा मेरे स्वप्नों का घर,
मेरा सारा हृदय-देश बन जाएगा चिन्ताकर।
तिस पर भी न करेंगे करुणा मुझ पर यदि करुणाकर,
तब मम प्राण देह को तज, लोकापर जाएंगे सत्वर॥

13.01.1933

मधुप न छेड़ तान सुकुमार

मधुप न छेड़ तान सुकुमार
उर कलिका मलीन हो जाती,
दिखलाई पड़ती कुम्हलाती,
इठिलाती फिर नहीं दिखाती,
जो तेरा गुंजन सुन पाती,
मच जाता है हाहाकार,
मधुप ! न छेड़ तान सुकुमार।

क्लान्त वायु हर्षित हो जाता,
अखिल जगत् सुख से सो जाता,
सुप्त काव्य फिर से जग जाता,
मन में नये भाव छिटकाता,
किन्तु यही है हृदयोद्गार,
मधुप ! न छेड़ तान सुकुमार।

सुप्त वेदना जग जावेगी,
व्यथा देह में पग जावेगी,
सारी आशा भग जावेगी,
छुरी हृदय में लग जावेगी,
बन जा प्यारे तनिक उदार,
मधुप ! न छेड़ तान सुकुमार।

छलक रहा जीवन का प्याला,
जी-भर पीता हूँ मतवाला।
बहती है भावों की माला,
मेरा नाला, निपट निराला।।
कहता हूँ मैं झींक, पुकार,
मधुप ! न छेड़ तान सुकुमार।

मेरी लतिका हरी भरी है
सुन्दरता की शुभ्र सरी है,
मन-मानस की मंजु तरी है,
घोर वायु से जो न टरी है,
कर न उसे निष्ठुर निस्सार,
मधुप ! न छेड़ तान सुकुमार।

प्राण श्वास में था जो अटका,
उच्छ्वासों से जाता सटका,
मृत्यु कूप में है अब लटका,
कर दे काम जरा अरघट का,
अब भी ले तू खींच, उतार,
मधुप ! न छेड़ तान सुकुमार।

सुना सुनाकर मृदु झंकार,
करता कितनों के आहार,
लेकर सब फूलों का सार,
कर देता सब का संहार,
कर न दूसरों का अपकार,
मधुप ! न छेड़ तान सुकुमार।

11.11.1932

अन्तस्तल मुकुर

(1)

हृदय-वीणा के कोमल तार,
परस पाकर तव कर नाथ।
छेड़ने लगे सुरीली तान,
नाचने लगी कल्पना साथ।।

(2)

मुकुर है अन्तस्थल माँझ,
पड़ा था अपरिष्कृत, बेकाम।

पड़ी जो उसमें तव कर ज्योति,
हुआ तल उसका फिर से दिव्य।।

(3)

कल्पना का अति अनुपम नाच,
हृदय वीणा गुण की झङ्कार।
पड़ी उन सबकी उस पर छाप,
अलौकिक उठा नाद प्रतिनाद।

(4)

थिरकने लगता था वह किन्तु,
लगाते ज्यों वीणा के हाथ।
न देता था केवल प्रतिबिम्ब,
निनादित भी करता था तान।

(5)

थिरकते भिड़ा तार से आह,
तार डाले सब उसने मोड़।
टूट वह गया स्वयं भी नाथ,
और नहीं सका उसे मैं जोड़।।

(6)

नहीं वह पहले की सी तान,
नहीं वह पहले का प्रतिबिम्ब।
निकलती है मोटी-सी राग,
उसी में बस मेरा जीवन।।

(7)

करोगे कृपा जरा सी नाथ,
जरा सीधे कर दोगे तार।
जोड़ दोगे टूटा दर्पण,
लगे जिससे पड़ते प्रतिबिम्ब।

(8)

मिले कण-कण में वह संगीत,
देह में फिर से आएं प्राण।
चमक जाए फिर मुख पर ओज,
बनें हम जिससे फिर क्रियमाण।।

05.03.1939

प्रिय-प्रभात

("ओसवाल" वर्ष 15 अंक 9 में प्रकाशित)

(1)

विगत निशि, निशि-पति-मलिन-मुख हो रहा,
कान्ति-युत उडुगण-अवलि श्रीहत हुई।
व्योम, जल, थल से हटा तम आवरण,
दिव्य आभा से गगन पूरित हुआ।

(2)

त्रिविध मारुत लोक में प्रसरित हुआ,
लोक-निद्रा त्याग जाग्रत हो उठा।
देखकर प्रकृतिच्छटा लीलामयी,
ध्यान सारा स्वतः उस में लग गया।

(3)

निरख कर उड़ते खगों को गगन में,
हैं हमारे दृग-युगल खग बन रहे।
जलज जल-सर में मनोरम हैं उगे,
दग्ध-उर की जलन सारी मिट गई।।

(4)

सुमन-सुरभित वायु संचारित हुआ,
चर-अचर सब सुमन बन खिल उठे।

श्रवण करके कोकिला की कूक कल,
सकल पुर-जन हृदयतन्त्री बज उठी।

(5)

गान मधुपों का मधुरिमा ढालता,
मन-सुमन है सहज आकर्षित हुआ।
विविध विहंगों के मनोरम नाद से,
सकल दिङ्मंडल निनादित हो रहा।।

(6)

कुसुम-लतिकाएँ कुसुम बरसा रहीं,
कलित कलिकाएँ सरस सरसा रहीं।
सकल पादप पल्लवित हैं, हो रहे,
हरित दूर्वा हरित मन करती सहज।।

(7)

स्वच्छ जल पूरित सरोवर में ललित,
विपुल वर्णों के सरोरुह लस रहे।
उठ रही जल में तरंगें वेग से,
मनुज मानस स्वतः उद्वेलित हुआ।

(8)

देखकर चारों दिशाओं में हरा,
मन स्वतः क्यों हो न जाये हरा भरा ?
शुभ्र हीरक सम जटित नीहार-कण,
द्विगुण शोभित है समस्त हरीतिमा।

(9)

देख उषा की मनोरम लालिमा,
हट गई है निविड़ तम की कालिमा।
पूर्व दिशा ने क्या सँवारा साज है।
स्वपति रवि से मिलन भी तो है अभी।।

(10)

देखकर निर्झर सरों की मञ्जुलता,
निरख कर वैभव सकल वनदेश का।
लख विभा आकाश की अति शोभना,
स्फूर्ति तन में स्फुरित होती नूतना।।

(11)

परस पाकर, परम पावन पवन का,
सब चराचर जन्तु पुलकित हो उठे।
निरख कर निरुपम प्रभा नैसर्गिकी,
नित्य नूतन नेत्र सुख पाने लगे।

(12)

यों सँवारा प्रकृति ने है रूप निज,
अमित सुन्दर है बना भूलोक सब।
देखकर यह अतुलनीय मनोज्ञता,
हृदय भर जाता अतीव प्रमोद से।।

कविते !

("ओसवाल नवयुवक" तथा "राजस्थानी गौरव" वर्ष 1 अंक 1 में प्रकाशित)

भावों की हे मधुर मालिके ! वाग्देवी की मनहर बीन।
कवि मानस की मंजु मृणालिनि, सुषमा के सागर की मीन।।1।।

प्रकृति-मंच की सुघड़ नायिके, मूक प्राणियों की आधार।
हे कल्पना-कुंज की स्वामीनि, हे सौन्दर्य जगत् की द्वार।।2।।

जन-मन-मानस की मरालिनी, भाव-सुमन-सुमधुर मकरन्द।
अखिल विश्व-प्रांगण में कविते ! नित्य विहरती तू स्वच्छन्द।।3।।

गाती जीवन जागृति गीत, होते जिससे सभी अभीत।
प्राण विसर्जन करने को बलिवेदी पर, सुख से सह प्रीत।।4।।

कल-कल निनादिनी नदियों में तू बैठ गान जो गाती है।
उससे सारे जग में अनुपम मंजुलता छा जाती है।।5।।

मेरे भी तन के कण-कण में जो गायन भर देती है
उससे मेरी आश-वल्लरी थिरक हिलोरें लेती है।।6।

शून्य निशा की ज्वलित ज्योत्स्ने ! अपनी विभा दिखा जाओ।
कर प्रवेश मम क्लान्त हृदय में, जीवन ज्योति जगा जाओ।।7।।

हो म्रियमाण पड़े है हम सब, आस तुम्हारी एक रही।
जब जब विपद पड़ी भारत पर, तुमने उसकी बाँह गही।।8।।

तेरे ही कारण जग में है, पूजे जाते तुलसी, सूर।
तेरे ही प्रसाद से जग में, बजता है कबीर-यश तूर।।9।।

भूषण बने 'काव्य भूषण', तुझसे कर वीर वीरता गान
जिसका रस आस्वादन कर मुर्दों में आ जाती जान।।10।

देव, बिहारी, भारतेन्दु कवि, तव प्रसाद से हुए अमर।
तव प्रताप से हो जाते हैं कायर लड़ने को तत्पर।। 11 ।।

पत्थर से कठोर कलेजे, बनकर मोम पिघल जाते
तव प्रभाव से बड़े-बड़े वीरों के हृदय दहलजाते
रामायण, महाभारत, गीता तूने हमें दिये है दान,
जिनके कारण अब भी होता, जग में भारत का सम्मान।।12।।

जब-जब हम लोगों ने छोड़ा, अपना धर्म कर्म अरु ज्ञान।
तब तब तुमने ही तो कविते ! किया हमारा अभ्युत्थान।।13।।

नहीं उऋण हो सकते तुझसे, किन्तु माँगते यह वरदान।
फिर से भारत प्राप्त करे सब, खोया हुआ आत्म-सम्मान।।14।।

भारत-माता के सब सुत मिल, कर दे मातृभूमि-उत्कर्ष,
जिससे सारा जगत् कहे फिर, "जय-जय प्यारे भारतवर्ष"।।15।।

दीपावली

("वीरपुत्र" साप्ताहिक के वर्ष 1 अंक 10 ता : 03.11.46 ई. में प्रकाशित)

(1)

नीरव निशि में निविड़ तिमिर से, नभ भूतल तमसावृत्त
तारक गण लगते हैं मानो, सर में सरसिज विकसित।
कृष्ण वसन परिधान किए, या निशा-सुंदरी शोभित,
ग्रथित हुए जिसके वस्त्रों में, विविध रत्न हैं अगणित।।

(2)

दीप-अवलि की शुभ्र छटा है, छाई वसुधा तल,
चन्द्र ज्योत्स्ना से भी जिसकी, आभा है मंजुलतर।
दीप ज्योति लख लुप्त हुआ, नभ तल से त्वरित सुधाकर,
मीलित हुए कान्त सुषमा लख, पंकज दल कुसुमाकर।।

(3)

हर्ष तरंगों से आलोड़ित, मन मानस हैं सबके।
सब साधन प्रस्तुत हैं घर-घर दीपावली उत्सव के,
बालवृद्ध-युवकों के उर में नव-उत्साह भरित है,
गान, वाद्य हर्ष ध्वनि रव से भूमंडल पूरित है।।

(4)

आओ, हम भी इस अवसर पर निज मन मैल बहाएँ।
जाति-पाँति का भेद मिटाकर सबको गले लगाएँ।
पारस्परिक कलह सब तजकर, बिखरी शक्ति मिलाएँ,
ज्ञानप्रदीप लिए हम कर में, आगे कदम बढ़ाएँ।।

"जैन-जवाहिर" के प्रति शुभ संदेश

("जैन जवाहिर" वर्ष 1 अंक 2 (मार्च सन् 47 ई.) में प्रकाशित)

"जैन जवाहिर", जगती में नव जीवन ज्योति जगाओ।
कलह, अविद्या, द्वेष आदि सब दुर्गुण दूर भगाओ।।
भेद-भाव सब दूर करो, सबको एकत्र मिलाओ।
विश्व बन्धुता पाठ पढ़ा, सुख शांति सुधा बरसाओ।।

अछूत

जो गौ-भक्षक हैं और नित हिन्दू समाज पै घात लगाई।
सीस नवाइकै पाँव परै, दिखरावै, तिन्हैं बहुतै लघुताई।।
किन्तु अनाथ जो हिन्दू अहैं, हमरे हित देत जो प्रान गँवाई।
जानत हो फिर ना इन दीनन, कैसे अछूतन छूत समाई।।

अछूत की आह

सुनो हे प्रभु ! अछूत की आह !

व्याप रही तन के कण-कण में अति ही भीषण दाह।
नाव धर्म की फ़ँसी पंक में नाविक बेपरवाह।
चारों ओर आपदाओं में देख न पड़ती राह।
तिस पर भी हम दीनों का तो कहीं नहीं निर्वाह।
आकर बेग उबारो तारक, दो हमको उत्साह।।

सावण (राजस्थानी भाषा)

बरवै

सावण सुंदर आयो, विकस्यो गात।
घणा सुहाणा लागै, अब दिन-रात॥1॥

जग में छायो न्यारो, नवल उछाह।
हर्‌या भर्‌या सै दीसै, घर, बन, राह॥2॥

काला काला बादळ, भर्‌यो अकास।
उमड़-घुमड़ कर गाजै, घणै हुलास॥3॥

चम-चम चमकै बिजली, रिमझिम मेह।
लागी झड़ी तड़ातड़, काँपे देह॥4॥

बोलै सर में दादर, बन में मोर।
करता नीडाँ पंखी, किलकिल घोर॥5॥

थर-थर धूजै रूँखां, डाल्यां पात।
ठंडी-ठंडी लागै, डाँफर वात॥6॥

विरखा थमगी, चाल्या देखण बाग।
मिरगा फुदकै, पंछी गावै राग॥7॥

इन्दर धनुष अकासाँ, मिलै न छोर।
जीव चराचर सारा, हरस विभोर॥8॥

खेतां जावै सगळां, बिरध, किसोर,
खावै मधुर मतीरा, काचर बोर॥9॥

नार्‌यां धान पीसै, गावै सुन्दर गीत।
आप-आपरै कुळ री बरणै रीत॥10॥

धीमी, धीमी, भीनी चालै भीनी वात।
जल में उठै हिलोरा, पुलकै गात॥11॥

निडर जिनावर फिरता, रोही खेत।
हरी घास नित खावै राखै हेत॥12॥

बालक झूला झूलै, परम प्रमोद।
घर में मां दुलरावै, ले सिसु गोद।।13।।

हाली हल ले चाल्या, निज-निज खेत।
गायाँ रोही चाली, काळी सेत।।14।।

दूर-दूर सूं चमकै धोरां रेत।
जाणै दीसै ऊभो कंचन-खेत।।15।।

घड़िया ले पणिहार्यां, चाली कूप।
पाणी भरै जिक्यां रै आगै रूप।।16।।

मीठी-मीठी रागाँ गावै गीत।
जाणै आयो सावण, घर जग जीत।।17।।

रसिक मंडली गावै, राग मल्हार।
नाचे मोर, पपीहा, अति सुखकार।।18।।

बीर-बहूटी चालै, सुन्दर चाल।
आँख्यां हरखित हुवै, देख रंग लाल।।19।।

फूल खिल्या बागाँ मैं, नाना रंग।
नई छटा आई धरती मैं, सावण संग।।20।।

सोरठा

सावण रो गुणगान, कर नहिं कोई पूरो सकै।
सब मासाँ परधान, जंगळ में मंगल करै ।।21।।

रुपियो (राजस्थानी भाषा)

(कुंडलिया)

(1)

रुपियो धरती में हुयो, मिनखां रो सिरदार।
रुपियै रै दरसण बिना, कारज पड़ै न पार।।
कारज पड़ै न पार, खूब चावै सिर पटकै।
जिता कुटुंबी यार, न कोई नेड़ा फटकै।।

दुनिया भर रो मैल, एक रुपियै सूं धुपियो।
घणां गुणां री खाण, हुयो धरती में रुपियो।।

(2)

रुपियो रंग रो ऊजळो, करै मधुर झणकार।
हाथ लियां सूं देह में उपजै नेह अपार।।
उपजै नेह अपार, राम ज्यूं मिलै भगत नै।
रुपियै री ही लगन, रात-दिन लगी जगत नै।।
औगण रौ भंडार, इयै रे लारे छुपियो।
छूमंतर छण करै, अजब जादूगर रुपयो।।

(3)

रुपियो पल्ले मैं नहीं, गयो मान सतकार।
बात न पूछै गोठिया, भाई-बंध हजार।।
भाई बंध हजार, देख कर रस्तो नापै।
समझावां मन लाख, नहीं पिण मनस्यां धापै।।
घणा दुखां रो मूळ, नहीं है घर में रुपियो।
घणी मौड़ मनवार, लेगयो सागै रुपियो।।

□ □ □

विभिन्न समाचार पत्रों में प्रकाशित चरित्रनायक द्वारा दिये गये न्यायालीय निर्णयों का संक्षेप

Civic election set aside

Express News Service (Times of india. 19-1-1963)

SIKAR, Jan. 18.- The election of Mr. Kamruddin (Congress) to the Sikar Municipal Board from Ward 10 has been set aside by Mr. S.C. Kochar, Senior Civil Judge.

The election was challenged by Mr.M.K. Mishra, a defeated candidate, who had alleged corrupt practices in his petition against Mr. Kamruddin.

7 Years' R.I. For Making Counterfeit Coins

"The Times of India" News Servics (Times of India, 26.2.1963)

SIKAR, February 25 : Mr. S.C. Kochar, Additional Sessions Judge, on Saturday, sentenced Sohan Lal to seven years' rigorous imprisonment and to pay a fine of Rs.500 or in default to undergo further six months rigorous imprisonment on the charge of manufacturing counterfeit coins.

He was also sentenced to seven years' rigorous imprisonment for being in possession of 300 pieces of fouranna counterfeit coins. Both sentences will run concurrently.

Villager jailed for 7 years

From our correspondent (Hindustan Times, 4.3.1963)

Sikar, March 3-Mr Shikhar Chandra Kochar, Additional Sessions Judge, yesterday sentenced Chanda Lal of Srimadhopur to seven years' rigorous imprisonment and a fine of Rs.100 for culpable homicide not amounting to murder.

The two co-accused, Rameshwar Lal and Mithan Lal, father and brother of Chanda Lal were acquitted.

In July last, Rameshwar lal and Prem Sukh quarrelled when Chanda Lal allegedly struck a lathi blow on Prem Sukh who was seriously injured.

Prem Sukh, it is further alleged, succumbed to injuries in Jaipur hospital after two days.

Jail for hurting religious feelings

Express News service (Indian express, Delhi- 9.3.1963)

SIKAR, March 8-The Additional Sessions Judge, Mr. S.C. Kochar today sentenced Babu Lal of Fatehpur to one year's rigorous imprisonment on the charge of outraging the religious feeling of the Jain community.

He was also sentenced to two months rigorous imprisonment on another charge. Both the sentences shall run concurrently.

Villager Gets Life Term For Murder

"The Times of India" News Servics (Times of India, Delhi- 13.3.1963)

SIKAR, March 12 : Mangu a resident of Sanwalpur village, has been sentenced by the Additional Sessions Judge, Mr. S.C. Kochar, to imprisonment for life on the charges of murdering Mulia (12) of the same village on August 19

हत्या के मामले में आजीवन कारावास

दैनिक हिन्दुस्तान, दिल्ली, 13.3.1963

सीकर, इस जिले के अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश श्री शिखरचन्द्र कोचर ने सांवलपुरा गांव के मांगू नामक एक गूजर को उसी गांव के मूलिया गूजर की हत्या के आरोप में आजीवन कारावास की सजा दी है।

मांगू के खिलाफ यह आरोप था कि उसने जब मूलिया एक विवादास्पद खेत में जानवर चरा रहा था, तब तलवार से उसकी हत्या कर दी। खेत के अधिकार के बारे में मांगू तथा मूलिया में विवाद चल रहा था।

FOUR ACQUITTED

"The Times of India" News Service (Times of India -30.11.1963)

SIKAR, November 29 : Mr. S.C Kochar, Additional Session Judge, yesterday acquitted Gopal and Natha of Bhera village in Sikar district of the charge of murdering a woman on May 6.

Hanuman and Baloo, who had been charged with injuring the deceased's son, were also acquitted.

Two acquitted of homicide charge

Express News Service (The Hindustan Times, 6.3.1964)

SIKAR, March 5- Mr. S.C. Kochar, Additional Sessions Judge, yesterday acquitted Sawal Singh, a student of class X, and his father, Keshar Singh, residents of village Dhijpur in this district of the charges of arson and culpable homicide not amounting to murder.

The prosecution alleged that the accused set fire to the house of Hanuman of the same village on August 24 last. The fire reduced the house to ashes and caused injuries to Hanuman's 10 month old daughter, who died next day.

The court held that the prosecution evidence was full of contradictions and had miserably failed to substantiate the charges against the accused.

All Accused In Village Murder Case Acquitted

"The Times of India" News Service (The times of India, 14.11.1964)

SIKAR, All the 13 accused, including three woman, were acquitted on thursday in the Magloon village on murder case by Mr. S.C. Kochar, Additional Sessions Judge. They were given the benefit of the doubt. According to the prosecution, they had allegedly killed Balwant, a resident of Magloona village, with lathis on December 10 last.

Seven years'RI for nine villagers

From our Correspondent (The Hindustan times, 26.1.1965)

Sikar, Jan. 24- The Additional Sessions Judge, Mr. S.C. Kochar yesterday sentenced all the nine accused in the Rasulpur village murder case to seven years' rigorous imprisonment.

Ganesha and eight other residents of Rasulpur were sentenced for murdering Nanda of the same village on May 14.

हत्या के आरोप से चार व्यक्ति बरी

हिन्दुस्तान दैनिक 1.12.1963

सीकर-जिले के अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश श्री शिखरचन्द्र कोचर ने भेरा गाँव के गोपाल, नाथा, बाल और हनुमान नामक चार गूजरों को उसी गाँव की एक महिला की हत्या तथा उसके दो बेटों को घायल कर देने के आरोपों से बरी कर दिया।

इस्तगासे के अनुसार अभियुक्तों ने गत 6 मई को सुखा और मुखा गूजरों को लाठियों से पीटा। उनकी माँ ने बीचबचाव किया किन्तु उस पर भी अभियुक्तों ने लाठियों से वार किया, जिससे वह दो दिन बाद मर गई।

न्यायाधीश महोदय ने अभियुक्तों को मुक्त करते हुए अपने निर्णय में लिखा है कि अभियोग पक्ष असंदिग्ध रूप से अभियोग सिद्ध करने में असफल रहा है।

गो-हत्या के अभियोग में 3 को 4-4 साल की कैद

"हिन्दुस्तान" दैनिक 2.12.1963

सीकर, स्थानीय अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश श्री शिखरचन्द्र कोचर ने गौ-हत्या के अभियोग में भिराणा गाँव के जयसिंह, मानसिंह और गोविन्द सिंह नामक तीन राजपूतों को प्रत्येक को 4 साल की सख्त कैद और 1000 रु. जुर्माने की सजा दी है। जुर्माना अदा न करने पर एक-एक साल की और सख्त कैद भुगतनी होगी।

इस मुकदमें के दो अन्य अभियुक्त भैरुसिंह तथा अर्जुनसिंह को बरी कर दिया गया।

इस्तगासे के अनुसार अभियुक्तों ने 12 जनवरी, 1963 भिराणा के ही मेघसिंह राजपूत की गाय को लाठियों से इतनी बुरी तरह मारा कि वह मर गई।

गाय को इसलिए मारा कि वह अभियुक्तों के खेत में घुसकर उनकी फसलों को बर्बाद करती थी।

अभियुक्त गाय की पूँछ को लेकर गौहत्या के पाप से मुक्त होने के लिए गंगाजी (हरिद्वार) गए थे और पण्डों की शहादत के आधार पर ही उनके विरुद्ध अभियोग सिद्ध हो सका।

प्रमाणाभाव में कथित अभियुक्त बरी

"हिन्दुस्तान" दैनिक 6.3.1964

सीकर, जिले के, अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश श्री शिखरचन्द्र कोचर ने धीजपुर गांव के किशोरसिंह और उसके पुत्र सवाईसिंह को, एक आवास-गृह को आग लगाने तथा उससे एक 10 मास की लड़की के झुलस कर मर जाने के आरोपों से, बरी कर दिया।

इस्तगासे के अनुसार अभियुक्तों ने गत 24 अगस्त को धीजपुर गाँव के हनुमान मीना के कच्चे मकान में आग लगा दी थी। उस समय हनुमान और उसकी पत्नी अपने खेत में गए हुए थे तथा घर में एक 10 मास की बालिका सो रही थी। आग से मकान जल कर राख हो गया तथा बालिका बुरी तरह झुलस गई जिससे वह दूसरे दिन निकटस्थ खाटू डिस्पेन्सरी में मर गई।

सवाईसिंह पास ही रींगस कस्बे में 10 वीं कक्षा में पढ़ता है। विद्यालय के उपस्थिति रजिस्टर तथा अध्यापक की गवाही से यह स्पष्ट हो गया कि सवाई सिंह घटना के समय विद्यालय में मौजूद था।

इस प्रकार जज साहब ने प्रमाणाभाव में दोनों अभियक्तों को बरी कर दिया।

सीकर के तीन व्यक्ति दण्डित

(नवभारत टाइम्स दैनिक, 10.5.1964)

सीकर, जिले के अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश श्री शिखरचन्द्र कोचर ने रिनाऊ गाँव के मेघा, भूरा और तेजा तीन जाटों को उसी गाँव में मन्ना जाट की हत्या की चेष्टा के आरोप में बरी कर दिया।

इस्तगास के अनुसार अभियुक्तों ने 17 सितम्बर 1962, जब मन्ना खेत से आ रहा था, रास्तें में उसे घेर लिया और लाठियां लेकर उस पर टूट पड़े। बाद में कुछ लोगों ने बीच में पड़ कर मन्ना को पिटने से बचाया।

जज साहब ने अपने निर्णय में कहा कि इस्तगासा अभियुक्तों के खिलाफ हत्या की चेष्टा का अभियोग सिद्ध करने में तो असफल रहा है किन्तु मन्ना को पीटने का जुर्म साबित होता ही है। अतः हरेक को छह-छह मास की सख्त कैद तथा 200-200 रु. जुर्माने की सजा दी जाती है।

"हिन्दुस्तान" दैनिक 18.8.1964

सीकर, जिले के अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश श्री शिखरचन्द्र कोचर ने खातीवास के निवासी भक्तसिंह को उसी गाँव के ज्ञानसिंह नामक व्यक्ति की हत्या के अपराध में 5 वर्ष की सख्त कैद तथा 1000 रु. के जुर्माने की सजा दी है।

"हिन्दुस्तान" दैनिक 27.11.1964

सीकर, जिले के अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश श्री शिखरचन्द्र कोचर ने लछमनगढ़ थाने के अंतर्गत माधोपुरा गाँव के गोपाल, रामेश्वर, गोरु और जैसा नामक चार व्यक्तियों को, उसी गाँव के निवासी श्यामा की हत्या के आरोप में आजीवन कारावास की सजा दी है। इस मुकदमें में 9 अभियुक्तों को बरी कर दिया गया है।

हत्या के आरोप से बरी

("दैनिक हिन्दुस्तान" 3.12.1964)

सीकर, जिले के अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश श्री शिखरचन्द्र कोचर ने कोटड़ी गाँव के पाबूदान सिंह को चींचडोली गाँव के एक अवकाश प्राप्त सैनिक कालूसिंह की हत्या के आरोप में बरी कर दिया।

इस्तगासे के अनुसार 12 सितम्बर 1962 को कालूसिंह, नाथूराम और पाबूदान सिंह तीनों ही झुंझनूं पेंशन लेने गए थे। पेंशन लेने के बाद वे रात्रि को रेलगाड़ी पकड़ने के लिए जब शहर से स्टेशन आ रहे थे, तब रास्ते में जंगल में नाथूराम और पाबूदानसिंह ने कालूसिंह का उसी की धोती से गला घोट डाला जिससे वह मर गया।

नाथूराम को इस मामले में पहले ही आजीवन कारावास की सजा दी जा चुकी है। पाबूदान सिंह पहले सुलतानी गवाह बन गया था। लेकिन बाद में मुकर जाने उस पर अब मुकदमा चलाया गया।

भाई की हत्या के अभियोग से बरी

पुलिस कर्मचारी की भर्त्सना (हिन्दुस्तान दैनिक 24.12.1964)

सीकर, जिले के अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश श्री शिखरचन्द्र कोचर ने झारली गाँव के रामदानसिंह नामक एक अभियुक्त को अपने छोटे भाई रेवत सिंह की हत्या के आरोप में बरी कर दिया।

इस्तगासे के अनुसार, गत अप्रैल में रामदानसिंह और उसके पुत्र नारायणसिंह ने रेवतसिंह को अपने शामलाती मकान की छत पर चारा रखने के बारे में उत्पन्न विवाद पर लाठियों से मार डाला। नारायणसिंह बाद में फरार हो गया।

न्यायाधीश महोदय ने अभियुक्त को बरी करते हुए इसका सारा दोष तफतीश करने वाले पुलिस कर्मचारी श्री सज्जनसिंह पर डाला है। उन्होंने लिखा है कि तफतीस में जान बूझकर ऐसी खामियाँ रख दी गई जिससे मुजरिम पर आरोप सिद्ध नहीं हो सका है। फैसले की नकल राज्य के इन्स्पेक्टर जनरल पुलिस को भेजकर श्री सज्जनसिंह के खिलाफ विभागीय कार्रवाई के लिए लिखा गया है।

गबन के अभियोग में एक खजांची को 4 साल की सख्त कैद

("हिन्दुस्तान" दैनिक 4.3.1965)

सीकर, जिले के अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश श्री शिखरचन्द्र कोचर ने सीकर जिले के शिक्षा विभाग के एक भूतपूर्व खजान्ची का 6538 रु. के गबन के आरोप में 4 साल की सख्त कैद तथा 2000 रु. जुर्माने की सज़ा दी है। जुर्माना न देने पर एक साल की और कैद भुगतनी होगी।

अभियुक्त को सजा देते हुए न्यायाधीश ने निरीक्षक तथा उप-निरीक्षक शिक्षणालय और तफतीश करने वाले पुलिस अधिकारियों की भारी भर्त्सना की है तथा उनकी असावधानी के कारण इतनी बड़ी रकम गबन हुई बताई गई है।

निर्णय की एक प्रतिलिपि राज्य सरकार के मुख्य सचिव के पास भेजकर उक्त अधिकारियों के खिलाफ आवश्यक विभागीय कार्रवाई करने के लिए लिखा गया है।

हत्या के आरोप से बरी

("हिन्दुस्तान" दैनिक 30.3.1965)

सीकर, जिले के अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश श्री शिखरचन्द्र कोचर ने खोरा गांव के केशरसिंह तथा 6 अन्य अभियुक्तों को उसी गांव के डूंगसिंह की हत्या के आरोप में बरी कर दिया। इस्तागासे के अनुसार गत 15 जून को

अभियुक्तों तथा डूंगसिंह और उसके दो भाइयों में अपने सामलाती मकान के दरवाजे के प्रश्न पर झगड़ा हो गया और अभियुक्तों ने डूंगसिंह वगैरा को लाठियों से मारा-पीटा जिससे वे घायल हो गए। डूंगसिंह की कुछ दिनो बाद सीकर अस्पताल में मृत्यु हो गई।

विद्वान न्यायाधीश ने अपने निर्णय में कहा है कि इस्तगासा अपराधियों के खिलाफ आरोप सिद्ध करने में बिल्कुल असफल रहा है।

तीन भाई हत्या के मुकदमे में बरी

("हिन्दुस्तान" दैनिक 19.6.1965)

सीकर, जिले के अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश श्री शिखरचन्द्र कोचर ने नीमा की ढाणी गाँव के तीन भाई सांवरा, पीथा और नाथू को उसी गाँव के घड़सी जाट का गत वर्ष जनवरी में की गई हत्या के आरोप से बरी कर दिया।

अभियोग पक्ष के अनुसार अभियुक्तों ने घड़सी की इसलिए हत्या कर दी कि मृतक का उनकी माँ से नाजायज सम्बन्ध था।

अभियुक्तों को घड़सी को साधारण चोटें पहुचाने के आरोप में प्रत्येक को 6-6 मास की सख्त कैद और 500 रु. जुर्माने की सजा दी गई है।

हत्या के अभियोग में आजीवन कारावास

(नव भारत टाइम्स, 8.12.1965)

चुरू के अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश श्री शिखरचन्द्र कोचर ने महावीर ढोली को श्री हरचंद जाट की हत्या के अपराध में आजीवन कारावास की सजा दी।

24 दिसम्बर 1964 को चुरू जिले के ग्राम पीथीसर में महावीर ने श्री हरचंद जाट को उसके खेत में जान से मार दिया था। महावीर व श्री हरचंद इस ग्राम के निवासी थे।

महावीर ने हत्या करने से इंकार किया परन्तु प्रमाणों के आधार पर हत्या का आरोप सिद्ध हो गया। इस कारण अभियुक्त को आजीवन कारावास का दंड दे दियां गया। बिना लाइसेंस हथियार रखने के आरोप में इसी न्यायालय ने महावीर को एक वर्ष की कड़ी कैद की सजा भी दी।

चुरू न्यायाधीश द्वारा 7 साल की एवं एक हजार रुपये जुर्माने की सजा,

(जटिलता, चुरू 26.9.1966)

चुरू (डाकसे) ज्ञात हुआ है चुरू के अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश श्री शिखरचन्द्र कोचर ने यहाँ के दयानन्द व धनपत सेवग के खिलाफ धारा 308 (2) ताजीराते हिन्द के अन्तर्गत 7 साल की सख्त सजा एवं एक हजार रुपया का जुर्माना सुनाया। माननीय विद्वान न्यायाधीश ने दयानन्द मुलजिम पर धारा 323 के आरोप में 3 माह की सख्त सजा का फैसला 20 सितम्बर को सुनाया था।

पुलिस इस्तगासा के अनुसार 6 व्यक्तियों ने दिनांक 24-4-65 को रेल्वे स्टेशन के सामने सुरेश्वर शुक्ला को लाठियों से मारपीट की जिससे शुक्ला का देहान्त हो गया। मृतक को बेहोशी की हालत में तांगे में डालकर पी.पी. के घर के सामने डाल दिया। बचाव पक्ष की ओर से श्री महावीर प्रसाद एडवोकेट एवं पुलिस की ओर से श्री विश्वम्भरदयाल गुप्ता ने पैरवी की।

हत्या के आरोप में चार व्यक्तियों को कारावास

(राजस्थान पत्रिका, 6.12.1967)

चुरू, जिले के अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश श्री शिखरचन्द्र कोचर ने राजगढ़ तहसील के गांव गालड़ में गत वर्ष हुई नरसी की हत्या के आरोप में चार अभियुक्त गौरू, सहीराम, ठद्दाराम व रामलाल को आजीवन कारावास का दंड दिया है।

शेष तीन अभियुक्त काशी, पूरा व मीवा को न्यायाधीश ने रिहा कर दिया है।

अभियुक्तों की तरफ से मोहर सिंह राठौड़ अधिवक्ता व राज्य सरकार की तरफ से पी.पी. कानदान व विशम्बरदयाल अधिवक्ता ने पैरवी की थी।

अभियुक्तों तथा डूंगसिंह और उसके दो भाइयों में अपने सामलाती मकान के दरवाजे के प्रश्न पर झगड़ा हो गया और अभियुक्तों ने डूंगसिंह वगैरा को लाठियों से मारा-पीटा जिससे वे घायल हो गए। डूंगसिंह की कुछ दिनो बाद सीकर अस्पताल में मृत्यु हो गई।

विद्वान न्यायाधीश ने अपने निर्णय में कहा है कि इस्तगासा अपराधियों के खिलाफ आरोप सिद्ध करने में बिल्कुल असफल रहा है।

तीन भाई हत्या के मुकदमे में बरी

("हिन्दुस्तान" दैनिक 19.6.1965)

सीकर, जिले के अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश श्री शिखरचन्द्र कोचर ने नीमा की ढाणी गाँव के तीन भाई सांवरा, पीथा और नाथू को उसी गाँव के घड़सी जाट का गत वर्ष जनवरी में की गई हत्या के आरोप से बरी कर दिया।

अभियोग पक्ष के अनुसार अभियुक्तों ने घड़सी की इसलिए हत्या कर दी कि मृतक का उनकी माँ से नाजायज सम्बन्ध था।

अभियुक्तों को घड़सी को साधारण चोटें पहुचाने के आरोप में प्रत्येक को 6-6 मास की सख्त कैद और 500 रु. जुर्माने की सजा दी गई है।

हत्या के अभियोग में आजीवन कारावास

(नव भारत टाइम्स, 8.12.1965)

चुरू के अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश श्री शिखरचन्द्र कोचर ने महावीर ढोली को श्री हरचंद जाट की हत्या के अपराध में आजीवन कारावास की सजा दी।

24 दिसम्बर 1964 को चुरू जिले के ग्राम पीथीसर में महावीर ने श्री हरचंद जाट को उसके खेत में जान से मार दिया था। महावीर व श्री हरचंद इस ग्राम के निवासी थे।

महावीर ने हत्या करनें से इंकार किया परन्तु प्रमाणों के आधार पर हत्या का आरोप सिद्ध हो गया। इस कारण अभियुक्त को आजीवन कारावास का दंड दे दियां गया। बिना लाइसेंस हथियार रखने के आरोप में इसी न्यायालय ने महावीर को एक वर्ष की कड़ी कैद की सजा भी दी।

चुरू न्यायाधीश द्वारा 7 साल की एवं एक हजार रुपये जुर्माने की सजा,

(जटिलता, चुरू 26.9.1966)

चुरू (डाकसे) ज्ञात हुआ है चुरू के अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश श्री शिखरचन्द्र कोचर ने यहाँ के दयानन्द व धनपत सेवग के खिलाफ धारा 308 (2) ताजीराते हिन्द के अन्तर्गत 7 साल की सख्त सजा एवं एक हजार रुपया का जुर्माना सुनाया। माननीय विद्वान न्यायाधीश ने दयानन्द मुलजिम पर धारा 323 के आरोप में 3 माह की सख्त सजा का फैसला 20 सितम्बर को सुनाया था।

पुलिस इस्तगासा के अनुसार 6 व्यक्तियों ने दिनांक 24-4-65 को रेल्वे स्टेशन के सामने सुरेश्वर शुक्ला को लाठियों से मारपीट की जिससे शुक्ला का देहान्त हो गया। मृतक को बेहोशी की हालत में तांगे में डालकर पी.पी. के घर के सामने डाल दिया। बचाव पक्ष की और से श्री महावीर प्रसाद एडवोकेट एवं पुलिस की और से श्री विश्वम्भरदयाल गुप्ता ने पैरवी की।

हत्या के आरोप में चार व्यक्तियों को कारावास

(राजस्थान पत्रिका, 6.12.1967)

चुरू, जिले के अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश श्री शिखरचन्द्र कोचर ने राजगढ़ तहसील के गांव गालड़ में गत वर्ष हुई नरसी की हत्या के आरोप में चार अभियुक्त गौरू, सहीराम, उद्दाराम व रामलाल को आजीवन कारावास का दंड दिया है।

शेष तीन अभियुक्त काशी, पूरा व मींवा को न्यायाधीश ने रिहा कर दिया है।

अभियुक्तों की तरफ से मोहर सिंह राठौड़ अधिवक्ता व राज्य सरकार की तरफ से पी.पी. कानदान व विशम्बरदयाल अधिवक्ता ने पैरवी की थी।

अजाड़ी के चार अपराधियों को आजीवन कारावास

(राजस्थान पत्रिका, जयपुर 21.8.1968)

झुंझुनूं 20 अगस्त, जिले के सत्र न्यायाधीश शिखरचन्द कोचर ने अजाड़ी ग्राम के श्रवण, कुमार, सुगनाराम, भगवान राम और लालचन्द को आजीवन कारावास का दण्ड दिया है।

इन्होंने गत 25 जून को कार्य करते समय गोरखराम अजाड़ी के खेत में एक हाली का कत्ल कर दिया था।

अपराधियों की ओर से गिरधर गोपाल भार्गव और प्रतिवादी की ओर से गणेशनारायण शर्मा ने पैरवी की।

सम्मतियाँ

(1)

आपका पत्र मिला। जानकर प्रसन्नता हुई कि आप "समाज रत्न" श्री शिखरचन्दजी कोचर के संवंध में पुस्तक प्रकाशन करने जा रहे है। ये कार्य बहुत ही अच्छा है।

उनका हमारे समुदाय से बहुत ही करीब का संबंध था। और पू. पंजाब केसरी विजय वल्लभ सूरिश्वर जी म. के परम अनुरागी थे। उनका जीवन बहुत ही अच्छा था। न्यायाधीश के पद पर आसीन होकर भी उनके जीवन में अहंकार नहीं था। निरन्तर अध्ययनशील, धर्मसाधना आदि कार्यों को कभी भी नहीं छोड़ा। प्रगतिशील जमाने में भी बहुत ही सादगी से रहे। उनकी जीवनी से लोग अवश्य प्रेरणा प्राप्त करेंगे, ऐसी उम्मीद करता हूँ।

कार्य की सफलता के लिए हार्दिक आशीर्वाद है।

1.10.1986 आचार्य विजय इन्द्रदिन्न सूरि

अकोला

(2)

बौद्धिकता और श्रद्धालुता का सहज समन्वय जिस व्यक्ति में था, जो साहित्य के गंभीर अध्येता थे और सत्य के प्रति सहज रूप में समर्पित थे। जैन दर्शन और धर्म के जो अन्तरहृदय से उपासक थे, वे श्री शिखरचन्दजी कोचर न्याय की कुर्सी पर बैठने पर धर्म को कभी विस्मृत नहीं करते थे। अब वे हमारे बीच में नहीं है, पर उनकी विशेषताएँ आज भी जीवित हैं। उनके जीवन के बारे में कुछ लिखा जा रहा हैं ऐसा हमने सुना तो हमें बहुत अच्छा लगा। सत्य और धर्म के प्रतीक लोगों के बारे में कुछ लिखा जाता है, वह आने वाली पीढ़ी के

लिए प्रेरणा का स्रोत बन जाता है उनके बारे में लिखने के साथ-साथ उनके जीवन संस्मरणों को संजोकर, सुरक्षित रखने का जो प्रयत्न किया जा रहा है, वह भी सराहनीय है। उनका परिवार भी धार्मिक वृत्ति का अनुकरण करता हुआ आगे बढ़ेगा। ऐसी आशा है।

03.12.1986 –आचार्य तुलसी

(3)

कर्म से न्याय क्षेत्र में प्रतिष्ठित और भावना से ये प्रतिष्ठित थे अध्यात्म के क्षेत्र में। सहज-सरल जीवन बाहर से सीधा-सा व्यक्तित्व और भीतर में काफी गहरा, मेहता शिखरचंदजी कोचर को इस रूप में देखा था। उनमें प्रबल जिज्ञासा थी। सांप्रदायिक भाव से अधिक सत्य की जिज्ञासा का भाव उन में विद्यमान था। आचार्य तुलसी के प्रति अगाध श्रद्धा थी। अनेक जिज्ञासाएं लेकर हमारे सामने आते और उन्हें प्रस्तुत कर समाधान पाने का प्रयत्न करते। उनकी सरल, निश्छल जीवन शैली दूसरों के लिये भी अनुकरणीय है।

02.12.1986 –युवाचार्य महाप्रज्ञ

(4)

कोई भी व्यक्ति सदा एकरूप नहीं रहता। वह आज जिस रूप में है, कल बदल जाता है। कल उसे जो रूप मिलता है, वह भी स्थायी नहीं रहता। बदलाव उसके साथ जुड़ा हुआ है जन्म और मृत्यु भी इसी बदलाव के दो घटक हैं। संसार का प्रत्येक प्राणी इन घटकों की परिणति है। सामान्यतः मृत्यु के बाद व्यक्ति अतीत में ओझल हो जाता है। किन्तु कुछ व्यक्ति ऐसे होते हैं, जो जाने के बाद भी अपने कृतित्व की सुगन्ध छोड़ जाते हैं। स्व. शिखरचन्दजी मेहता/कोचर/ऐसे ही व्यक्ति थे। न्याय के आसन पर बैठकर, उन्होंने जनता को, जो आत्मीयता दी और उसका विश्वास अर्जित किया, वह उनकी धार्मिक मनोवृत्ति का प्रतीक है। उनके जीवन को निकटता में पहचानने वाले लोग उनके जीवन को आंशिक रूप से भी उजागर कर सके, तो एक बड़ा काम होगा।

04.12.1986 –साध्वी प्रमुखा कनकप्रभा

(5)

श्री शिखरचन्द्रजी कोचर से मेरा परिचय, जब वे बनारस हिन्दू युनिवर्सिटी में पढ़ते थे, तब हुआ। उस समय पूज्य पंडित सुखलालजी, युनिवर्सिटी में जैनचेयर के अध्यक्ष थे। श्री कोचरजी एक जैन धर्म के जिज्ञासु के रूप में,

पंडितजी के पास आते थे और जैन धर्म के विषय में चर्चा करते थे। उनकी जैन धर्म की श्रद्धा सराहनीय थी। ऊपर उस विषय में विशेष जानने की जिज्ञासा बड़ी तीव्र थी। उनकी यह जिज्ञासा तृप्त नहीं हुई। युनिवर्सिटी से चले जाने के बाद भी वे पंडितजी से पत्र-व्यवहार करके अपनी श्रद्धा को सुदृढ़ बनाते थे। कई वर्षों बाद, उनसे निधन वर्ष में ही पुनः मुलाकात हुई। सादा व्यवहार और सज्जनता की पराकाष्ठा मैंने उनमें देखी है।

-दलसुख भाई मालवणिया

डायरेक्टर, दलपत भाई इंस्टीट्यूट ऑफ जैनोलोजी,
गुजरात युनिवर्सिटी के पास, अहमदाबाद (भारत)

(7)

शिखरचन्द्र कोचर का नाम आते ही एक ऐसे पुरुष की छवि सामने आती है, जो शरीर से स्थूल किन्तु मन से बहुत सरल हो, जो मानव जीवन को ईश्वर की अनुकम्पा मानता हो, जो परम्परा और संस्कारों की गहराई से जुड़ा होने के बावजूद वैचारिकी स्वतंत्रता का साधक हो। उनकी काया के साथ एक मोटी धोती जुड़ी रहती थी। जब वह हाई स्कूल में पढ़ रहे थे तो उनके पीछे बंधी मोटे कपड़े की धोती को देखकर उनके एक शिक्षक ने पूछा 'शिखरचन्द्र कहीं बाहर जा रहे हो।' शिखरचन्द्रजी ने अपने भोलेपन से जब उत्तर दिया 'मास्टर साहब, मैं तो कहीं बाहर नहीं जा रहा हूँ' तो शिक्षक ने पलटकर पूछा 'फिर यह बिस्तर-बन्द क्यों बांध रखा है।' मेहता शिखरचन्द्रजी में एक 'सेन्स ऑफ ह्यूमर' था, जो उन्हें सदैव प्रसन्न रखता था। शान्त स्वभाव का यह गुण उन्हें अपने परिवार से प्राप्त हुआ था। उनके पिता मेहता जतनलालजी और उनके ज्येष्ठ भ्राता श्री चम्पालालजी राजकीय सेवा में उच्च पदों पर रहे, पर उनकी सादगी तथा सहनशीलता की सदैव सराहना हुई। श्री शिखरचन्द्रजी कोचर अपनी शिक्षा के प्रारंभ से लेकर अंत तक मेधावी विद्यार्थी रहे। उन्होंने अपनी उच्च शिक्षा बनारस विश्वविद्यालय में पाई और सदैव प्रथम श्रेणी में उच्च स्थान पाया। कुछ समय तक वकालत करने के बाद उन्होंने सन् 1941 में राजकीय सेवा ग्रहण की। वह 1941 में बीकानेर हाई कोर्ट में असिस्टेन्ट रजिस्ट्रार के पद पर नियुक्त हुए। सन् 1970 में वह झुंझुनूं के जिला एवं सत्र न्यायाधीश के पद से सेवानिवृत्त हुए। न्यायिक सेवा का उनका कार्यकाल उनके जीवन के प्रति दृष्टिकोण का परिचायक रहा। न्याय के प्रति उनकी प्रतिबद्धता सर्वविदित थी। उनके लिए न्याय का मतलब केवल न्याय था। वह न कभी सत्ता के दबाव में आते थे, न धन उन्हें

झुका सकता था, न ऊँच-नीच का भेदभाव उन्हें प्रभावित कर सकता था। वह न्याय के साधक थे। न्याय करते समय वह साक्ष्य के साथ-साथ अन्तर-आत्मा की आवाज भी सुनते थे। यह अन्तर-आत्मा की आवाज, उन्हें गलतियाँ करने से बचाती थी, ऐसी उनकी मान्यता थी, ऐसा उनका दृढ़ विश्वास था। गरीब और दलित, उनसे मिलने में कम हिचकते थे, पर समृद्ध तथा सत्ता सम्पन्न लोग उनसे अपनी बात कहने में डरते थे।

न्याय, न्यायिक सेवा, मेहता शिखरचन्द्र के व्यक्तित्व का एक पहलू था, एक सार्वजनिक पहलू। व्यक्तिगत जीवन में उनकी रुचियाँ विविध प्रकार की तथा विस्तृत थी। पवित्रता और उच्चता उनके जीवन के सार सूत्र थे।

उनके परिवार के मेरे परिवार से गहरे रिश्ते थे, क्योंकि कोचरों के पढ़े-लिखे राजवर्गीय परिवारों में उनका परिवार भी था, मेरा परिवार भी था। उनसे मिलना और जानना एक ऋषि पुरुष की संगत-सा लगता था। मैं उनके पास कभी-कभी ही जाता था और बैठकर उनसे बातें कम ही कर पाता था, क्योंकि वह भी अलग-अलग जगह पर रहे और 1970 में ही बीकानेर आये। हमारे बीच उम्र का बड़ा फर्क था। दूसरे, उनकी धार्मिक आस्थाओं में मेरी कोई रुचि नहीं थी। सबसे बड़ा कारण था, मेरी वकालत की व्यस्तता और बीकानेर से काफी समय बाहर बिताने की आदत। न्याय के अतिरिक्त उनके जिन आयामों ने मुझे प्रभावित किया वे हैं उनका साहित्य-प्रेम और शिक्षा-प्रेम। अनेक शिक्षण संस्थाओं से उनका जुड़ाव रहा। श्री जैन पाठशाला सभा, जो बीकानेर के शैक्षणिक उत्थान में एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्थान रखती है, के बरसों तक वह सचिव रहे।

वह साहित्य-सर्जक भी थे और साहित्य अनुरागी भी थे। हिन्दी 'साहित्य शिरोमणि' तथा 'साहित्याचार्य' जैसे अलंकरण उनकी साहित्य अध्ययन में पैठ के परिणाम बने। यह एक दुर्भाग्य का विषय है कि उनके द्वारा रचित साहित्य का ज्यादा प्रकाशन नहीं हुआ। प्रकाशन की तरफ शायद उनका ध्यान ही नहीं गया। उनका एक मात्र पुत्र देवेन्द्रकुमार, अब इस तरफ ध्यान दे रहा है।

काव्य की तरफ उनकी विशेष रुचि थी। उनकी काव्य रचनाएँ एक उत्कृष्ट कवि का परिचय हमें देती हैं। वह काव्य गोष्ठियों, मुशायरों तथा साहित्यिक आयोजनों में जाना पसन्द करते थे। उनकी स्मरण शक्ति अत्यन्त तीव्र थी। उन्हें सैकड़ों राजस्थानी, हिन्दी, संस्कृत, उर्दू, अंग्रेजी कविताएँ कंठस्थ थी। वह अनेक भाषाओं के ज्ञाता थे, भाषाविद् थे और अनेक विषयों के प्रकाण्ड विद्वान् थे। उनका देहान्त 21.08.1984 में अपने पुत्र के पास मध्यप्रदेश के नागदा

में हुआ था। बीकानेर उनका जन्म स्थान था और इस नगर से उन्हें सदैव लगाव रहा। सेवानिवृत्ति के बाद वह यहीं बस गये।

उनके काव्य के कुछ जानदार नमूने बहुत कुछ कहते हैं-

1. कर्मठ का जग में आदर है,
जो हटे कर्म से कायर है।
उसका ही जग में यश स्थिर है,
जो सदा कर्म में तत्पर है।।
यह कर्मभूमि वसुधा करती,
आतुरता से तुमको आह्वान।
तुम बढ़े चलो है नौजवान।।

2. द्रुतगति जलधारा जाती है
गिरि कारा रोक न पाती है,
वह निज मग आप बनाती है,
हमको यह मंत्र सुनाती है
जग में यह सत्य-सनातन है।
जो प्रगतिशील, वह जीवन है।।

3. मधुर कल्पने ! उड़ी जा रही हो जिस पथ की ओर
तज सुरम्य, मृदु, शस्य-श्यामला वसुन्धरा का छोर ?
वन, उपवन, सागर, सर, निर्झर, गिरिवन सरिता कूल।
व्यक्त किये कमनीय कुसुम, तरु, लता जलज सुखमूल।।

4. थरथर धूजै रूंखां, डाल्यां पात
ठंडी-ठंडी, डाँफर बात।।

हिन्दी और राजस्थानी में लिखी उनकी कविताएँ नव जागृति का सन्देश देती हैं, देशप्रेम के गीत गाती हैं, धर्म को पुनः स्थापित करने की चेष्टा करती हैं और प्रकृति की रम्यता को चित्रित करती हैं। उन पर श्री अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध' श्री मैथिलीशरण गुप्त का प्रभाव स्पष्ट लगता है।

उनके पत्र-व्यवहार में भी उनकी काव्य दृष्टि और ज्ञान दृष्टि के दर्शन होते हैं। वह उन साहित्य-सर्जकों में, वे जो स्वांतः सुखाय लिखते थे या अपने आराध्य देवों की स्तुति के रूप में या प्रकृति के चितेरे के रूप में। अपने आपको एक साहित्यकार के रूप में प्रस्तुत करने की उनकी कोई आकांक्षा नहीं थी। साहित्य भी उनके उच्च जीवन के आदर्शों का एक सिद्धान्त था, जिसे उन्होंने एक सिद्धान्त की तरह ही माना और जिया।

उनको श्रद्धांजलि देते हुए आचार्य तुलसी ने उनके बारे में कहा- "बौद्धिकता और श्रद्धालुता का सहज समन्वय जिस व्यक्ति में था, जो साहित्य के गम्भीर अध्यायी थे और सत्य के प्रति सहज रूप में समर्पित थे। जैन दर्शन और धर्म के अन्तर्हदय उपासक थे, वे श्री शिखरचन्द्र कोचर न्याय की कुर्सी पर बैठने पर धर्म को कभी विस्मृत नहीं करते थे।" यह श्रद्धांजलि अपने आप बहुत कुछ कहती है।

-उपध्यानचन्द्र कोचर
एडवोकेट, बीकानेर

(7)

तपोभूमि भारत के स्वर्णिम इतिहास में जो गौरव-मंडित स्थान राजस्थान को प्राप्त है, वही स्थान राजस्थान के स्वर्णिम मरुधरा के नगर बीकानेर को उपलब्ध है। इस मरुधरा के जैन ओसवाल समाज ने राजनीतिक, धार्मिक, सांस्कृतिक, प्रशासनिक, आर्थिक क्षेत्र में समय-समय पर आने वाली विपत्तियों से बिना किसी जाति, धर्म, सम्प्रदायिकता, भेदभाव किए जनता-जनार्दन की न केवल रक्षा ही की अपितु उनकी सुख-समृद्धि हेतु तन मन-धन से सेवा की है। अहिंसा की पुजारी इस जाति ने, धर्म और धरा की रक्षा हेतु तथा अपनी आन, बान और शान के लिए सहर्ष शीश भी न्यौच्छावर किए हैं। ओसवाल जैन समाज में अनेक जातियां हैं। बीकानेर में विराट् कोचर समाज अपना एक विशिष्ट एवं महत्त्वपूर्ण स्थान रखता है। कोचर भाइयों के निवास स्थान एक ही स्थल पर, समूह में निर्मित हैं, जो सच्चे भ्रातृत्व का प्रतीक है। अतः यह स्थान बीकानेर में कोचरों का मौहल्ला नाम से सुप्रसिद्ध एवं विख्यात है।

कोचर वंश की गरिमामय कीर्ति पताका चतुर्दिक् फहराने का श्रेय इन त्रिवेणी बंधुओं को भी जाता है। स्वाभिमान की अमन्द मन्दाकिनी तीनों ही महामानवों में समान रूप से प्रवाहित होती रही। बीकानेर के ये सपूत बन गए। अपनी निष्पक्षता की अमिट छाप हर क्षेत्र में छोड़ी। आपके सम्पर्क में जो भी आया, वही आपकी सहृदयता, सहज सरल व्यवहार, सादगी पूर्ण जीवन से प्रभावित हुए बिना नहीं रह सका। निःस्वार्थ भाव से नियमों की परिधि में रहते हुए अपने कठोर परिश्रम द्वारा जो जनता की, सेवा की वह एक आदर्श बन गया। बड़े से बड़ा प्रलोभन, शीर्षस्थ अधिकारियों व मंत्रियों का प्रभाव भी उन्हें अपने न्याय पथ से, जीवन पर्यन्त, विचलित नहीं कर सका। इससे बड़ी शान एवं गौरव की बात क्या होगी कि आप तीनों महापुरुषों का सम्पूर्ण सेवा काल बेदाग रहा।

जहाँ कहीं भी ये महामानव रहे, अपने कार्य का उदाहरण ही प्रस्तुत किया। बीकानेर की धरा गर्व कर सकती है, ऐसे पुरुषों पर।

शिक्षा प्राप्त करते समय आपने किसी पर भी आर्थिक बोझ नहीं आने दिया। आपको इंटरमीडिएट, बी.ए. व एल.एल.बी. में क्रमश 20 रुपये, 25 रुपये एवं 30 रुपये स्टेट स्कॉलरशिप के व आईएससी एवं बीए में क्रमश: 50 रुपये एवं 75 रुपये स्टेट की ओर से बुक-कोस्ट के भी प्राप्त हुए। अंग्रेजी साहित्य और हिन्दी साहित्य का अनुपम समन्वय उनके पास था, जिसे विरले विद्वान् ही प्राप्त कर सकते हैं। ऐसे साहित्यिक समन्वय का व्यक्ति विश्व में कहीं जाए, उसके लिए विदेश में भी कौन पराया है उसके लिए हर जगह स्नेह, सम्मान स्वागतार्थ खड़ा रहता है। हिन्दी-अंग्रेजी दोनों भाषाओं का आपस में क्षीर-नीर सा समन्वय है, एक के बिना दूसरी भाषा अधूरी है, पंगु है उस समय जिस समय बड़ी मुश्किल से एक साहित्य का ज्ञान भी पाना कठिन था बल्कि नामुमकिन था ऐसे समय में दो भाषा के साहित्यों में उच्चस्तरीय अंकोपलब्धि करना हमारे लिए भी गौरव की बात है। सच पूछा जाए तो वे हर विद्यार्थी के लिए आदर्श रूप हैं।

हिन्दी अंग्रेजी के अतिरिक्त संस्कृत, प्राकृत, गुजराती एवं राजस्थानी भाषाओं के भी आप विद्वान थे और इन सभी भाषाओं पर पूरा अधिकार था। यहाँ तक कि श्री अगरचन्दजी नाहटा जैसे विद्वान भी आपके पास अंग्रेजी, संस्कृत एवं प्राकृत साहित्य के हिन्दी अनुवाद के लिए आते थे।

श्रद्धेय कोचर साहब स्वयं को आजीवन विद्यार्थी समझते रहे। सदैव नियमित रूप से अध्ययन करते रहे। एल.एल.बी. के पश्चात् आपने सन् 1943 में अखिल भारतीय विद्वत् सम्मेलन से 'साहित्य शिरोमणी' तथा 'साहित्याचार्य' की उपाधि प्राप्त की। सन् 1945 में श्री शार्दूल राजस्थानी रिसर्च इंस्टीट्यूट बीकानेर से एफएसआरआई की उपाधि से विभूषित हुए। सन् 1955 में Life of Christ Correspondence Course by the Light of Life की परीक्षा उत्तीर्ण की।

ऐसा लगता है कि आप पूरे जीवन को अध्ययनरत रखना चाहते थे सन् 84 तक जैन धर्म से जुड़ी परीक्षाएँ देते रहे। श्री जैन श्वेताम्बर नाकोड़ा पार्श्वनाथ तीर्थ से उन्होंने पत्राचार पाठ्यक्रम द्वारा सन् 81 में 'जैन परिचय' परीक्षा (93/100) प्रथम श्रेणी से उत्तीर्ण की। यहीं से सन् 84 में 'जैन विशारद' परीक्षा प्रथम श्रेणी से उत्तीर्ण की। आजीवन अध्ययनरत रहने वाले 'जज साहब' सेवानिवृत्त होने पर भी इतने अध्ययनरत रहे, यह एक बहुत बड़ी बात है। विवेकी व्यक्तित्व कुछ न कुछ अध्ययन द्वारा ज्ञानार्जन करना चाहता है यही विशेषता उनमें थी। सच पूछा जाए तो हर परीक्षा में उन्होंने अपने आपको शिखर पर ही

रखा और जीवन के चरम शिखर को स्पर्श करने का सदैव प्रयास किया अध्ययन उनका जीवन था पढ़ना प्राण था और कर्मठ रहना सर्वस्व था। उनके जीवन की शैक्षिक स्थिति का अंकन करते हैं, उनके शैक्षिक कागजात एव रिकॉर्ड देखते हैं तो ऐसा सिद्ध होता है कि वे बचपन से ही शिक्षा प्रेमी थे। उन्होंने छठी कक्षा से लेकर यानि सन् 1928 से लेकर 1984 तक के प्रमाण-पत्र, अंकतालिकाएँ, फाइल के प्रत्येक पन्ने पर चिपका रखी है, यहाँ तक कि हर पन्ने पर उसका सन्दर्भ, प्रसंग और प्राचार्य तक का विवरण दे रखा है यहाँ तक कक्षा में प्रथम स्थान और द्वितीय स्थान प्राप्त करने की, प्राइज स्लिप (पुरस्कार-पत्र) तक संभालकर रखी हुई है। हर पन्ना उनके जीवन उपलब्धियों का शिलालेख-सा विवरण प्रस्तुत करता है।

उनके द्वारा लिखित विवरण निम्नांकित है-

'6 वर्ष की अवस्था में विद्याध्ययन के लिए स्कूल में भर्ती किया गया। उस समय पिताजी हनुमानगढ़ में सुपरिन्टेन्डेन्ट ऑफ कस्टम्स थे। अतः वहाँ के सरकारी स्कूल में नाम दर्ज हुआ प्रारंभिक ए व बी क्लास की शिक्षा हनुमानगढ़ में ही प्राप्त की। 1923 में राजगढ़ पिताजी की बदली हो जाने के कारण वहाँ के एंग्लो वर्नाक्यूलर स्टेट मिडिल स्कूल में भर्ती हुआ। पहली कक्षा से पांचवीं कक्षा तक यहाँ शिक्षा प्राप्त की। सन् 1925-26 में शीतला की भयंकर बीमारी से ग्रस्त हुआ सन् 1926 में पिताजी की बदली लूनकरणसर हो जाने के कारण शिक्षा की सुविधा नहीं थी, बीकानेर में पांचवीं कक्षा में भर्ती हुआ सन् 1927 में पांचवी कक्षा उत्तीर्ण की 1928 में छठी कक्षा उत्तीर्ण की। सन् 1929 में सातवीं कक्षा प्रथम श्रेणी से उत्तीर्ण की। कक्षा के सब विद्यार्थियों में द्वितीय स्थान मिला। सन् 1930 में 8वीं कक्षा (भादरा से) प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण की और राज्य के सब स्कूलों में विद्यार्थियों में प्रथम रहा। सन् 1932 हाई स्कूल परीक्षा राजपूताना बोर्ड से उत्तीर्ण की परीक्षा में मेरा नं. दसवां रहा।'

सेवाकाल

आपने आत्मनिर्भर होने के लिए दिनांक 26 मई 1938 से वकालत प्रारम्भ की। 6 मई सन् 1938 से दिनांक 31 मार्च 1941 तक वकालत की। 28 जून 1940 से 6 अगस्त 1940 तक आफिसियेटिंग रजिस्ट्रार ज्युडिशियल कमेटी के पद पर नियुक्त हुए। 1 अप्रेल 1941 से असिस्टेंट रजिस्ट्रार हाईकोर्ट के पद पर स्थायी नौकरी प्रारम्भ की।

जून 1941 से जुलाई 41 तक मुंसिफ चूरू के पद पर कार्य किया। 7

जुलाई 1941 के बाद दोपहर से ऑफिशिएटिंग रजिस्ट्रार का चार्ज बा. ब्रजमोहनलाल सिटी मजिस्ट्रेट के सिलसिले में पं. लक्ष्मीनारायणजी पुरोहित से लिया। दिनांक 20 सितम्बर 41 के अव्वल वक्त पं. लक्ष्मीनारायणजी पुरोहित को रजिस्ट्रार का चार्ज दिया और एसिस्टेंट रजिस्ट्रार के पद का चार्ज ग्रहण किया। 9 जून 1942 को रजिस्ट्रार हाई कोर्ट के पद पर स्थायी हुए। (इस पद का ग्रेड 150-10-250 मुंसिफों के बराबर था।) दिनांक 11.03.44 को मुंसफी राजगढ़ का चार्ज देकर 16.03.44 को मुंसफ करणपुर हुए। वहाँ से दिनांक 24.01.45 को रायसिंहनगर मुंसफी में तबादला हो गया। 1.5.45 को बीकानेर सिटी मजिस्ट्रेट नियुक्त हुए। दिनांक 3.11.45 को बीकानेर से तब्दील होकर इन्हें फिर मुंसफ रायसिंहनगर बना दिया गया। दिनांक 28.11.46 को रतनगढ़ में बदली हुई। यहीं पर दिनांक 22.3.48 को सब जज के पद पर नियुक्ति हुई। आप दिनांक 25.1.50 को सिविल जज नियुक्त हुए। दिनांक 10.5.52 को यहाँ से तबादला होने पर सूरतगढ़ में सिविल जज का चार्ज लिया। यहाँ से बालोतरा ट्रांसफर हो गया। यहाँ से गंगानगर में दिनांक 09.06.55 को सिविल एण्ड असिस्टेंट सेशन्स जज के पद पर नियुक्त हुए। तीन वर्ष के बाद यहाँ से उदयपुर में बदली हो गई। यहाँ से दिनांक 15.09.62 को सीकर में स्थानान्तरण हो गया यहाँ से चूरू चले गये। दिनांक 21.07.67 को झुंझुनूं में डिस्ट्रिक्ट एण्ड सेशन्स जज पर नियुक्त हुए। दिनांक 1 मार्च 1969 से जिला एवं सत्र न्यायाधीशों की चयन श्रृंखला में नियुक्ति हो गयी और दिनांक 01.08.1970 को राज्य सेवा से निवृत्त हो गए। न्याय प्रिय एवं ईमानदार न्यायाधीश और उनके न्यायिक निर्णय जो आने वाले लोगों के लिए एक दर्पण है – ज्योति स्तम्भ है।

– वल्लभदास कोचर
सुपुत्र मेहता चम्पालालजी कोचर,
आई.ए.एस. (रिटायर्ड), बीकानेर

(8)

आपके आदरणीय पिताजी का इस विद्यालय की सभाओं के कारण मेरा सम्पर्क होता रहा, साथ ही अनेक बार धर्मस्थलों, विशेषकर साध्वीगणों और मुनिमहाराजों के सान्निध्य में भी उनके साथ चर्चा, वार्त्तालाप के अवसर प्राप्त हो जाते थे। मैं उनके सरल व्यवहार से बहुत प्रभावित था और मुझे अनुभव होता था कि उन्हें भी मुझ पर यथेष्ठ स्नेह था। यद्यपि योग्यता या किसी भी विशेषता की दृष्टि से मैं उनके समक्ष प्रत्येक प्रकार से अकिञ्चन और साधारण था, किन्तु

सहज सरल स्नेह किसी भी सीमा को नहीं जानता। अतः उनकी स्मृति में दो शब्द लिख देने का मेरा मन हो आया है। मैं लेखक नहीं हूँ और मैं बहुत अच्छा लिख लेता हूँ, ऐसा भ्रम भी नहीं है, केवल उनके व्यक्तित्व की दो-चार बातें तो मुझे प्रिय भी लगी और मेरे स्वयं के जीवन में भी जिनसे कुछ नवीनता का समावेश हुआ, उन्हें आप तक पहुँचा भर दूँ, ऐसा मुझे जँचा।

श्री कोचर साहब उन बहुत कम लोगों में से थे, जो देहमुक्त होकर भी स्मृतियों में जीवित रह सकते हैं। हममें से अधिकतर लोग दूसरों को अच्छा लगने के लिये एक नाटकीय जीवन जीते हैं, किन्तु श्री शिखरचन्द्र जी कोचर बिल्कुल अपने ही ढंग से जी लेते थे, और यहीं उनकी सरलता और तृप्त जीवन का रहस्य होना चाहिये। वे शासकीय और भी अधिकार युक्त पदों पर रहे, पर इससे उनकी जीवन शैली में कभी अहं की वेडौलता नहीं आ पाई। इसी बात पर एक बार यूँ ही बात चल पड़ी तो उन्होंने बताया था कि उन्होंने अपने अधिकारों को भी कर्त्तव्य ही समझ कर काम में लिया है। मैं दंग रह गया और मुझे स्मरण आता है कि मैंने प्रशंसा के स्वर में कहा था तभी समय का प्रवाह आपको कहीं से भी, कभी खंडित नहीं कर पाया। एक और विशेषता थी की बात जिसे कभी नहीं भूलना चाहिये परन्तु लोग हमेशा भूलाये रखते हैं, यानी कि आध्यात्मिक चिन्तन वह उनमें सतत् था और उसमें कहीं भी दुराग्रह नहीं था। वयोवृद्ध होने के नाते तो वे मेरे आदरणीय थे ही, मैंने उन्हें एक बहुत अच्छे इन्सान के रूप में ही जाना है।

मैंने यथासंभव संक्षेप में लिखा है, पर तो भी, उसमें से जो-जो अंश आपको अप्रिय लगे उसके लिये कृपया मुझे क्षमा कर दें।

12.10.1985 — जयचंदलाल कोठारी, बीकानेर

(9)

बीकानेर की रत्नगरी के अनेक उज्ज्वल रत्नों में नररत्न श्री शिखरचंद्रजी कोचर विशेष उल्लेखनीय है। आपकी प्रामाणिकता, वाग्विदग्धता तथा सहयोग भावना प्रत्येक सम्पर्क में आने वाले व्यक्ति को प्रभावित करती थी। उन्होंने अपनी शिक्षा यात्रा सदैव सर्वोच्च अंकों के साथ पूर्ण की। वे एक प्रथम श्रेणी के विद्यार्थी थे और अपने सहपाठियों तथा गुरुजनों के स्नेहभाजन थे।

उन्होंने न्यायिक सेवा के क्षेत्र में प्रवेश किया और झुंझुनूं से जिला एवं सत्र न्यायाधीश के रूप में वर्ष 1970 में सेवानिवृत्त हुए। न्यायिक सेवा के चुनौतीपूर्ण कार्यों को आपने असाधारण प्रतिभा प्रामाणिकता और संवेदनशीलता के साथ सम्पन्न किया।

सेवानिवृत्ति के बाद आप बीकानेर के सामाजिक जीवन में सेवार्पित हो गए और महाप्रयाण पर्यन्त अर्थात् 1984 तक तन-मन-धन से मातृभूमि की सेवा में रत रहे। आपने श्री जैन पाठशाला सभा, श्री नेहरू शारदा रात्रि कॉलेज और रामपुरिया विद्या निकेतन जैसी प्रतिष्ठित शिक्षा संस्थाओं के संचालन में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। आनन्दजी कल्याणजी पेढ़ी के संचालन में भी आपका सराहनीय योगदान था।

इसके साथ ही धार्मिक क्षेत्र में शिविरों के आयोजन कर आपने बाल किशोर और युवा पीढ़ी को संस्कारित करने का भगीरथ कार्य श्रद्धा के साथ निभाया। सादा जीवन और उच्च विचार के धनी स्व. श्री कोचर एक उच्चकोटि के कवि और शायर भी थे। आपको संस्कृत के हजारों श्लोक कंठस्थ थे। आपने साहित्य जगत् में एक लेखक के नाते भी सम्मान प्राप्त किया।

समाज-सेवा के क्षेत्र में मुझे भी उनके मार्गदर्शन में कार्य करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। मैं बीकानेर की इस दिव्य विभूति को नमन् करता हूँ कि बीकानेर के निवासी उनके दिव्य गुणों का अनुसरण करें और मरुनगरी के गौरव में चार चांद लगाएं।

-चम्पालाल डागा

सम्पादक, श्रमणोपासक, बीकानेर

(10)

In my last visit to Bikaner about two years ago, I had met Bhai Shikharchand at your Bikaner residence. He was always so loving and respectful that I can never forget him. I never knew that was to be my last meeting with him

Your elder uncle Shri Champalalji, I A S was much senior to me in age. And Shri Shikharchand was much younger than myself. In fact, your second uncle Shri Kanihaiyalal ji was my most intimate friend. He always used to tell me how he loved Shri Shikarchand and had great hopes from him. It was fortunate, he could see Shri Shikharchand to have become a District and Sessions Judge in his own life-time.

Because of my age and my close association with his elder brother Shri Kanahiyalalji, Shri Shikarchand kept so much distance from me in his young age that I had no opportunity to have any memorable events with him or to study him personally and more intimately. In any case, he always bore great affection and respect for me Moreover in our times, younger ones never used to be so free with the elders, as they are now.

Probably, you do not know. I left Bikaner in 1930 and later on settled in Gwalior. Since then my visits to Bikaner and particularly after the deaths of my father, uncle and father-in-law have been very short, while Shri Shikharchand

was posted in the districts, away from Bikaner. It was only after his retirement, when he permanently settled in Bikaner, that I used to call on him to enquire about his welfare in every visit.

In any case, Shri Shikharchand in his young age too was well-known for his exceedingly good behaviour, high intelligence, studious habits and good academic record. Though he was always few at words and shunned bad company, he was sweet with every body. In fact, he was Ajat Shatru and had no enemies, who would talk ill of him.

In my official career, and particularly as Textile Commissioner Director of Civil Supplies, Director of Industries etc. I often happened to come across men from his place of posting in Rajasthan state I used to enquire about his welfare and health. I always had good reports about him, I was very much hopeful that he would some day like be late Bhaiji Uttamchand ji in our state. Probably his silent nature and exclusive and conscientious devotion to his duties stood in his way.

After his retirement, I saw, he had built up a big library of religious books at his residence. I always found him either at his books or in some other religious activities.

30.05.1986 -J.M. Kochar (Retd I.A.S)
New Delhi

(11)

मेहता शिखरचन्दजी कोचर समाज के श्रेष्ठ-शिखर पुरुष थे। उदीयमान मेधावी छात्र जीवन से उत्तरोत्तर ऊर्ध्वारोहण करते हुए वे नीर-क्षीर विवेक से सम्यक् निर्णय प्रदान करने वाले लब्ध प्रतिष्ठ न्यायाधीश के पद पर प्रतिष्ठित हुए।

वे मूर्धन्य कवि एवं रचनाधर्मी साहित्य मनीषी थे। सन् 1943 एवं 1944 के भारतवर्षीय विद्वद् सम्मेलनों में उन्हें 'हिन्दी साहित्य शिरोमणि' तथा 'साहित्याचार्य' पदों से अलंकृत किया गया था।

वे शुद्ध आचरण वाले सुश्रावक तथा अनन्य गुरु भक्त थे। अपनी गुरु परम्परा आचार्य श्री आत्म-वल्लभ समुद्र-इन्द्रदिन्न पाट पर उनकी अटूट श्रद्धा थी।

वे बीकानेर की महान् विभूति थे। हमारे लिए वे हमेशा चिरस्मरणीय प्रेरणा स्रोत बने रहेंगे।

- भँवरलाल कोठारी,
अध्यक्ष
राजस्थान गौ सेवा आयोग, जयपुर

(12)

स्व. भाई जी श्री शिखरचन्दजी कोचर से मेरा बचपन से सम्बन्ध हैं। लगभग 43 वर्ष पूर्व हम लोगों ने श्री जैन प्रधान वाचनालय से एक हस्तलिखित

''पत्रिका'' निकाली थी उस वक्त आपके पास गया था। उनसे ''कविता'' देने का अनुरोध किया था तो उसी वक्त कविवर ''हरिऔध जी'' की स्टाईल में ''रुपया'' पर कविता लिखकर दी और हमारा उत्साह बढ़ाया। उन्होंने बताया था कि बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय में ''हरिऔधजी'' उनके शिक्षक रहे थे। उन्हीं से प्रेरणा प्राप्त कर भाई जी ने भी कविता लिखनी प्रारंभ कर दी थी।

भाईजी अनेक मानवीय गुणों से संयुक्त थे। धीर गंभीर और ईमानदार तो थे ही। न्यायाधीश के पद पर रहकर भी उसकी प्रतिष्ठा को बनाये रखा। आपको पुस्तकें पढ़ने व संग्रह करने का बड़ा शौक था। जब कभी मैं बीकानेर आता तो तकाजा करते रहते थे- कोई नई पुस्तक आई हो तो मुझे भेजना। अवकाश प्राप्त करने के बाद तो अपना सारा जीवन समाज की सेवा, साधु-साध्वियों की सेवा में व धर्म-ध्यान पढ़ाने में, धार्मिक पाठशाला में धार्मिक पढ़ाई करने में बिताया। जब भी मामाजी स्व. अगरचन्द जी नाहटा बीकानेर रहते उनके पास सत्संग व पठन-पाठन के लिये पधारते ही रहते थे।

पहले तो गवाड़ के नाते ही मेरा भाईचारा था। सन् 1977 में मेरी पुत्री सौ. विजया के नागदा रहने के कारण चि. देवेन्द्र कुमार व इस परिवार से अत्यधिक घनिष्ठता हो गई है।

बीकानेर के कोचरों के वंश की वंशावली आपने बड़े परिश्रम से तैयार की थी। आप तीन भाई थे। तीनों ही बी.ए., एल.एल.बी. थे और उच्च सरकारी पदों पर कर्त्तव्यनिष्ठता से कार्य किया।

-हजारीमल बांठिया

कानपुर

(13)

बीकानेर के उच्चाधिकारियों में स्व. श्री शिखरचन्द्रजी कोचर एक ऐसे न्यायिक अधिकारी थे, जो सामाजिक कार्यों में अपनी पूर्ण प्रवृत्ति रखते हुये भी न्यायिक गरिमा को बनाये रखने में सदैव सफल रहे। प्रत्येक सामाजिक कार्य में उनका पूर्ण योगदान रहता था। अपने कर्त्तव्य पथ पर चलते हुये कभी डगमगाये तक नहीं, जो इनके कर्त्तव्य के प्रति एक निष्ठा और कार्य के प्रति श्रद्धा भावना को प्रदर्शित करने वाला एक अनुकरणीय उदाहरण है। अपने अग्रज स्व. श्री चम्पालाल जी कोचर के पदचिन्हों पर चलते हुये इन्होंने सदैव निष्पक्ष न्यायाधीश के रूप में अपनी छवि बनाये रखी।

इनके निर्मित, भव्य अनुकरणीय व्यक्तित्व और सद् चरित्र पूर्ण जीवन

को अमिट छाप इनके परिवार जनों पर पूर्णतः परिलक्षित होती है। मेरा इनके परिवारजनों से घनिष्ठ सम्बन्ध सदैव रहा है, जिसका प्रत्यक्ष परिणाम यह है कि मैं स्व. श्री शिखर चन्द्रजी कोचर साहब के अनुकरणीय व्यक्तित्व व कृतित्व से सदैव प्रेरणा लेता हूँ।

23.09.1985

सूरजमल चौधरी
प्राचार्य,
सनातन धर्म स्नातकोत्तर महाविद्यालय, श्रीगंगानगर

(14)

यह जानकर प्रसन्नता हुई कि आप श्री शिखरचन्द्रजी कोचर की जीवनी प्रकाशित करने जा रहे है। इस संबंध में मेरा निवेदन है कि निम्नलिखित बातों का समावेश इस ग्रन्थ में अवश्य किया जाना चाहिये। उनके कौटम्बिक व पारिवारिक जीवन के वर्णन में निम्नलिखित बातों का उल्लेख किया जाना चाहिये :-

1. अपने कुटम्ब के साथ जज साहब का, हमारे परिवार के प्रति अगाढ़ स्नेह था। पूज्य भाईजी श्री रामरतन जी कोचर एवं मंगल चन्द जी कोचर की हर बात को आज्ञा मानकर, पूरा करना वे अपना धर्म समझते थे। परिवार में बड़ों के प्रति ऐसी आदर भावना अन्यत्र मिलती दुर्लभ है।

2. जज साहब में समता व सरलता कूट-कूट कर भरी हुई थी। कोचरों की गुवाड़ में किसी भाई के यहाँ शादी-विवाह, तपस्या, मरण या अन्य किसी प्रकार का कार्यक्रम हो, जज साहब बिना किसी भेदभाव के हर एक के वहाँ निश्चित रूप से समय पर सम्मिलित होते थे। ऐसी विनम्रता अनुकरणीय है।

उनके सामाजिक कार्यकर्त्ता के स्वरूप का वर्णन करते समय निम्नलिखित तथ्यों को ध्यान में रखा जाना चाहिए-

1. श्री जैन प्रधान वाचनालय, कोचरों का चौक में की गई उनकी सेवाएँ।

2. श्री महावीर जैन मंडल, बीकानेर में की गई उनकी सेवाएँ।

3. श्री जैन पाठशाला सभा, बीकानेर के वे वर्षों तक माननीय सदस्य रहे एवं विधान परिवर्तन के पश्चात् वे संस्था में स्थायी सदस्य रहे। सभा व उसके द्वारा संचालित संस्थाओं का कार्यकारिणी में उन्होंने जिन पदों पर कार्य किया है, उनका सारा विवरण।

4. आत्म वल्लभ जैन पाठशाला में अध्यक्ष रूप में किया गया कार्य

5. आणंद जी कल्याण जी की पेढ़ी, अहमदाबाद में बीकानेर क्षेत्र के प्रतिनिधि के रूप में किए गए कार्य।

6. सार्दूल राजस्थानी रिसर्च इन्स्टीट्यूट, बीकानेर, नेहरू शारदा पीठ (पी.जी. कॉलेज) बीकानेर, हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग, साहित्य सम्मेलन, जुबली नगरी भंडार, बीकानेर, गुण प्रकाशक सज्जनालय, बीकानेर, काशी नागरी प्रचारी सभा आदि विभिन्न संस्थाओं में उनके द्वारा किए गए कार्य।

7. सूरतगढ़ में जब श्री कोचर, सिविल जज के पद पर कार्यरत थे, उस समय उन्होंने कालू गाँव में विराजित यति श्री किशनलाल जी को प्रेरणा देकर, उनका उपाश्रय सूरतगढ़ संघ को दिलवाया था।

8. नाल में जैन यति गुरुकुल संस्थान द्वारा निर्मित व संचालित "जैन कुशल औषधालय" का उद्घाटन श्री कोचर द्वारा किया गया था।

9. उपर्युक्त के अलावा उनके द्वारा लिखी हुई डायरी के आधार पर अन्य संस्थाओं मे किए गए कार्यों का विवरण भी दिया जावे।

उनके धार्मिक जीवन पर प्रकाश डालते वक्त निम्नलिखित डायरी का समावेश किया जावे :-

1. आचार्य भगवंत विजय वल्लभ सुरीश्वर जी सुमुद्र सूरीश्वर जी, इन्द्रदिन्न सूरीश्वरजी के वे निष्ठावान अनन्य भक्त थे। उपर्युक्त आचार्य भगवंतों के संबंध में उन्होंने समय-समय पर लेख, कविताएँ लिखी हैं जो कि "विजयानन्द" व "वल्लभ संदेश" में प्रकाशित हुई हैं। ऐसा सारी रचनाओं का प्रकाश इस पुस्तक में अवश्य किया जाना चाहिए।

2. अपनी सुपुत्री को विजय वल्लभ सूरीश्वरजी के समुदाय में दीक्षित करवाया उसका विवरण।

3. "सूरभिय-अष्ट प्रकारी पूजा" पर दी गई उनकी सम्मति।

4. आचार्य विजय वल्लभ सूरीश्वर जी के संवत 2005 के चातुर्मास हेतु बीकानेर आगमन पर स्वागत-भाषण पढ़ने का लाभ श्री शिखर चन्द्रजी कोचर को मिला था। इसका पूरा विवरण "आदर्श जीवन" पुस्तक में दिया हुआ है। उस पुस्तक से उचित उद्धरण प्रकाशित किया जावे।

5. इनके अलावा विभिन्न धार्मिक विषयों पर श्री कोचर साहब ने जो लेख कविताएँ समय-समय पर छपवायी हैं, उन सबको इस पुस्तक में प्रकाशित किया जाना चाहिए।

श्री कोचर साहब एक न्यायप्रिय व्यक्ति थे। न्याय के मामले में
प्रकार का हस्तक्षेप वे बर्दाश्त नहीं करते थे। एकान्त में बैठकर छोटी-सी

की मेज पर वे अपने निर्णयों को स्वयं लिखा करते थे। इस प्रकार के कुछ निर्णय जिनकी अपील उच्च अदालतों मे की गई हो एवं उच्च अदालतों द्वारा कोचर साहब के निर्णयों को ही मान्य किया गया हो, उनका वर्णन भी इस पुस्तक में लिखा जाना चाहिए।

04.10.1985

-रामकिशन कोचर
बीकानेर

(15)

(अ)

प्रातः स्मरणीय
प्रतिपल अनुकरणीय
जीवनादर्श
पावनता दे
जिनका स्मरण स्पर्श।

मेरी समझ में
जीवन के साठ वसंत में
नहीं आया कोई ऐसा 'शिखर'
न्याय-नर
जिसने सदैव
जीवन चदरिया को रखा उज्ज्वल
सादगी सूती से
सच्चाई की चरखी चला
बुनी हो, चुनी हो
बेदाग डगर
धन्य हो छूने वाले
सच्चे शिखर।

(ब)

मैं, मेरे पिताजी पं. गिरिधरलालजी किराड़ू से सदैव यही सुनता आया कि "बीकानेर के जैन समाज की त्रिवेणी है" - 'तीनों भाई श्री चम्पालालजी कोचर, श्री कन्हैयालालजी कोचर और श्री शिखरचन्द्रजी कोचर', मुझे क्या पता था कि

मेरे बचपन में सुनी हुई बात का सम्बन्ध मेरे विद्यार्थी काल के साथ सम्बद्ध हो जाएगा। मैं डूंगर कॉलेज से बी.ए. कर रहा था। वहाँ मेरे सहपाठी बने श्री वल्लभदास कोचर। उनके विनम्र स्वभाव, मौन रूप से मैं प्रभावित हुआ। धीरे-धीरे मेरा कोचर-परिवार से स्नेह संपर्क बढ़ा। वल्लभजी के काका साहब, शिखरचन्द्रजी से भी परिचय का श्रीगणेश हुआ। वे भी अपने अभिधानानुरूप अपने न्याय क्षेत्र में शिखर पर पहुँचे और शिखरचन्द्र नाम को सार्थक किया। जैसे बड़े भाई वैसे छोटे भाई 'महाजनो येन गतः स पंथाः' वही ईमानदारी, वही समय की पाबन्दगी, वही कर्म-निष्ठा, सादगी, पुस्तक प्रेम, शैक्षिक स्नेह-अनुपम।

जो काम जिस समय करना है- बस उसी समय करना है, चाहे भीषण निदाघकाल हो, चाहे आँधी बरसा हो या अन्य कोई बाधा। वे रुकने वाले नहीं, झुकने वाले नहीं। मैं जब उनकी दोहिती शोभा को पढ़ाने जाता तो वे भरी दोपहरी, तवे से तपते पथ पर, दण्डी यात्री बन, बाजार जाते और तय समय पर सब्जी लाते। एक बार मैंने उनसे कहा, 'आप सांध्य वेला में, ठण्डे समय में, बाजार जाएं तो अच्छा रहेगा, लू नहीं लगेगी, आप इस तरह पसीने से तर हो जाते हैं, वे बोले, 'मेरा हर कार्य समय के साथ जुड़ा है, जो करना है सो करना है। काम के और समय के महत्त्व को समझना है, सुविधा को नहीं।' आज भी ये प्रेरणास्पद शब्द मेरे स्मृति पटल पर छाये हुए हैं। उनके ऐसे आचरण से मैं भी गर्मी सर्दी की उपेक्षा कर लक्ष्य सिद्धि हेतु निकल पड़ने की ठान लेना उचित मानता हूं। जहाँ आलस्य किया वहीं असफल रहे, भले कोई कार्य हो।

वास्तव में यह चिन्तन-मनन करने की बात है कि वे इतने विशालकाय, आजानुबाहु, हृदय की अनुभूति बाह्य उदारता के प्रमाण और तनिक भी शैथिल्य नहीं आज के होनहार तो बात-बात में पाँच-दस कदम तक कहीं जाना हो तो वैज्ञानिक वाहन के बिना नहीं खिसकते (आते-जाते)। व्यर्थ ही तेल-व्यय। शिखरचन्द्रजी इस मामले में ही नहीं हर मामले में मितव्ययी। ईमानदार, न्यायप्रिय, कहाँ से हो सकते हैं- अपव्ययी.... ? उनको कमाई सारू व्यय और रजाई सारू पांव फैलाने की आदत पड़ गई थी। प्रदर्शनप्रियता-देखा-देखी उन्हें कतई प्रिय नहीं थी। कोई नित्य नवीन पोशाक, नित नए फैशन, जमाने के रंग, उन पर असर डाल नहीं सके। सादा जीवन उच्च विचार के वे अवतार थे।

मेरी आजीविका जब कॉलेज से जुड़ी तो वहाँ भी वे कॉलेज-कार्यकारिणी 'नागरिक शिक्षा समिति' के आजीवन सक्रिय सदस्य रहे। हर मीटिंग में वे स्वभावानुरूप समय पर पहुँचते, निष्पक्ष विचार, सहमति व्यक्त करते और शैक्षिक गतिविधियों को समयानुरूप मोड़ देने की सद्सलाह निःसंकोच, निर्लिप्त

भाव से देते। लोभ तो उनके जीवन में था ही नहीं जो वे अपने विचारों को दवाकर रखते। सीधी-सादी जिन्दगी और काम से काम, न उधो का लेना और न माधो को देना। ऐसे पैदल-प्रेमी, नितनेमी आज के युग में दुर्लभ।

मेरे जीवन में ऐसे आदर्श पुरुष सूर्य, चन्द्रमा जितने ही अर्थात् एक दो ही आए। उनके आचरण अनुरूप कोई चरण रखकर चले और जीवन में असफल हो जाए-असंभव। कहाँ है आजकल ऐसे न्यायाधिपति.... ? कहाँ हैं ऐसे निष्पक्ष निर्लिप्त निर्णायक कहाँ वेदाग जीवन, उज्ज्वल रूप, सौम्य, शालीन धर्मनिष्ठ, कर्मनिष्ठ, मौन साधक जैसे अनुपम गुणों के धारक शिखरजी जैसे शिखर तक पहुँचने वाले नर...। ऐसे पुरखों के संचित पुण्य प्रताप पुत्र हैं उनके देवेन्द्रजी। उनकी कार्बन कॉपी समझो। वही रीति-नीति, वही आचरण, वही धर्म-कर्म, वही अप्रदर्शन प्रियता और मितव्ययता। यह उनका ही असर है कि शिखरचन्द्रजी की पुण्याई, जो उनके पोते डॉ. नरेन्द्र तक में देखने को मिलती है जिसने विदेश में जाकर, अपने देश का नाम उज्ज्वल किया है।

अन्त में महामनीषी के बारे में इतना ही लिखना समीचीन समझता हूँ-

करती है पुण्य यह पृथ्वी कई अनगिनत साल,
तब जाकर शिखर छूते हैं, शिखर (चन्द्र) जी जैसे लाल।

-डॉ. भगवानदास किराड़,
मानद प्राचार्य
श्री नेहरू शारदा पीठ स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बीकानेर

(16)

मैं, उनसे सरकारी बंगले में मिलने के लिये जाता था। मेरी बहुत इज्जत करते थे। छोटे भाई की तरह मानते थे। परन्तु यह भी कह देते थे कि आप मिलने जरूर आओ परन्तु किसी की सिफारिश लेकर कभी मत आना। वे बहुत ही ईमानदार, परिश्रमी, दयालु, धर्मात्मा, सरल स्वभावी व्यक्ति थे। झुंझुनूं में आज भी उनकी ईमानदारी का बोलबाला, जन-जन में है। वे बहुत ही व्यावहारिक व्यक्ति थे। झुंझुनूं में जैन मंदिर, दादाबाड़ी वगैरह हैं उनमें करीब-करीब जाते रहते थे। वे स्पष्ट वक्ता थे। उनकी राजकीय सेवा से निवृत्ति झुंझुनूं से ही हुई थी। जब उनकी विदाई की पार्टी दी गयी तो लोगों की आंखों में आंसू भर आये थे। कई चपरासी आदि जोर से रोने लगे थे। वे चपरासी आदि आज भी याद करते हैं। इतनी ऊंची पोस्ट पर रहते हुए भी किसी प्रकार का अहंकार नहीं था। सबसे मिलते थे एवं उनका आदर करते थे।

25.12.2006 - **- शिखरचन्द कोचर सुपुत्र छगनमल कोचर**
निवासी-बीकानेर हाल-झुंझुनूं (राजस्थान)

(17)

मेहता शिखरचन्द्रजी कोचर, बहुआयामी व्यक्तित्व के धनी, दूरदर्शी, समर्पित, समाजसेवी, कलाप्रेमी, समन्वयवादी, प्रगतिशील व्यक्ति थे। उन्होंने अपने जिला एवं सत्र न्यायाधीश के उच्च पद पर आसीन होकर प्रभावशाली एवं प्रेरणादायक निर्णय दिये। उन्होंने विधि विशेषज्ञ के रूप में न्याय प्रणाली को अपना बेजोड़ योगदान दिया। वे साहित्यकार, कवि, वक्ता व उच्च कोटि के अनुवादक थे।

वे उदारमना, आदर्श जीवन व सरल प्रकृति वाले व्यक्ति थे। वे सामाजिकता के विकास में विश्वास रखते थे। श्री कोचर अपने सेवाभाव और उच्च नैतिक जीवन से सम्पूर्ण जैन समाज में अपनी विशेष पहचान रखते थे। मिलनसारिता, निराभिमान, मृदुल व्यवहार, आपकी निजी विशेषताएं थी।

ऐसे महान् पुरुष को शत् शत् नमन्।

दिनांक 14.11.08

-महावीर सिंह कोचर
सेवानिवृत्त सहायक महाप्रबंधक,
स्टेट बैंक ऑफ बीकानेर एण्ड जयपुर

(18)

श्री शिखरचन्दजी साहब लगनशील, साहित्य प्रेमी और सहृदय सज्जन थे। उनके ज्येष्ठ भ्राता चम्पालाल जी साहब से हमारा कातेलों के रिश्ते से पारिवारिक सम्बन्ध भी था। जब आप वाराणसी में अध्ययन रत थे, तब भी हमारा पत्र-व्यवहार चालू था। सं. 1991 में जब हमारा युगप्रधान श्री जिनचंद्रसूरि ग्रंथ का लेखन-प्रकाशन हो रहा था तब ऐतिहासिक ग्रंथादि अन्वेषण करके डा. ईश्वरी प्रसाद के "A short history of Muslim Rule in India" प्रथम संस्करण के पृ. 406 से अनुवाद सहित उद्धृत करके एतद्विषयक अवतरण भेजा था। हमने अपने ग्रंथ में उसे प्रकाशित किया और प्रस्तावना में आपका आभार भी व्यक्त किया। बीकानेर में जब मैं होता प्रायः मिलना-जुलना लगा रहता। आप बहुधा हमारे यहाँ पधाकर, ग्रन्थालय से अध्ययनार्थ पुस्तक ले जाते। काकाजी अगरचन्दजी द्वारा हजारी मल बाँठिया को दिये पत्रों में आपसे मिलते रहने व जयजिनेन्द्र कहने का निर्देश करते। यह सन् 1940 की बात है। जब आप सेशन जज के पद पर बीकानेर में थे।

साहित्यिक कार्यों में आपका हमें सहयोग प्राप्त था। 'कुशल-निर्देश' में प्रकाशनार्थ आप लेख भी भेजते थे और सुपुत्र देवेन्द्र कुमार को भी प्रेरित कर

दिखाते थे। काकाजी अगरचंदजी का स्वर्गवास हो जाने पर मैं बीकानेर गया वे कई बार मेरे पास पधारे और पुस्तकालय, कलाभवन के प्रति आत्मीयता, लगाव के कारण मुझे कलकत्ता की प्रवृत्तियाँ कम कर, बीकानेर में सुव्यवस्था हेतु अधिक रहने के लिए बहुत जोर दिया। गत वर्ष जब मैं नालदा गया था आपके विशेष अस्वस्थ होने के कारण भाई देवेन्द्र बीकानेर गये थे, वहीं से दो-एक बार मिलना हुआ तब भाई हजारी मल साथ ही था। बाद में श्री शिखरचन्दजी के स्वर्गवास के समाचार पाकर हृदय को बड़ा आघात लगा। हमारे साथी क्रमशः परोक्ष होते जा रहे हैं जिनकी स्मृति हृदय को झकझोर देती है।

साहित्य पठन, स्वाध्याय उनका सब से प्रिय विषय था। भाई देवेन्द्र भी जैन साहित्य सेवा में विशेष संलग्न हो उनके अधूरे कार्यों को पूर्ण करने में दत्तचित होंगे।

– भंवरलाल नाहटा
कलकत्ता

(19)

श्रीकोचर साहब महोदय, अपनी जाति धर्म-दर्शन के अनुसार, अपनी पूर्वजों से चली आ रही पैत्रिक संस्कृति आस्था में पालन पोषण प्राप्त जैन धर्मदर्शन के विद्वान् तो थे ही और समयानुसार आंग्ल भाषा में बी.ए., एल.एल. बी., एफ.एस.आर. आई. की शिक्षाएँ भी प्राप्त की थी।

जैनधर्म-दर्शन का प्राचीन आर्ष-धर्म साहित्य संस्कृत में होने के कारण उसको मूल रूप में अध्ययन करने की ललक के कारण वे संस्कृत शिक्षण प्राप्त करने हेतु संस्कृत विद्या की ओर उन्मुख हुए और संस्कृत विद्या प्राप्त के लिये वाराणसी चले गये। वहाँ वे साधारण संस्कृत ज्ञान तक ही सीमित नहीं रहे, अपितु काशी संस्कृत विश्वविद्यालय की सर्वोच्च स्नातकोत्तर साहित्याचार्य परीक्षा भी उत्तीर्ण की एवं साहित्य-शिरोमणि अलंकार भी प्राप्त किया।

अनेक वर्षों तक सनातन धर्मावलम्बी विद्वानों द्वारा संस्कृत विद्या अध्ययन करने व उनके सम्पर्क में रहने के कारण उन्होंने सनातन धर्म के भी शास्त्रों का अध्ययन किया। इस कारण उनकी आस्था रुचि सनातन धर्म में भी पर्याप्त रूप से बनी हुई थी। वे जैन धर्म व सनातन धर्म [illegible] दर्शन को तुलनात्मक दृष्टि से व्याख्या करने की क्षमता भी रखते [illegible] तथा सनातन-धर्म वैष्णव धर्म-दर्शन की तुलनात्मक व्याख्याएँ मुझे सुनाया करते थे।

मेरी लेखनी द्वारा विनिर्मित शिव, शक्ति, विष्णु तथा ब्रह्म-तत्त्व-दर्शन ग्रन्थों को अत्यन्त श्रद्धापूर्वक उन्होंने पढ़ा और प्रकाशन से पूर्व अपने विचार भी लिखे थे।

16.07.1985

-वैद्य पंडित राम प्रसाद शर्मा शास्त्री
दर्शनालंकार एवं
आयुर्वेद तथा धार्मिकाध्यात्मिक विविधोपाधि अलंकृत,
खेतड़ी निवासी

(20)

मेहता शिखरचन्द जी का सान्निध्य मेरे लिये महती उपलब्धि का विषय रहा। सन् 1950 से लेकर श्रीगंगानगर विराजने तक उनके साथ रहे सम्पर्क आज भी बड़ा सुख देते हैं। न्यायिक क्षेत्र में बहुत ऊँचे अधिमान स्थापित करते हुए तथा साहित्य सेवा को अनवरत रखते हुए तथा सामाजिक कुरीतियों के उन्मूलन के लिये कड़ा एवं प्रखर रुख रखते हुए उन्होंने जो जीवन्त जीवन जिया व उनके लिये तो शुभ एवं श्रेयस्कर रहा ही, हम लोगों के लिये भी बड़ा मार्गदर्शक रहा। जब भी सम्पर्क होता, तभी कुछ न कुछ साहित्यिक रचनाओं का प्रसाद प्राप्त करने में मैं भाग्यशाली रहता। ऐसी विशेषताओं का संयोग एवं संगम किसी एक व्यक्ति में कम ही दिखाई देता है। उन्होंने भरपूर जीवन जिया, अतः उस जीवन स्मृति को चिरस्थायी बनाने का कोई भी कार्य हमेशा श्रेयस्कर प्रेरणादायी रहेगा।

-रायचंद जैन
एडवोकेट, श्रीगंगानगर

(21)

सुमधुर व्यक्तित्व के धनी, सरलमना, अध्यात्म से ओत-प्रोत जीवन वाले श्री शिखरचन्द्रजी साहेब कोचर एक निष्ठावान एवं सत्यनिष्ठ न्यायिक अधिकारी के रूप में जाने जाते थे। चूँकि उनका सुसराल मेरे पैतृक गांव सूरतगढ़ (जिला गंगानगर) में है इसलिए मेरे उनसे व्यक्तिगत सम्बन्ध थे। जब भी उनसे मिलना होता, वे विपुल वात्सल्य बरसाते। अहंकार उनको छू तक नहीं पाया। जब कभी वे बीकानेर में मेरे घर के आगे से गुजरते, आवाज लगा लेते और पूछ लेते कि अमुक किताब आपके पास है क्या ? धार्मिक साहित्य के अध्ययन में उनकी विशेष रुचि तथा जैन धर्म के सिद्धान्तों को गहराई से समझने की विलक्षणता थी। उनके बारे में यही कहा जा सकता है-

जीने की आरजू है तो इस अदा से जी।
दुनियां में तेरे याद, तेरी दास्तां रहे॥

-प्रो. सुमेरचन्द जैन

प्राचार्य एवं पूर्व प्रांतपाल लॉयन्स इन्टरनेशनल

(22)

स्वर्गीय शिखरचन्दजी काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में मेरे सहपाठी थे। सन् 1934 में वे और मैं काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में बी.ए. में साथ-साथ पढ़ रहे थे। मैं जयपुर से बनारस गया था और वे बीकानेर से। उस जमाने में सारे राजस्थान में केवल जयपुर ही एक स्थान था जहाँ एम.ए. तक की पढ़ाई होती थी। तब भी राजस्थान, जिसमें जयपुर भी शामिल है, से कई लोग काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, प्रयाग विश्वविद्यालय, लखनऊ विश्वविद्यालय और आगरा विश्वविद्यालय में पढ़ने के लिये जाते थे। उक्त विश्वविद्यालयों में जयपुर, राजस्थान के सभी लोग मिल जाते थे। मैं और शिखरचन्दजी काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में एक ही मेस में खाते थे। वे काफी कम बोलते थे और मैं भी कम बोलने वालों में ही था, इसलिए कभी-कभी हम दोनों के बीच काफी बातें होती थीं। उनके साधु स्वभाव की मेरे मन पर बड़ी छाप है। बी.ए. की परीक्षा में उत्तीर्ण होने के बाद मैं तो जयपुर चला गया और भाई शिखरचन्दजी एल.एल. बी. की पढ़ाई के लिये वहीं रहे। वे प्रायः अपने ज्येष्ठ भ्राता: श्री कन्हैयालाल जी की तेजस्विता की चर्चा करते थे। वे स्वयं रहन-सहन में सादगी और विचारों में उच्चता के पक्ष में थे। वर्षों बाद मैं उनसे एक दो बार ही मिला होऊंगा। वे उस समय राजस्थान के किसी जिले में न्यायाधीश थे। उस वक्त मैं भी रहन-सहन की उनकी सादगी और विचारों की परिपक्वता एवं ऊँचाई से प्रभावित हुआ था। वे दुर्भाग्य से आज नहीं है पर उनकी सादगी, ईमानदारी और साधु प्रकृति की मुझे बराबर याद आती है। वे जब तक मेरे साथ काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में रहे वे पढ़ने में ही अपना चित्त लगाते थे और उनके बारे में मुझे कुछ हो या न हो पर उनका साधु स्वभाव की याद बराबर आती है और आती रहेगी।

-भंवरमल सिंघवी

कलकत्ता

श्री कोचर साहब से मेरा परिचय कुछ वर्षों पहले बिरलाग्राम (नागदा) म.प्र. में हुआ। आपके पुत्र श्री डी.के.कोचर, मेरे अच्छे मित्रों में से हैं। श्री कोचर साहब ने जिला एवं सत्र न्यायाधीश के पद से अवकाश लिया था। आप जब उदयपुर में थे उस समय हमारे परिवार से आपका काफी नजदीक का सम्पर्क रहा। कारण, मेरे ज्येष्ठ भ्राता श्री रोशनलाल जी सा. मेहता, जो जिला एवं सत्र न्यायाधीश थे व श्री कोचर साहब से नजदीक के सम्बंध थे। मेरे दूसरे बड़े भाई श्री तेज सिंह जी सा. मेहता ने भी आपके न्यायालय में अभिभाषक के रूप में कार्य किया। श्री कोचर साहब ने बताया कि हमारे परिवार के प्रति किस तरह का स्नेह व आदर है। जब भी हम मिलते थे वे अपनी पुरानी यादें बताया करते थे। जब मेरी आपसे मुलाकात हुई उसमें सबसे महत्त्वपूर्ण बात यह रही कि आप इतने सरल व सात्विक लगे, लेशमात्र भी अहम का आभास नहीं हुआ। धर्म-प्रति आपका कितना लगाव है। मैंने आपसे पूछा कि आप अपना समय कैसे निकालते हैं, तो आपने बताया कि मैं ज्यादा समय किताबों के अध्ययन में लगाता हूँ।' उनके विचारों व आचरण में जैन धर्म के मूलभूत सिद्धान्तों का पूर्ण समावेश था। यह उस व्यक्ति की महानता है कि जब कोई उनसे मिले उस पर अपनी छाप छोड़ दे। मनुष्य जीवन तब ही सफल माना जा सकता है, जब वह अपने स्वार्थों को त्याग कर, समाज व राष्ट्र के लिये कुछ करे। श्री कोचर साहब का जीवन, आदर्शमय व इस घोर आर्थिक युग में धार्मिकता से ओत-प्रोत था। हम उनके जीवन से बहुत कुछ ले सकते हैं। वे बराबर कहा करते थे कि जिस उद्देश्य से यह जीवन मिला है, उसे सार्थक करना चाहिये। हमारा दृष्टिकोण सम्यक् ज्ञान, सम्यक् दर्शन पर आधारित रहना चाहिये। श्री कोचर साहब को जब यह मालूम हुआ कि मेहतवास में जो श्री दादावाड़ी बनी है, उसमें मेरा काफी योगदान रहा है, इसका वे हमेशा आभास दिलाते रहते थे कि जो अच्छा किया है, वह हमेशा अच्छा बना रहे। यह तब ही संभव है कि जब हम त्याग के द्वारा यह कार्य करें। मैंने श्री कोचर सा. से निवेदन किया हम श्री दादाबाड़ी का न्यास (Trust) बनाना चाहते हैं एवं Trust Deed का ढांचा मैंने बना लिया है अगर आप कुछ समय देकर इसको देख लेवें। श्री कोचर साहब ने कहा कि यह तो बड़ी खुशी की बात है। मैंने वह Deed आपको दी थी।

श्री कोचर साहब जब भी नागदा पधारते थे तो मेरे से अवश्य मिलते थे। ऐसा लगता था कि उनका मेरे पर कितना स्नेह है। वे मेरी कार्य-पद्धति को

अच्छी नज़र से देखते थे व हमेशा इसमें प्रगति करने हेतु कहा करते थे। उनके मन में किसी के प्रति बुरी भावना नहीं थी। वे मानव ही महान् हैं तो हर एक से प्यार करे।

-रणजीत सिंह मेहता
नागदा (म.प्र.)

(24)

आदरणीय शिखरचन्द जी कोचर साहब से मेरा सम्पर्क बिड़लाग्राम, नागदा (म.प्र.) की ग्रेसिम स्टॉफ कॉलोनी में कुछ वर्ष पूर्व हुआ। चूंकि मैं भी न्याय विभाग में मजिस्ट्रेट कई वर्षों रहा व मूलत: वकालत ही मेरा पेशा था, अत: स्वभावत: ही हम प्रथम दर्शन से ही घनिष्ठ हो गये। दूसरी सामान्य प्रवृति मेरे व उनके बीच रही संस्कृत, साहित्य व काव्य, नाटकादि में उत्कट अभिरुचि। मैंने श्रीमान् शिखरचन्द जी में प्रकाण्ड विद्वता पाई। संस्कृत काव्य-पाठ, धार्मिक कथा प्रसंग, हिन्दी, उर्दू साहित्य ज्ञान व हिन्दू व जैन साहित्य की अभिरुचि में। वे अत्यंत निर्मल हृदय के थे। सादगी व निरभिमान की सजीव प्रतिमा थे। देव-दर्शन में अपूर्व श्रद्धा थी। नागदा शेषशायी मंदिर से लेकर आसपास एवं जहाँ-जहाँ जैन तीर्थस्थल थे वे बड़ी श्रद्धा व भक्ति के साथ वहां जाते रहते, सपरिवार।

उनका सान्निध्य हमेशा नीति के श्लोकों, लोक-कथाओं से गूंजता रहता व हम सत्संग मण्डल वाले वृद्धजन दत्तचित्त होकर उन्हें सुना करते। मेरा परम सौभाग्य था कि मैं भी कहीं-कहीं संस्कृत व हिन्दी के साहित्य चर्चा में उनका योगदान करता रहता। आदरणीय कोचर साहब की स्मृति अद्भुत थी। चालीस वर्ष पूर्व पढ़े नीतिशास्त्र, काव्य व नाटक के प्रसंग धारा प्रवाह सुनाते जाते। इस साहित्य पाठ में कहीं-कहीं मनोरंजन का पुट भी बना रहता। वे हमेशा प्रसन्नचित रहते। अपने पराये का भेद उनमें कभी न देखा सुना गया।

एक बार संक्राति पर हम सभी सत्संग मण्डल वाले जज साहब श्री शिखरचन्दजी के घर पहुँच गये। उन्हें हमारे आगमन से अपार हर्ष हुआ। अतिथ्य में कोई कमी नहीं रही।

जज साहब सनातन धर्म, जैन धर्म की कुछ अच्छी-अच्छी पुस्तकें छोड़ गये हैं। हिन्दी, संस्कृत, उर्दू की भी कुछ अमूल्यवान पुस्तकें अलमारियों में पड़ी हैं।

मैंने इन पुस्तकों के रजिस्टर्स देखे हैं व [illegible] दिये साहित्य का सदुपयोग कैसे हो। आशा है इस [illegible] जायेगा।

इस प्रसंग पर जबकि स्वर्गीय शिखरचन्दजी सा. की जीवनी लिखी जा रही है व उनके आत्मीयों से आह्वान किया गया है कि वे अपने-अपने संस्मरण उनके संबंध में हो वे जन-हितार्थ लिखें। मैंने भी अपने परिचय काल में जैसा उन्हें पाया, अपने विचार लिखे हैं। यदि इनका कुछ उपयोग उक्त पुस्तक में हो सके तो मुझे परम आनन्द होगा।

02.08.1985

-एस.एम. दुबे
रिटायर्ड डिप्टी कलेक्टर
इन्दौर (म.प्र.)

(25)

स्व. श्री शिखरचन्दजी सा. कोचर का प्रथम सम्पर्क कब हुआ यह तो पूरा याद नहीं पर उनसे अन्तिम मिलन बीकानेर में तब हुआ जब सह-सचिव के नाते भगवान महावीर विकलांग सहायता समिति की बीकानेर में शाखा खोलने के प्रसंग पर गया था। मैं मध्याह्न में जब घर पहुँचा तो गद्गद् हो गये और कहा कि आप इतने व्यस्त होते हुए भी मुझसे आकर मिले। मैं बड़ा प्रसन्न हुआ हूँ। आज नई पीढ़ी में यह प्रेमभाव क्यों खत्म होता जा रहा है ?

श्री कोचर सा. से कई बार मिलने का अवसर आया और पत्र व्यवहार तो कितना ही हुआ। वे साहित्य के बड़े रसिक थे। कोई भी पुस्तक प्रकाशित हो उनको मालूम हो और फिर उस पुस्तक के लिये उनका पत्र न आये, यह कभी संभव नहीं था।

राजकीय क्षेत्र में इतने ऊंचे पद को पाकर भी उनकी सादगी, सरलता और सज्जनता आदर्श थी। जप, तप और धार्मिक आराधना में सदा अग्रणी रहते थे। जीवन में सादगी खूब प्रवेश कर गयी थी। ऐसे व्यक्तियों से समाज गौरान्वित होता है।

नवीन पीढ़ी उनसे प्रेरणा प्राप्त कर आदर्श समाज की रचना में महान् योगदान कर सकती है। उनके जीवन से यह वाक्य सही साबित होता है- "IT IS NICE TO BE IMPORTANT, BUT, IT IS MUCH IMPORTANT TO BE NICE"

28.08.1985

-हीराचंद बैद
जयपुर

समय अपनी निर्बाध गति से नदी-प्रवाह की तरह अनन्तकाल से प्रसारित होता रहा है। इस समय प्रसार की यात्रा में, वे ही व्यक्ति अपने लक्ष्य निर्धारित कर अपनी मंजिल पर पहुँच पाते हैं जिन्होंने अपने जीवनकाल में क्षण-क्षण का सदुपयोग, निर्धारित लक्ष्य प्राप्ति हेतु किया। इससे उन्हें जीवन में सफलता तो मिली ही, वे जन-जन के प्रेरणा के स्रोत भी बने। अंग्रेजी कवि लाँगफेलो ने इसी को लक्ष्य में रख कर सही ही लिखा है :-

LIVES OF GREAT MEN, ALL REMIND US,
WE CAN MAKE OUR LIVES SUBLIME
AND DEPARTING LEAVE BEHIND US
FOOT PRINTS ON THE SAND OF TIME

चरित्रनायक का जन्म बीकानेर में दिनांक 1 अगस्त 1915 में हुआ। उनके पिता श्री जतनलालजी कोचर, जकात के महकमे में सुपरिन्टेंडेन्ट थे। वे तीन भाई थे। तीनों भाइयों में श्री चम्पालालजी कोचर सबसे बड़े थे। वे बीकानेर रियासत में एवं उसके उपरांत राजस्थान सरकार में विभिन्न ओहदों यथा, जिलाधीश, निदेशक, राजस्थान नहर, अतिरिक्त संभागयुक्त पर रहे। द्वितीय भाई श्री कन्हैयालालजी कोचर भी राजस्थान प्रशासकीय सेवा में, तहसीलदार, विकास अधिकारी आदि पदों पर रहे। श्री शिखरचन्द्रजी कोचर भाइयों में सबसे छोटे थे।

चरित्रनायक, अपने शिक्षण काल में प्रतिभा सम्पन्न छात्र रहे एवं जीवन में प्रत्येक क्षेत्र में ऊँचाईयों को छूने हेतु सतत प्रयत्नशील रहे।

चरित्रनायक के जीवनकाल का अधिकांश समय बीकानेर शहर के बाहर ही बीता। सन् 1970 में राजस्थान राज्य के झुंझुनूं से जिला एवं सत्र न्यायाधीश के पद से सेवानिवृत्त होने के उपरान्त स्थाई रूप से बीकानेर में रहने लगे।

दुर्भाग्यवश, मैं बीकानेर में रहते हुए भी उनके सान्निध्य का लाभ उठा नहीं सका। एक ऐसा व्यक्तित्व, जो जीवन की हर परिस्थिति में पूर्ण सहजता में रखते हुए, मनुष्य जीवन की आध्यात्मिक ऊँचाई को छूने में हर क्षण तत्पर रहे।

मुझे उनका सौम्य चेहरा, आज भी मेरी आँखों के सामने आ रहा है, जब आप आज से लगभग 71 वर्ष पूर्व कोलकाता में हमारे निवास पर पधारे। मेरे ख्याल से वह सन् 1937 का समय होना चाहिये। मेरी उम्र करीब 12 वर्ष की होनी चाहिये। जब वे बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय (B.H.U.) में LL.B. (Final) में पढ़ते थे। साथ में उनके बड़े भाई साहब श्रीमान् चम्पालालजी कोचर थे। बनारस से कोलकाता हमारे परिवार व अन्य निकट सम्पर्क वालों से मिलने आने का समय है।

आश्चर्य की बात है कि सन् 1937 की यह घटना मेरे नजरों में आज भी

वैसी ही है जैसी कि उस समय थी, जबकि उनके जीवन का अधिकांश समय बीकानेरके बाहर ही बीता। सन् 1970 में राजस्थान उच्च न्यायिक सेवा (R.H.J.S.) से निवृत्त होने के उपरान्त बीकानेर में स्थायी रूप से रहने लगे थे।

चूँकि मैं शहर के बाहर रहता था और शहर में विशेष अवसर आदि से ही आना होता था तो उनका सान्निध्य प्राप्त कर एक आनन्द की अनुभूति होती। उनका राजकीय सेवानिवृत्ति के बाद बीकानेर में निवास होना, एक बड़े सौभाग्य की बात थी, पर दुर्भाग्यवश, दूरी के साथ अन्य व्यस्तताओं के कारण उनके विशाल ज्ञान एवं अनुभव तथा आध्यात्मिक जीवन की ऊँचाइयों को जीवन में उतारने का लाभ नहीं लिया जा सका। उनकी सम्पूर्ण दिनचर्या समय की अमूल्यता को ध्यान में रखते हुए, एक-एक क्षण का सदुपयोग करने का ही रहता। इस प्रकार, समाज में एक आदर्श जीवन की गहरी छाप छोड़कर, उनका स्वर्गवास होना, समाज के लिये गहरी अपूरणीय क्षति थी।

मुझे अत्यन्त आश्चर्य भी होता है कि जिस व्यक्ति का शैक्षणिक जीवन चर्या (Career) प्रथम कक्षा से लेकर अंतिम विधि स्नातक (LL.B.) बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय से होने तक अत्यन्त उच्च कोटि का था (यथा सदैव प्रथम श्रेणी से उत्तीर्ण आना, कानून की परीक्षा में पूरे बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय में चतुर्थ स्थान प्राप्त करना आदि।) उसके उपरान्त भी उनका उच्च न्यायालय में न्यायाधीश के रूप पदोन्नति नहीं हुई। इससे स्पष्ट होता है कि सरकारी नौकरियों में ऐसे कर्त्तव्यनिष्ठ, ईमानदार एवं अपने कार्य में दक्ष होते हुए भी उनके साथ पूर्ण न्याय नहीं होता है, जिससे इतना उच्च व्यक्ति, अपनी सही ऊँचाई पर नहीं पहुँच पाता है।

समाज में ऐसे सर्वांगीण ऊँचाई वाले व्यक्ति बहुत कम होते हैं। प्रभु से प्रार्थना है कि उनके उच्च कोटि के जीवन से प्रेरणा लेकर, समाज के अधिकाधिक व्यक्ति उन ऊँचाइयों तक पहुँच सके ऐसा संबल प्रदान करें।

-किशनचंद बोथरा
बीकानेर

(27)

सूर्य पूर्व में उदय होता है एवं पश्चिम में अस्त होता है। तारे रात को टिमटिमाते है परन्तु सूर्योदय होने पर छिप जाते हैं। यही हाल मनुष्य जीवन का है। मनुष्य जन्म लेता है लेकिन एक दिन उसकी मृत्यु अवश्य आती है। लेकिन जो मनुष्य सुकार्य करता है, उसकी स्मृति दुनिया में रह जाती है। शिखरचन्द्रजी

एक ऐसे महान् व्यक्ति थे जिनकी सादगी, बुद्धिमत्ता, विद्वत्ता, सच्चाई, ईमानदारी जन जन के हृदय में अमिट है। उनका जन्म कोचर जाति में हुआ, जिस जाति का सदियों पुराना ओसवाल समाज का अपना ही इतिहास है एवं राजघराने में बहुत प्रभुत्व था एवं आधुनिक युग में ओसवाल समाज सबसे प्रसिद्ध है। श्रीअनाड़मलजी के तीन पुत्र हुए, श्री रतनलालजी, श्री जतनलालजी, श्री राजमलजी। आप श्री जतनलालजी के सबसे छोटे पुत्र थे। आपके बड़ेभाई श्री चम्पालालजी राजस्थान प्रान्त में गंगानगर, नागौर, बीकानेर आदि जिलों के कलेक्टर रह चुके है एवं छोटे भाई श्रीकन्हैयालालजी डिप्टी कलेक्टर रह चुके है। जब आप पढ़ते थे उस समय आपके पिताजी का देहान्त हो गया। आप उस समय अपने काकाजी श्री राजमलजी से बारबार सलाह मशविरा करते रहते थे। अपनी कर्मठता एवं तीक्ष्ण बुद्धि के धनी होने के कारण आपने बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय में LL.B. पास किया। बनारस में अपने बड़े भाई श्री कन्हैयालाल जी एवं अन्य सहपाठी LL.B कोर्स उनके पास पढ़ा करते थे। यह एक उनकी बुद्धि की विलक्षणता थी। LL.B. पास करके शुरू में आपने वकालत की प्रेक्टिस शुरू की, लेकिन बाद में न्यायिक सेवा में आ गये। रिटायरमेंट के समय आप राजस्थान हाईकोर्ट के सेशन जज थे। न्यायाधीश की कुर्सी पर बैठने पर भी आपने अपनी सच्चाई को नहीं छोड़ा एवं समस्त अदालती फैसले सच्चाई के साथ किये। आप संस्कृत के बहुत बड़े विद्वान थे। आपने अनेक लेख एवं कवितायें लिखी हैं। आपको किताबें संग्रह करने का बहुत बड़ा शौक था एवं आपके घर में किताबें एवं बहुमूल्य शास्त्रों का अद्वितीय एवं अमूल्य संग्रहालय है। उनमें आलस किंचित मात्र भी नहीं था। प्रतिदिन रात को जल्दी सोना एवं सुबह जल्दी उठकर मन्दिर में पूजा वगैरह करना उनका प्रतिदिन का नियम था। जैनधर्म के अनुयायी होते हुए भी आप सर्व धर्म समन्वय के साथ सामाजिक सेवाओं में भी भाग लेते थे।

मैं कलकत्ता से जब कभी बीकानेर जाता था, उनके सान्निध्य में किताबें पढ़ने का मौका बराबर मिलता था। उनके लाईब्रेरी में कुछ ऐसे ग्रन्थ एवं किताबें हैं जो आज भी सारे भारत में मिलनी दुर्लभ है। आपके जीवन के संबंध में जितना भी लिखा जाये कम है।

-चांदमल कोचर
कलकत्ता

पूजनीय स्व. श्री शिखरचन्द्रजी मेरे रिश्ते में दादासा थे। जिला एवं सत्र न्यायाधीश के पद पर आसीन होने के बाद में भी उनमें अभिमान नहीं था। पद से अवकाश प्राप्त करने के वाद मेरा अक्सर उनसे धार्मिक स्थल पर मिलना होता था। उनमें धर्म के प्रति निष्ठा एवं जीवन में सादगी थी। उन्होंने सदैव धार्मिक गोष्ठियों, धार्मिक पाठशाला एवं जैन कॉलेज के कार्य में रुचि दिखाई। जब कभी मेरा उनसे घर पर मिलना होता तो मैं उन्हें अवकाश के क्षणों में किसी न किसी पुस्तक को पढ़ने में लीन पाता। मेरी जब किसी धार्मिक विषय पर चर्चा होती तो वे उसे सरल भाषा में स्पष्टीकरण करते। ऐसी उनमें सरलता थी। जहाँ उनका कानून सम्बंधी ज्ञान प्रगाढ़ था वहाँ जैन धर्म के कर्म-ग्रंथों का ज्ञान कम नहीं था। अव उनकी रिक्तता पूरा होना असंभव है। वे हमेशा याद आते रहेंगे।

15.05.1986

- माणकचन्द कोचर

सेवानिवृत्त मुख्य प्रबंधक

स्टेट बैंक ऑफ बीकानेर एण्ड जयपुर

(29)

मेरा स्व.श्री चम्पालाल जी, स्व. श्री कन्हैयालाल जी तथा आपके पिता श्री शिखरचन्द जी सभी से निकट सम्पर्क रहा है। श्री चम्पालाल जी की मेरे पर पूर्ण कृपा थी तथा विश्वास भी। जब कभी ऐसा अवसर आया, उन्होंने मुझे सही मार्ग बताया। श्री कन्हैयालाल जी मेरे नवमी कक्षा से बारहवीं कक्षा तक सहपाठी रहे हैं। हमारा आपस में बहुत ज्यादा स्नेह था। राज्य सरकार से अवकाश प्राप्त होने के बाद, मैं उनके पास प्राय: जाया करता था। बहुत दिन होने पर अगर मैं नहीं जाता तो वे मेरे पास आ जाते। हमारी मित्रता नि:स्वार्थ भाव की थी।

श्री शिखरचन्द्रजी के पास मेरा निकट संबंध चुरू में हुआ। वे चुरू में जिला न्यायाधीश थे। मैं प्राय: रविवार को छुट्टी के दिन उनके पास जाया करता था। वे बहुत सादगी से रहते थे। ईमानदारी में इस जमाने में उनका मुकाबला करने वाला कोई विरला ही माई का लाल होगा। इसी कारण वे.अपनी कोठी में किसी से बातचीत नहीं करते थे। सादगी के साथ-साथ खर्च में भी फिजूल का खर्च नहीं करते थे। कारण, उनकी आवश्यकताएँ सीमित थीं।

मैंने सुन रखा था कि वे बहुत ईमानदार हैं। चुरू में मुझ इसका अनुभव हुआ।

रतनगढ़ के किसी कोचर का मुकद्दमा, उस जिला न्यायालय में था। रतनगढ़ से वे कोचर मेरे संबंधी बैद को लेकर मेरे पास आये और मुझे सिफारिश

करने को कहा। मैंने उनको साफ-साफ कह दिया कि भाई साहब रतनगढ़ में मुन्सिफ रह चुके हैं आपको जानते हैं। अगर केस सही है तो न्याय होगा मेरे कहने से तो आपको मदद नहीं मिलेगी। शायद गलत प्रभाव पड़े।

इसी प्रकार बीकानेर के एक स्वर्णकार, जो मेरा खूब परिचित था, उसके भाणजे के विरुद्ध, जो सुजानगढ़ में रहता था। दूध में पानी मिलाना आदि सेल-भेल का मुकदमा सुजानगढ़ अदालत में था। जिसमें वह हार गया। अपील चुरू के जिला न्यायालय में की। मेरा परिचित होने से मेरे पास आया। मैंने कहा, अगर तुम्हारा केस मजबूत है तो न्याय होगा। वकील कर लो। उसकी अपील मंजूर हो गई।

इसी प्रकार और भी सिफारिशें मेरे पास आई।

एक दफे चूरू के जैन मन्दिर से चांदी के सिद्धचक्र पद जी के गट्टे में चोरी हो गई। इसमें उस वक्त के भाव से अन्दाज 10-15 रु. के करीब चांदी होगी। सेवग के खिलाफ चोरी का इल्जाम लगाने व कार्यवाही करने की किसी ने राग-द्वेषवश पुलिस में रिपोर्ट की। सेवग सुगनाराम बूढ़ा आदमी था और दो पीढ़ी से मन्दिर की पूजा, सामान की संभाल व पास में उपाश्रय की, सामान की संभाल, सफाई, वगैरह देखरेख करता था। उसके चार्ज में मन्दिर व उपाश्रय की हजारों रुपयों की चीजें व जायदाद थी। इस कारण मैंने विचारा कि सेवग दस पंद्रह रुपये के लिये चोरी करे जंचता नही। मैंने जज साहब से बात की। जज साहब ने कहा कि भाई मैं श्री फतहचंदजी कोठारी के मकान में रहता हूँ इसलिये मेरी दखलन्दाजी उचित नहीं होगी। कारण फतेहचंदजी कोठारी मन्दिर के ट्रस्टी थे। आपको उचित लगे, कार्यवाही कर सकते हो।

रिटायर होने के बाद बीकानेर में पधारे। यहाँ पर भी सादगी से रहना। इतना बड़ा ऑफिसर होते हुए तनिक भी अभिमान नहीं। विनय गुण भी उनमें पूरा था।

आध्यात्मिक ज्ञान शिविर कोचरों के पुरुषों के उपाश्रय में हर रविवार को लगता था। आप उसके उपसभापति थे। श्री आत्म वल्लभ समुद्र धार्मिक पाठशाला के आप अन्तिम समय तक अध्यक्ष पद को सुशोभित कर रहे थे। आपके प्रयास से लड़कों के साथ-साथ बालिकाओं को भी शिक्षण मिली। बालिकाओं के लिये एक अलग अध्यापिका की नियुक्ति कर बराबर अलग शिक्षण देना शुरू करवा दिया। धार्मिक पाठशाला के लिये वे अकेले जाकर बड़ी रकम व चन्दा लाया करते थे।

आप शांत प्रवृत्ति के आदमी थे। हर काम जहां तक संभव हो अपने हाथों से ही करते थे। शरीर भारी होते हुए भी बिना आलस, अपना काम खुद

करते। कोई दुर्गुण या व्यसन नहीं था। न कभी ताश आदि खेलते थे। अवकाश के समय स्वाध्याय, सतशास्त्र पठन ही उनका जीवन था। वे संस्कृत के भी अच्छे ज्ञाता थे। हजारों श्लोक उनको कंठस्थ थे। उनके बड़े भाई कन्हैयालालजी कहा करते थे। "शिखर की याद शक्ति बहुत तेज है।" स्वाध्याय शिविर में जब भाषण देते थे तो संस्कृत के श्लोकों की झड़ी लग जाती थी।

- जसकरण कोचर, बीकानेर

(30)

(अ)

मैं व शिखरचन्द्रजी कक्षा 7 में सहपाठी थे। हम लोगों के बैठने की सीट पास-पास थी। श्री नरोत्तमदासजी स्वामी हमें संस्कृत पढ़ाते थे। मैं संस्कृत में बहुत कमजोर था। भाई श्री शिखरचन्द्रजी की संस्कृत में अच्छी याददाश्त थी एवं मेहनती भी थे। उस समय कक्षा में गलती होने पर अध्यापक डंडे या थप्पड़ मारने की सजा मिलती थी। एक दिन संस्कृत के पीरियड में मैंने भाई श्री शिखरचन्द्रजी से कहा कि आज मुझे रूप याद नहीं है, तुम कुछ मदद करो। उन्होंने कहा कि जरूर करूँगा। उस वक्त मास्टर साहब ने मुझे 'पद्' धातु के रूप पूछे। भाई श्री शिखरचन्द्रजी ने किताब खोलकर डेस्क के अन्दर रख दी। मैंने उसे देखने की कोशिश की एवं देख भी ली थी और प्रश्न का जवाब भी सही दे दिया। मास्टर साहब को शक हुआ कि इसने सही जवाब कैसे दे दिया ? शक होने पर घूमते-घूमते हमारी सीट पर आये। खुली किताब उनकी नजर में आ गयी। उन्होंने पूछा यह कब से शुरू किया। मैंने कोई जवाब नहीं दिया। मौन रहा। भाई श्री शिखरचन्द्रजी पास में बैठे थे। उन्होंने उनसे पूछा कि किताब किसने खोली। श्री शिखरचन्द्रजी ने सरल भाव से जवाब दिया यह अंग्रेजी विषय में मेरी मदद करता है तो मैंने इसकी सहायता के लिये किताब खोल दी। इस पर मास्टरजी बहुत नाराज हुए और कहा कि मैं चोर को मारने की बजाय चोर की माँ को मारना ठीक समझता हूँ और उन्हें बुरी तरह से पीटा। उन्हें पाँच-चार डंडे व थप्पड़ भी लगाये। पीरियड खतम होने के बाद आधी छुट्टी हुई। सब विद्यार्थियों के सामने श्री शिखरचन्द्रजी ने कहा कि तुमने मुझे पिटवा दिया। यह उनकी सरलता व सत्यता का नमूना है।

(ब)

मैं जवाहरात की दलाली करता हूँ। जिस समय श्री शिखरचन्द्रजी जज थे उस समय की बात है। एक महेश्वरी सज्जन पर किन्हीं राजनीतिक व्यक्तियों

करने को कहा। मैंने उनको साफ-साफ कह दिया कि भाई साहब रतनगढ़ में मुन्सिफ रह चुके हैं आपको जानते हैं। अगर केस सही है तो न्याय होगा मेरे कहने से तो आपको मदद नहीं मिलेगी। शायद गलत प्रभाव पड़े।

इसी प्रकार बीकानेर के एक स्वर्णकार, जो मेरा खूब परिचित था, उसके भाणजे के विरुद्ध, जो सुजानगढ़ में रहता था। दूध में पानी मिलाना आदि सेल-भेल का मुकद्दमा सुजानगढ़ अदालत में था। जिसमें वह हार गया। अपील चुरू के जिला न्यायालय में की। मेरा परिचित होने से मेरे पास आया। मैंने कहा, अगर तुम्हारा केस मजबूत है तो न्याय होगा। वकील कर लो। उसकी अपील मंजूर हो गई।

इसी प्रकार और भी सिफारिशें मेरे पास आई।

एक दफे चूरू के जैन मन्दिर से चांदी के सिद्धचक्र पद जी के गट्टे में चोरी हो गई। इसमें उस वक्त के भाव से अन्दाज 10-15 रु. के करीब चांदी होगी। सेवग के खिलाफ चोरी का इल्जाम लगाने व कार्यवाही करने की किसी ने राग-द्वेषवश पुलिस में रिपोर्ट की। सेवग सुगनाराम बूढ़ा आदमी था और दो पीढ़ी से मन्दिर की पूजा, सामान की संभाल व पास में उपाश्रय की, सामान की संभाल, सफाई, वगैरह देखरेख करता था। उसके चार्ज में मन्दिर व उपाश्रय की हजारों रुपयों की चीजें व जायदाद थी। इस कारण मैंने विचारा कि सेवग दस पंद्रह रुपये के लिये चोरी करे जंचता नही। मैंने जज साहब से बात की। जज साहब ने कहा कि भाई मैं श्री फतहचंदजी कोठारी के मकान में रहता हूँ इसलिये मेरी दखलन्दाजी उचित नहीं होगी। कारण फतेहचंदजी कोठारी मन्दिर के ट्रस्टी थे। आपको उचित लगे, कार्यवाही कर सकते हो।

रिटायर होने के बाद बीकानेर में पधारे। यहाँ पर भी सादगी से रहना। इतना बड़ा ऑफिसर होते हुए तनिक भी अभिमान नहीं। विनय गुण भी उनमें पूरा था।

आध्यात्मिक ज्ञान शिविर कोचरों के पुरुषों के उपाश्रय में हर रविवार को लगता था। आप उसके उपसभापति थे। श्री आत्म वल्लभ समुद्र धार्मिक पाठशाला के आप अन्तिम समय तक अध्यक्ष पद को सुशोभित कर रहे थे। आपके प्रयास से लड़कों के साथ-साथ बालिकाओं को भी शिक्षण मिली। बालिकाओं के लिये एक अलग अध्यापिका की नियुक्ति कर बराबर अलग शिक्षण देना शुरू करवा दिया। धार्मिक पाठशाला के लिये वे अकेले जाकर बड़ी रकम व चन्दा लाया करते थे।

आप शांत प्रवृत्ति के आदमी थे। हर काम जहां तक संभव हो अपने हाथों से ही करते थे। शरीर भारी होते हुए भी बिना आलस, अपना काम खुद

करते। कोई दुर्गुण या व्यसन नहीं था। न कभी ताश आदि खेलते थे। अवकाश के समय स्वाध्याय, सतशास्त्र पठन ही उनका जीवन था। वे संस्कृत के भी अच्छे ज्ञाता थे। हजारों श्लोक उनको कंठस्थ थे। उनके बड़े भाई कन्हैयालालजी कहा करते थे। "शिखर की याद शक्ति बहुत तेज है।" स्वाध्याय शिविर में जब भाषण देते थे तो संस्कृत के श्लोकों की झड़ी लग जाती थी।

- जसकरण कोचर, बीकानेर

(30)

(अ)

मैं व शिखरचन्द्रजी कक्षा 7 में सहपाठी थे। हम लोगों के बैठने की सीट पास-पास थी। श्री नरोत्तमदासजी स्वामी हमें संस्कृत पढ़ाते थे। मैं संस्कृत में बहुत कमजोर था। भाई श्री शिखरचन्द्रजी की संस्कृत में अच्छी याददाश्त थी एवं मेहनती भी थे। उस समय कक्षा में गलती होने पर अध्यापक डंडे या थप्पड़ मारने की सजा मिलती थी। एक दिन संस्कृत के पीरियड में मैंने भाई श्री शिखरचन्द्रजी से कहा कि आज मुझे रूप याद नहीं है, तुम कुछ मदद करो। उन्होंने कहा कि जरूर करूँगा। उस वक्त मास्टर साहब ने मुझे 'पद्' धातु के रूप पूछे। भाई श्री शिखरचन्द्रजी ने किताब खोलकर डेस्क के अन्दर रख दी। मैंने उसे देखने की कोशिश की एवं देख भी ली थी और प्रश्न का जवाब भी सही दे दिया। मास्टर साहब को शक हुआ कि इसने सही जवाब कैसे दे दिया ? शक होने पर घूमते-घूमते हमारी सीट पर आये। खुली किताब उनकी नजर में आ गयी। उन्होंने पूछा यह कब से शुरू किया। मैंने कोई जवाब नहीं दिया। मौन रहा। भाई श्री शिखरचन्द्रजी पास में बैठे थे। उन्होंने उनसे पूछा कि किताब किसने खोली। श्री शिखरचन्द्रजी ने सरल भाव से जवाब दिया यह अंग्रेजी विषय में मेरी मदद करता है तो मैंने इसकी सहायता के लिये किताब खोल दी। इस पर मास्टरजी बहुत नाराज हुए और कहा कि मैं चोर को मारने की बजाय चोर की माँ को मारना ठीक समझता हूँ और उन्हें बुरी तरह से पीटा। उन्हें पाँच-चार डंडे व थप्पड़ भी लगाये। पीरियड खतम होने के बाद आधी छुट्टी हुई। सब विद्यार्थियों के सामने श्री शिखरचन्द्रजी ने कहा कि तुमने मुझे पिटवा दिया। यह उनकी सरलता व सत्यता का नमूना है।

(ब)

मैं जवाहरात की दलाली करता हूँ। जिस समय श्री शिखरचन्द्रजी जज थे उस समय की बात है। एक महेश्वरी सज्जन पर किन्हीं राजनीतिक व्यक्तियों

झूठा मुकदमा कर दिया एवं तरह-तरह से उन्हें तंग करने लगे। वे सेठ बीकानेर आये। वे मेरे से माल लिया करते थे। मैं उनके पास गया। माल बेचने के बाद जब हम बातें कर रहे थे तो उन्होंने पूछा कि क्या तुम श्री शिखरचन्द्रजी (जज साहब) को जानते हो। मैंने कहा कि वे मेरे सहपाठी रह चुके हैं एवं मेरे भाई भी हैं। उन्होंने मुझे कहा कि पैसे कितने भी लग जायें लेकिन तुम सिफारिश करके मुकदमा मेरे पक्ष में करवा दो। मैंने उनसे कहा कि मैं कह तो जरूर दूंगा। जितना दबाव डाल सकता हूँ उतना दबाव भी डाल दूंगा। श्री शिखरचन्द्रजी बीकानेर 4-5 दिन के लिये छुट्टी पर आये थे। मंदिर से आते वक्त उनसे मुलाकात हुई। कुछ इधर-उधर की बातें करने के बाद मैंने उनसे कहा कि सेठजी अच्छे व्यक्ति हैं। उन लोगों ने सेठजी पर झूठा केस बनाया है। वे सेठ मेरे ग्राहक हैं और मुझे कहा भी है कि चाहे रुपये कितने भी खर्च हो जाये, ये काम तुम करवा दो। शिखरचन्द्रजी का जवाब था। घर की बात घर में, चौक की बात चौक में और अदालत की बात अदालत में। आईंदा कभी ऐसी बात नहीं करना। मैं इसके सख्त खिलाफ हूँ। आप हैं इसलिये मैं कुछ कहता नहीं हूँ। फिर मैंने कहा कि वह सेठ सच्चा है। मुकदमा झूठा है। इसको आप ध्यान में रखना। मुझे जवाब मिला, मेरी अदालत में दूध का दूध और पानी का पानी होगा। आखिर 3-4 महिने बाद वह मुकदमा उसी सेठ के पक्ष में हुआ। झूठे झूठ हुए। सेठ ने मुझे कहा कि जितने रुपये ठहराये हों उतने ले लो। मैंने कहा कि एक कोड़ी भी किसी को देनी लेनी नहीं है।

यह उनकी ईमानदारी व सत्यता का नमूना है।

– **जतनलाल कोचर** (लल्लू भाई)
बीकानेर

(31)

मेहता शिखरचन्द्रजी कोचर व मैं हनुमानगढ़ में बचपन में चौथी कक्षा में साथ-साथ पढ़ते थे। उनके पिताजी महाराजा गंगासिंहजी के राज्यकाल में उच्च पद पर सरकारी नौकरी पर हनुमानगढ़ में थे। मैं मेरी बुआ के घर रहता था। हम एक वर्ष तक साथ-साथ पढ़े। हनुमानगढ़ में उस समय कक्षा 5 तक स्कूल था। उसके बाद मेहता शिखरचन्द्रजी उच्च पढ़ाई के लिये बीकानेर चले गये। बीकानेर में पढ़ाई करने के बाद वाराणसी के काशी हिन्दू विश्वविद्यालय से बी.ए. की परीक्षा पास की। उसके बाद एल.एल.बी. की परीक्षा भी पास की। इसके बाद सरकारी नौकरी में आये। उन्नति करते-करते सेशन जज के पद पर पहुँच गये।

इतने ऊँचे पद पर पहुँचने पर भी उन्होंने एक बार भी रिश्वत नहीं खाई एवं न्याय करते रहे। रतनगढ़, बालोतरा, श्रीगंगानगर में रहे। वे कोर्ट में भी मुझसे आदरपूर्वक मिले और मुझे पूरा सम्मान दिया। इतने उच्च पद पर होते हुए भी उनकी धार्मिक प्रवृत्ति इतनी थी कि वे रोजाना मंदिर जाते थे। समाज सेवा के भी बहुत काम किये। बीकानेर के जैन कॉलेज में भी अपनी सेवाएं दी। वे एक धामिक समाज-सेवक थे। समाज-कल्याण के लिये उन्होंने बहुत कुछ किया। वे न्यायप्रिय शासक, समाज सुधारक विभूति थे। उन्होंने उच्च पद होते हुए भी सादा जीवन बिताया।

04.07.2007

- गोपालचन्द्र जैन
चौटाला (हरियाणा)

(32)

मुझे यह जानकर अत्यन्त प्रसन्नता हुई कि स्व. शिखरचन्द्रजी साहब कोचर के व्यक्तित्व एवं कृतित्व पर एक ग्रंथ का प्रकाशन होने जा रहा है, जिसके लिए प्रकाशक एवं संपादन मण्डल को मेरा हार्दिक साधुवाद।

सादा जीवन उच्च विचार की प्रतिमूर्ति स्व. शिखरचन्द्रजी साहब विराट् व्यक्तित्व के धनी पुरुष थे। जज साहब के नाम से प्रसिद्ध श्री कोचर साहब अपने समय में बीकानेर ओसवाल समाज के अंगुलियों पर गिने जाने वाले चंद उच्च शिक्षा प्राप्त व्यक्तियों में से एक थे। बीकानेर जैन समाज के हर धार्मिक आयोजन में आप सदैव उपस्थित होते एवं बड़ी संयमित भाषा में आप अपना विद्वतापूर्ण उद्बोधन देते थे।

आप जीवन भर गुणग्राही रहे। मैं अक्सर आपको प्रसिद्ध साहित्यकार श्री अगरचन्दजी नाहटा से विभिन्न विषयों पर चर्चा करते देखता था। ऐसे व्यक्तित्व को शब्दों की सीमा में नहीं बांधा जा सकता लेकिन समाज का यह नैतिक कर्त्तव्य है कि वह ऐसी विभूतियों के प्रति अपनी कृतज्ञता ज्ञापित करे।

ग्रंथ के सफल प्रकाशन हेतु मेरी पुनः शुभकामनाएँ।

- सूरजमल पूगलिया
बीकानेर

(33)

वे एक महान् व्यक्तित्त्व के धनी थे। उनके जीवन का प्रत्येक क्षण सादगी व सहिष्णुता से बीता। उनकी पुत्री होने के नाते मुझे उनके साथ रहने का परम सौभाग्य प्राप्त हुआ। आज जबकि वे हमारे बीच नहीं है तो उनका जीवन

हमारे सामने खुली किताब है। वे दूरदर्शी व्यक्ति थे। ऐसा लगता है कि वे आज भी हमारे बीच हैं व हमें सन्मार्ग पर चलने की प्रेरणा दे रहे हैं।

वे अपने मातहतों से भी सम्मानपूर्ण व्यवहार करते थे। उन्हें ऊँच-नीच का भेदभाव छू तक नहीं गया था। वे अपने से बड़ी उम्र के व्यक्ति को नाम के आगे जी कहकर पुकारते थे। एक बार की बात है कि उस समय मेरी उम्र लगभग 5 वर्ष की होगी। मैं स्कूल से आ रही थी। मेरे से थोड़ा आगे आसजी नामक चपरासी, जो हमारे यहाँ काम करते थे, जा रहे थे। मैंने कौतुहलवश उन्हें, आसकी कह कर पुकारा। पता नहीं, उन्होंने सुना या न सुना पर पीछे से आते हुए पिताजी ने सुन लिया। वे रास्ते से ही मेरा कान पकड़कर घर लाये और बोले फिर पुकारेगी अपने से बड़ों को इस तरह। उस दिन के बाद मैंने कभी किसी से अभद्र व्यवहार नहीं किया।

वे सभी से आत्मीयता से मिलते थे व छोटे बड़े सभी से प्रेम पूर्ण व्यवहार करते थे। उन्हें अपने पद का घमंड नहीं था। जिला एवं सत्र न्यायाधीश होते हुये भी मानव मात्र के प्रति दयावान थे। वे धार्मिक विचारों के व्यक्ति थे। सुबह व सायं प्रतिदिन अपना स्वाध्याय किया करते थे। उन्होंने कई स्तवन खुद बनाये। वे आत्मविकास में हमेशा सजग रहे। वे चिन्तनशील व्यक्ति थे।

वे मुकदमों के फैसले खुद ही लिखा करते थे। वे हमेशा कहा करते थे अपराधी भले ही छूट जाय पर बेगुनाह को कभी सजा न मिले। वे भगवान से यही प्रार्थना करते थे कि हे प्रभु मेरे हाथ से किसी का बुरा न हो जाय। वे अपने पास चल रहे मुकदमे वाले को घर में घुसने नहीं देते थे।

वे सादगी पूर्ण जीवन व्यतीत करते थे। वे मितव्ययी व मृदुभाषी थे। वे हर चीज को सम्भाल कर रखते थे। उन्हें हर चीज संग्रह करने का शौक था। उन्होंने अपने हाथ से लिखकर, सुभाषित संग्रह की कापियाँ तैयार की जिसमें नीति के श्लोक कवितायें आदि संग्रहीत थी। वे खाली समय में पुस्तकें पढ़ते रहते थे। उन्हें ज्योतिष का भी शौक था। उन्होंने इतनी पुस्तकें इकट्ठी कर रखी थी जिसकी लाइब्रेरी बन जाय। वे सभी प्रकार की पुस्तकें चाव से पढ़ते थे। चाहे बच्चों की कहानी पुस्तकें हो या धार्मिक ग्रंथ। वे संस्कृत व हिन्दी के विद्वान् थे। उन्होंने कई कवितायें व लेख लिखे थे। वे सभी धर्मों का आदर करते थे। वे सभी कार्यक्रमों में भाग लिया करते थे। वे अक्सर कहा करते थे कि 'गुण ग्रहण का भाव रहे नित्य, दृष्टि न दोषों पर जाय।'

वे सहनशील व्यक्ति थे। उन्हें गुस्सा नहीं आता था। वे हमेशा धैर्य से काम लिया करते थे। वे अपने सभी कार्य स्वयं करते थे। उनमें प्रमाद बिल्कुल

नहीं था। वे किसी कार्य को तुच्छ नहीं समझते थे। कठिन परिस्थिति में भी घबराते नहीं थे। उन्हें दूसरों की आलोचना कतई पसन्द नहीं थी वे कहा करते थे "तुझे पराई क्या पड़ी, अपनी निवेड़ तूं।" उनकी याददाश्त जबर्दस्त थी। अपने जीवन में घटने वाली अनेक घटना उन्हें अक्षरश: याद थी। अपने जीवन में पूर्णत: सजग रहे ओर ईमानदारी का जीवन जिया।

उन्होंने रसनेन्द्रिय को वश में कर रखा था। उन्हें खाने में कभी गर्म, ठंडा, फीका व तीखा मिल जाता था, पर वे अपने मुँह से कभी इसकी आलोचना नहीं करते थे। उन्होंने परिवार में कभी कलह का वातावरण निर्मित नहीं किया। उनके जीवन में शाँति का साम्राज्य था। अन्तिम समय में जब वे इतने बीमार व उनकी कमर में गहरे घाव हो गये थे, फिर भी उन्होंने कभी उफ न की। ऐसी महान् विभूतियाँ संसार में विरली ही होती हैं- यह क्षति अपूरणीय है।

– श्रीमती किरण कुमारी बोथरा
रायपुर

(34)

परम पूज्य स्व. श्री शिखर चन्द्र जी कोचर साहब, अवकाश प्राप्त जिला एवं सत्र न्यायाधीश की पुण्य स्मृति में उनकी जीवनी से सम्बद्ध पुस्तक प्रकाशित करने जा रहे है मुझे बड़ी प्रसन्नता हुई। मैं भी उनके बारे में दो शब्द लिख रहा हूँ।

स्व. श्री शिखर चन्द्र जी कोचर साहब के बारे में जितना लिखा जाय वह थोड़ा है।

जिस प्रकार अकबर के दरबार में नव रत्न थे, उसी प्रकार कोचर साहब बीकानेर समाज में नव रत्नों में से एक थे। मेरे रिश्ते में दादासा थे। वे श्री आत्मवल्लभ समुद्र जैन पाठशाला के अध्यक्ष करीब छ: वर्षों तक रहे।

जज् साहब किसी भी सम्प्रदाय के कार्यक्रम तेरापन्थ, बाईस सम्प्रदाय, खतरगच्छ, पार्श्वचन्द्रगच्छ, तपागच्छ एवं अथवा हिन्दू समाज में अग्रणी होकर भाग लेते थे।

जज साहब से बीकानेर समाज से कोई संस्था बची नहीं थी यथा, नेहरू शारदा पीठ, श्री जैन पोस्ट ग्रेजुएट कॉलेज, रामपुरिया कॉलेज, श्री आत्मवल्लभ समुद्र जैन पाठशाला, श्री महावीर जैन मंडल , भारत जैन महामंडल आदि सभी संस्थाओं में सक्रिय भाग लेते थे। उनके जीवन से सबसे बड़ी उपलब्धि उनकी समय की पाबन्दी थी अर्थात् जिस स्थान पर या संस्था द्वारा उन्हें जो समय दिया

जाता था, उससे वे हमेशा दो-तीन मिनिट पूर्व ही पहुँच जाते थे अत: उनके जीवन से समय पर हर कार्य करने की शिक्षा लेनी चाहिये।

उन्होंने कोचर समाज की प्रारम्भिक उत्पत्ति से लेकर वर्तमान में कोचर समाज में कितने परिवार कहाँ-कहाँ किन-किन पदों पर है उसका पूरा चार्ट आपने तैयार किया, जो एक उपलब्धि है।

जज़ साहब लेखक, प्रकाशक साहित्यकार, कवि, धर्मप्रेमी, समाज सेवी, ईमानदार व्यक्ति थे। उनके पास इतना साहित्य था कि साधु, सन्त एवं पी.एच. डी. लेने वाले शोधकर्ता भी आपके पास आते थे। अत: मैं जज साहब के बारे में जितना लिखूं उतना ही थोड़ा है।

09.09.1985 -रतनचंद कोचर

बीकानेर

(35)

जज साहब कोचर शिखरचन्द्रजी की याद अभी भी मेरे दिमाग में तरोताजा है - आप चुरू में न्यायाधीश पदासीन थे मेरा आपसे काफी सम्पर्क रहा - आप व्यवहार चक्षु से नय को कभी भी नहीं देखते थे। पर अन्तर चक्षु से सच्चाई की पहचान करते थे- ''सच्चं लोयम्मि, सार भूयम्''

भगवान महावीर की वाणी के उपासक थे- सच्चा बोलने वाला उनके दिल को जीत सकता था- वे पक्षपात को महत्त्व नहीं देते थे- निर्भीक न्याय करते थे। यह खास विशेषता मैंने उनमें देखी। न्याय क्षेत्र उनकी सत्य प्रियता और प्रमाणिकता से प्रेरणा ले- यही अपेक्षा है।

15.05.1986 मानसिंह बैद

मुम्बई

(36)

श्रद्धेय स्व. श्री महेता शिखरचन्द्रजी सा. कोचर से मेरा कुछ वर्षों का ही परिचय रहा किन्तु इस अल्प अवधि में भी मैं उनकी धर्म निष्ठा, धर्म परायणता एवं इतने उच्च पद पर रहते हुए भी धर्मकार्य के लिये बराबर समय निकालकर लगन रखने, सचेत रहने एवं परिजनों को भी धर्मपालन हेतु प्रेरित करने तथा अपने सदाचार, सुसंस्कार एवं विनम्रता की छाप हम पर छोड़ने के लिये मुझे उनका बारबार स्मरण हो आता है। मैं कार्य-व्यस्तता से समय पर कभी पंचांग नहीं भेज पाता किंतु पंचांग मिलने पर वे पहुँच लिखना भी नहीं भूलते थे। उनके स्वच्छ, सुन्दर, शुद्ध लेखन को देखकर ही बिना पढ़े मैं समझ जाता था कि

उनका ही पत्र है और पढ़ने बाद इस बात की सदा पुष्टि होती थी।

10.05.1986

-नथमल पीतलिया
रतलाम (म.प्र.)

(37)

(अ)

स्व. श्री शिखरचन्दजी कोचर की अध्यात्म के प्रति शुरू से ही रुचि रही। उन्होंने अपने घर पर ही स्वाध्याय हेतु धार्मिक पुस्तकों की लाइब्रेरी बना रखी थी। जब वे श्री आत्म वल्लभ समुद्र पाठशाला के अध्यक्ष थे, उस वक्त धार्मिक शिक्षण बच्चों को पाठशाला के माध्यम से दिया जाता था, वे इसके प्रबल समर्थक रहे। बच्चों में सुसंस्कार व जैन धर्म की शिक्षा पाठशाला के माध्यम से स्थाई रूप से सदा सर्वदा दी जाती रहे, यह उनकी भावना थी। उनका जीवन समतामय व सादगी पूर्ण अंततोगत्वा रहा। इतने बड़े विद्वान् व संस्कृत के ज्ञाता होते हुए भी, उनमें लेश मात्र भी अहंकार की भावना नहीं थी। जो भी उनके संपर्क में आया, उन्होंने अपने ज्ञान को विकीर्ण किया। हम सभी उनके आदर्शों का अनुसरण करें एवं उत्तरोत्तर सुसंस्कारों का प्रचार-प्रसार समाज में होता रहे। स्वाध्याय के प्रति रुचि बढ़ावे। यही सच्ची श्रद्धांजलि है, उनके प्रति।

(ब)

श्रीयुत् शिखरचन्दजी सा. बहुत ही सरल परिणामी आत्मा थे। उनका जीवन धर्ममय, स्वाध्यायमय, सेवा-भावना आदि से ओतप्रोत था। श्री आत्म-वल्लभ समुद्र जैन पाठशाला के वे अध्यक्ष थे। धार्मिक पाठशाला उनके समय बहुत सुचारु रूप से चली। धार्मिक पाठशाला का मैं मन्त्री होने के नाते, आपके विशेष सम्पर्क में रहा। उनकी ईमानदारी, कर्त्तव्यपरायण, परम गुरुनिष्ठा, हम सबके लिये गौरव की बात है। इन में इतनी विद्वता होते हुए भी अहं भाव बिल्कुल नहीं था। एक बार श्री राणकपुरजी की यात्रा का प्रसंग आपके साथ करने का मिला। यात्रा बड़ी सुखद रही। तीर्थयात्रा समय-समय पर बराबर करते थे। उनका जीवन हमें सादा जीवन उच्च विचार की प्रेरणा देता है।

मोहनलाल कोचर
भूतपूर्व मंत्री,
श्री आत्म वल्लभ समुद्र पाठशाला, बीकानेर

(38)

जब आप चूरू में जज थे तब सर्व प्रथम मेरा उनके सम्पर्क में आने का मौका मिला। प्रथम भेंट में उनकी सादगी, मिलनसरिता एवं वात्सल्य से बड़ा प्रभावित हुआ तथा ऐसे पद पर रहते हुए भी कहीं अभिमान का नाम मात्र भी नहीं, सबके साथ उनका आत्मीयता का व्यवहार, आज भी उनका सरल एवं सहज स्वभाव याद आता है। उन्होंने अपने पद व कुर्सी का मान, जिस ईमानदारी के साथ निभाया वह आज की दुनिया में निभाने वाले बहुत कम नजर आते हैं- मनुष्य चला जाता है पर वह अपनी सुगन्ध छोड़ जाता है।

30.08.1985 – छत्तरसिंह बैद

कलकत्ता

(39)

श्री शिखरचन्द जी कोचर श्री संघ के एक धर्मनिष्ठ, मधुरभाषी एवं कर्मठ कार्यकर्त्ता थे। आप धार्मिक व सामाजिक कार्यों में हिस्सा लेते थे। आपकी धर्म के प्रति श्रद्धा थी। आप बीकानेर में न्यायाधीश थे। राज दरबार में भी आपका बहुत सम्मान था। आपने कई पुस्तकें भी लिखी हैं।

-फतेहचंद कोचर

कलकत्ता

(40)

स्व. श्रीमान् शिखरचन्द्रजी कोचर रिश्ते में मेरे छोटे नानासा थे। चूँकि मैंने उच्च शिक्षा, ननिहाल में रहकर ही प्राप्त की थी, इसीलिये मैं ऐसे महान् व्यक्ति के बारे में दो शब्द कह सकती हूँ-

सर्वप्रथम, ये तीन भाई थे। उनमें श्रीमान् चम्पालालजी कोचर एवं श्रीमान् कन्हैयालालजी उनके अग्रज थे। तीनों ही भाई राजकीय उच्च पदों पर कार्यरत रहकर, अपनी कर्मठता एवं ईमानदारी की मिसाल कायम कर गये। मैंने स्वयं, राह चलते व्यक्तियों को बातें करते सुना था कि 'इनकी माँ थी एक रत्नगर्भा औरत, जिसने तीन पुत्रों को नहीं, तीन रत्नों को जन्म दिया है, जो एक से बढ़कर एक बेशकीमती हैं', यह बात अक्षरशः सत्य थी। नानासा श्री शिखरचन्द्रजी, ऊँचे ओहदे पर कार्यरत होते हुए भी विवेक और विनय आदि गुणों से ओतप्रोत थे। अपने भाइयों में सबसे छोटे थे और छोटे होने का अहसास उन्हें हर पल रहता था। बड़े भाइयों का आदर, सम्मान और विनय कैसे किया जाता है, उनसे सहज

ही सीख सकते हैं। जन साधारण, जज साहब कह कर उनका जितना और सम्मान करते थे उससे कहीं ज्यादा वे अपने बड़े भाइयों को आदर व सम्मान देते थे। पद, पैसे ओहदे का अहंकार क्या होता है, शायद उन्हें पता ही नहीं था। मैंने उस महान् व्यक्ति को हमेशा साधारण इन्सान की तरह ही व्यवहार करते देखा है। उच्च स्वर में वार्तालाप, डाँटना या फटकारना, बच्चों को झिड़कना, पीटना, उनके चरित्र में शामिल नहीं था। हम तो उस समय बच्चे ही थे। चंचलता हमारा स्वभाव था, किन्तु वे सरल, सहज व्यक्तित्व के धनी, हमेशा हमें प्यार से बुलाकर, चाकलेट, बिस्कुट दिया करते थे।

मुझे याद है कि मैं बी.ए. (प्रथम वर्ष) की पढ़ाई कर रही थी। तब दस पन्द्रह दिन के लिये उनके निवास स्थान पर रहने का सौभाग्य मिला। इसी दौरान उन्होंने अपनी रचनाएँ सुनायीं। उन्होंने अपने छात्र-जीवन के बारे में बताया कि बनारस विश्वविद्यालय में, जब वे विद्याधीन थे, तब उनके शिक्षकगण कितन महान् लेखक एवं कवि थे और उनके सहपाठी भी आगे जाकर महान् लेखक बने थे। ये सब सुनकर मैं आश्चर्यचकित रह गयी थी कि मैं कितनी भाग्यशालिनी हूँ कि जो ऐसे महान् व्यक्ति के साथ, मेरा नाना-दोहिती का रिश्ता है। मुझे अपने आप पर गर्व हो रहा है कि मैं जिस परिवार में रह रही हूँ वह परिवार कितना उच्च स्तरीय इन्सानों का बनाया गया इज्जतदार बसेरा है। मैं एक तुच्छ, साधारण -सी महिला, उनके चरित्र के गुणसागर की एक बूंद भी प्रस्तुत करने में समर्थ नहीं हूँ। फिर भी कोशिश की है और मेरी यह कोशिश, सूर्य को दीपक दिखाने के समान ही होगी।

मैं मामासा श्री देवेन्द्रकुमारजी कोचर को कोटिशः धन्यवाद देती हूँ कि उन्होंने अपने पिता को श्रद्धांजलि-रूप में यह पुस्तक रूपी भेंट अर्पित की है।

-श्रीमती शोभादेवी दफ्तरी

बदरपुर (आसाम)

(41)

सादा जीवन, उच्च विचार, स्पष्टवादिता, कथनी करनी में अन्तर नहीं, सरकारी पद का दुरुपयोग तो दूर, कभी भी उपयोग नहीं किया कहीं भी जीवन में अपने लिए। गुणी का गुणगान करने में तत्पर रहते थे। धर्म रोम-रोम में बसा हुआ था। नीति ही नहीं, धर्मनीति पर चलने वाले थे। पाप और पुण्य को देखने की क्षमता थी एवं उनका निर्णय करने में मन, आंखें और आत्मा सक्षम थी। सत्यमेव जयते का जीवन पर्यन्त पालन किया, कराया और करते हुए को भला

जाना। मानव ही नहीं मानव चोले में एक संत थे। जिनका जीना अपने लिए न होकर दूसरों के लिए ज्यादा था।

जिनकी वाणी में मिठास था, शब्दों में कड़ाई थी। जितने बाहर से साफ सुथरे उज्ज्वल थे उससे कहीं ज्यादा अन्दर से थे। मान-सम्मान प्रतिष्ठा, लोभ से कोसों दूर थे। पद का उपयोग कभी भी परिवार-हित में नहीं किया।

सबके प्रिय थे। उमर से दादा लगते थे मगर बच्चों के बीच बच्चों की भाषा में ही ज्ञान देने की अद्‌भुत कला थी। बच्चों से अधिक प्रेम था क्योंकि भावी का भारत इन्हीं के कन्धों पर होगा ऐसा कहते थे।

अनेक बार मिलने का, सुनने का ज्ञान प्राप्त करने का अवसर प्राप्त किया। बच्चों में धर्मयुक्त नैतिक जीवन का उत्थान कैसे हो ? इसके लिये हमेशा चिन्तन दिया करते थे।

सत्य के बल पर हमेशा निर्भय निडर रहे। राजाओं का राज था। मुख से निकला शब्द कानून होता था। उस समय में अन्तर-आत्मा के द्वारा कही हुई बातों को ही सामने रखना। सामने चाहे राजा हो या बादशाह या जनता रंक हो या अमीर हो न्याय के मामले में हमेशा समवादी रहे। अनुशासन के धनी थे। समय के पाबन्द थे, थोड़ा बोलते ज्यादा सुनते, मीठा बोलते, मर्यादा में बोलते, सबके प्रिय थे। मिलनसारिता कूट कूट कर भरी थी। पैदल चलने में आनन्द की अनुभूति करते थे। उस जमाने में इतनी बड़ी पोस्ट पर (जाना) रहना परिवार गांव, नगर ही नहीं समाज का नाम भी रोशन किया, लाख में एक व्यक्ति इस लायक बनता था।

- जयचंदलाल सुखानी
बीकानेर

(42)

ऐसे व्यक्ति बिरले ही होते है जो सेवा भावना को अपने जीवन का लक्ष्य एवं धर्म समझे। जिनमें सेवाभावना कूट-कूट कर भरी हो। श्री शिखरचन्दजी ऐसे ही विचारकों में से थे। सन् 1972 की वह घटना अभी भी मेरे दिमोदिमाग में ताजा हैं, जब हम राजस्थान की पंच तीर्थ हेतु भ्रमण के दौरान बीकानेर पहुँचे। न कोई पहचान और न कोई जानकारी। संयोग की बात ऐसे मैं हमारी मुलाकात एक राहगीर से हुई। पूछा जैन मंदिर व धर्मशाला के बारे मे। इतना पूछना था कि वे तपाक से बोले आइए, आपकी सभी कठिनाइयाँ दूर करता हूँ और हमारी ठहरने से लेकर जाने तक की पूर्ण व्यवस्था तुरंत कर दी। इतना ही नहीं समाज को भी सूचित किया एवं सभी हमारी सेवा में जुट गये। अपरिचितों के बीच भी अल्प समय में ही बिल्कुल परिचित से बन गए। वह विलक्षण प्रतिमा कौन थी ?

जिसके सेवाभावों से हम धन्य हो गये ? वह थे श्री शिखरचन्दजी सा.। उनकी सेवा को हम अभी भी भुलाए नहीं भूलते और न भूलेंगे। वे नम्र, सज्जन और व्यवहार कुशल थे। धार्मिक जनता का वे प्रतिनिधित्व करते थे। एक न्यायाधीश होते हुए भी वे समाज-सेवक और गरीब जनता का समान रूप से स्नेह और सम्मान प्राप्त करने में सफल हुए थे। उनकी धार्मिक एवं सेवा भावना की सभी प्रशंसा करते थे। प्रत्येक विचार को वे बुद्धि की कसौटी पर कसते थे, ऐसा हमने अनुभव किया था। ऐसे विलक्षण प्रतिभा को हमारी हार्दिक श्रद्धांजलि एवं शत्-शत् नमन्।

-मनोहरलाल कांठेड

नागदा (म.प्र.)

(43)

बैंक में कार्यरत 1970 के दशक में सम्पर्क व आशीर्वाद से धन्य हुआ। प्रथम परिचय के बाद बैंक सम्बन्धी मंत्रणा व कार्यशैली तथा विश्वसनीयता की यादों की बारात, मेरे भावी जीवन के क्रम में अनूठे स्नेह की ओर अग्रसर होती रही। भाई देवेन्द्रजी के सम्पर्क से पुन: याद ताजा हो उठी तथा उनके दिये गये आशीर्वाद एवं संस्कारों से जीवन की अठखेलियों में समावेश होती गई।

- भंवरलाल भँसाली

बीकानेर

(44)

परम पूज्य बाबासा श्री शिखरचन्द्रजी कोचर को भावभरा कोटिश: चरण वंदन।

मेरे परम पूज्य पिताजी स्व. श्री हजारीमलजी बाँठिया, बाबासा की विद्वता व स्वभाव की सरलता की कईबार बातें करते रहते थे, लेकिन बाबासा से व्यक्तिगत परिचय, नागदा (म.प्र.) में हुआ, जहाँ भाई साहब व भाभीजी ने मुझे बहुत ही स्नेह व वात्सल्य दिया। उनका घर मेरे लिए नैहर का दूसरा नाम है। बाबासा, मांसा, जब भी नागदा पधारते थे, मुझे व पूरे परिवार को बहुत स्नेह से बुलाते। उनसे प्रथम बार में मिलने में ही उनकी सहजता आज भी मेरी आँखों के सामे चलचित्र की तरह अनुभव हो रही है। नागदा आगमन पर हर बार बेटी मानते हुए हमेशा घर पर आशीर्वाद देने पधारते, जिसका जिक्र मैं, अपने जीसा (पिताजी) को पत्र द्वारा लिखकर आनन्द से अभिभूत होती।

18.02.09

-श्रीमती विजया नाहर

कोलकाता

(45)

परम पूजनीय काकासा-स्नेह एवं करुणा की प्रति मूर्ति थे। उनके व्यवहार में कोई छल कपट नहीं था। वे जैसे अन्दर थे, वैसे ही बाहर। ज्ञान उनके चेहरे से झलकता था। वे एक महान् एवम् आदर्श व्यक्ति थे। उनपर, उनके परिजन, मित्र, सखा व समस्त परिवार, सहज रूप से गर्व कर सकता है। उन जैसे विराट व्यक्तित्व का, मुझ जैसे साधारण व्यक्ति के लिए शब्दों में उनके गुणों को व्यक्त कर पाना सम्भव नहीं। अवकाश प्राप्ति के उपरांत नियमित रूप से जिन मन्दिर जाकर विधि पूर्वक पूजा अर्चना करना, उनकी प्राथमिकता थी।

– सुशील कुमार कोचर

निवासी बीकानेर हाल विराट नगर (नेपाल)

(46)

परम पूज्य पिताजी का स्मरण आते ही एक महामानव का चित्र उभरकर सामने आता है। वे मुझे जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में एक कर्मठ व्यक्तित्व के रूप में दृष्टिगोचर होते हैं। उन्होंने साहित्यिक क्षेत्र में, न्यायिक सेवा क्षेत्र में, धार्मिक क्षेत्र में यानि विभिन्न क्षेत्रों में अपनी अमिट एवं अप्रतिम छाप छोड़ी है। वे एक सहृदय, सुकोमल एवं दृढ़ निश्चयी व्यक्ति थे। इसका दिग्दर्शन उनके द्वारा रचित काव्य रचनाओं एवं लेखों से परिलक्षित होता है।

परिवार के मुखिया के रूप में एवं पिताश्री के रूप में जो मार्गदर्शन मिला, वह बहुत कम लोगों का मिल पाता है।

वे स्वयं सुबह बहुत जल्दी उठते थे। हम बच्चों को भी सुबह जल्दी उठा देते थे। सुबह उठकर पढ़ना होता था। बाद में साथ में मंदिर (जहाँ कहीं नजदीक होता था) जाते थे। वहाँ विधि पूर्वक प्रभु दर्शन, चैत्यवंदन आदि क्रियाएँ होती थीं। वे अपने अध्ययन काल में सदैव उच्च श्रेणी से उत्तीर्ण होते रहे, अतः हम बच्चों से भी अच्छे दर्जे से उत्तीर्ण होने की अपेक्षा करते थे। हमारी पढ़ाई का पूरा ध्यान रखते थे।

उनका जीवन सादा एवं अनुशासित था। उनकी अनेक बातें अभी भी स्मृति पटल पर अंकित होती रहती है।

वे कहा- करते थे कि मैं तुम्हें पढ़ाने में जो खर्च कर रहा हूँ वास्तव में खर्च न होकर, Investment (विनियोग) है। जिस प्रकार Investment करने पर return (प्रतिफल) के रूप में ब्याज आदि मिलता है, उसी प्रकार तुम लोगों का सुशिक्षित होकर पैरों पर खड़ा होना, बहुत बड़ा return होगा।

वे उक्तियाँ, जिन्हें वे समय-समय पर कहा- करते थे, स्मरण में आती हैं यथा, वे कहा करते थे- Don't guess when you can make sure' अर्थात् किसी तरह का अंदाज मत लगाओ जबकि तुम्हारे पास उसे सही रूप में जानने के साधन मौजूद हों।

वे सदैव सादे लिबास में रहते थे। जब हम लोग कभी नये कपड़े बनवाने का कहते थे तो प्रायः कहते थे कि कपड़ों के फटने पर उनके कारी (पैवन्द) लग सकती है, पर पेट पर कारी नहीं लग सकती। मैं जो कुछ भी हूँ लोग मेरे को जानते हैं, अतः नये, पुराने कपड़े पहनने से कोई फर्क नहीं पड़ता।

पारिवारिक जनों को किसी प्रकार की तकलीफ न हो इसका पूरा ध्यान रहता था। ईमानदारी एवं सीमित आय से कार्य चलाना उनके ही बस का था। 'जेते पाँव पसारिये, जेती लांबी सोड़' उक्ति प्रायः उद्घृत करते थे।

जब भी कोई खाने की वस्तु घर में खरीदी जाती अथवा किन्हीं प्रिय जनों के यहाँ से घर में आती, उस समय उनका यही कहना था कि सबको बाँटने के बाद बचे तो मेरे को देना।

मेरी नौकरी के लगने के बाद मैंने परम पूज्य पिताजी के लिये वस्त्र आदि बनवाने की इच्छा व्यक्त की तो उन्होंने साफ मना कर दिया एवं साथ में यह भी कहा कि तुम्हें किसी चीज या रुपयों की आवश्यकता हो तो मुझे लिखना, मैं उसे पूरी करने की चेष्टा करूंगा।

ऐसी अनेक स्मृतियाँ मेरे मानस पटल पर अंकित हो रही हैं जिन सबका लिपिबद्ध करना संभव नहीं है। वे विराट् व्यक्तित्व के धनी थे।

-देवेन्द्रकुमार कोचर
बीकानेर

(47)

दादोसा बहुत ही सरल व्यक्ति थे। दादोसा चुरू में जिला एवं सत्र न्यायाधीश थे।

उनके उस काल की बातें दादीसा से सुना करते थे 'म्हारे गाडियाँ और नौकर रहते थे, पर उन्होंने कभी भी अपने पद का गलत फायदा नहीं उठाया।'

किसी व्यक्ति का कोई केस होता, वे उस व्यक्ति को घर पर आने ही नहीं देते। वे सावधान रहते थे कि सच्चाई पर कहीं आँच न आये।

वे कभी छुट्टियों में नागदा आते या हम जब बीकानेर जाते, तो हमेशा पढ़ने और शांत रहने की शिक्षा देते। आपकी साहित्य-साधना का क्रम हमेशा

चलता रहता था। वे किसी से किसी प्रकार की शिकायत नहीं करते थे। सुबह चार बजे ही उठकर नवकार मंत्र का पाठ करना आदि एवं घूमना उनके नियमित क्रम थे।

अपने आखिर दिनों में लगभग 2 महिने वे बीमार रहे थे। बीकानेर में उन्हें हर्निया की तकलीफ थी। बीकानेर अस्पताल में 10-15 दिनों के इलाज होने के बाद कोई सुधार न होने पर उन्हें नागदा अस्पताल में भरती किया, जहाँ उनके सोने से हुए घावों के कारण मृत्यु हो गई। उस वेदना को भी उन्होंने बड़े धीरज से सहा।

वे अपनी सत्य-निष्ठा, कर्मठता के लिए हमेशा सभी के लिए प्रेरणा के स्रोत बने रहेंगे।

-श्रीमती कुसुम सुराणा
कोलकाता

(48)

मुझे मेरे पिताजी ने पूज्य दादोसा पर पकाशित होने वाली पुस्तक के लिए उनके प्रति अपने विचार लिखने हेतु कहा। इस पर मैंने दादोसा के बारे में सोचा। उनके जीवन में रही कुछ विशेषताओं के लिपिबद्ध करने का प्रयास किया है।

सर्वप्रथम, मैंने उनके व्यक्तित्व में एक भी दोष नहीं देखा। वे अत्यंत सरल, मृदुभाषी, सबको आदर देने वाले महापुरुष थे। वे ज्ञान के भण्डार थे। अंग्रेजी, संस्कृत, हिन्दी, राजस्थानी आदि भाषा के प्रकाण्ड विद्वान थे। गुजराती एवं उर्दू भाषा का गहन ज्ञान था। उर्दू के अनेक शेर उन्हें मुँहजबानी याद थे।

कहा जाता है कि जो वृक्ष फलों से लदा रहता है, वह झुक जाता है, ऐसा लगता है यह कहावत उन जैसे व्यक्तियों को लक्ष्य कर के लिखी गई है। वे निरभिमानी, परन्तु स्वाभिमानी व्यक्ति थे।

वे कभी किसी की निंदा नहीं करते थे। सदा दूसरों को आगे बढ़ने के लिए प्रोत्साहित करते थे। वे सत्य वक्ता एवं निहायत ईमानदार व्यक्ति थे। उनकी ईमानदारी बहुत प्रसिद्ध थी। अपने ऊँचे सिद्धांतों का पालन पूरी ईमानदारी से करते थे। चाहे कोई भी प्रलोभन या दबाव आये, वे न्याय मार्ग पर अडिग रहते थे। उन्होंने अपनी संतानों को भी उतने ही ऊँचे सिद्धांतों का जीवन में पालन करने के लिए प्रेरित करते थे।

वे जैन धर्म के प्रकाण्ड विद्वान एवं उसके सिद्धांतों की व्याख्या करने में सक्षम थे। जैन, अजैन सभी धर्मों/संप्रदायों के कार्यक्रमों में जाया करते थे। सबके विचार सुनते थे व 'सार-सार को गहि रहे, थोथ देइ उड़ाय' के अनुरूप जो उन्हें

अच्छा लगता उसे विचारों में संग्रहीत कर रख लेते थे।

उनका जीवन जैन धर्म के सिद्धांतों से अनुप्रेरित एक सभ्य एवं सुसंस्कृत नागरिक का मूर्त रूप था। उनका जीवन जैन धर्म के प्रमुख सिद्धांत 'परस्परोपग्रहो जीवानाम्' पर चलता था।

प्रात:कालन में उठकर नवस्मरण का पाठ, आनानुपूर्वि के दर्शन, नमस्कार मंत्र की माला आदि फेरकर, जिन मंदिर में दर्शन-पूजन के लिए जाते थे। न जाने कितने स्तवन, स्तोत्र उन्हें कंठस्थ थे। इसके अलावा, उनका अर्थ व भावार्थ उन्हें स्मरण में रहता था। सभी धर्मों के प्रमुख, धर्म नेता उनका सम्मान करते थे। वे कभी भी क्षण मात्र समय नष्ट नहीं करते थे। पढ़ने में उनकी रूचि थी। वे एक के बाद एक पुस्तकों को पढ़ते रहते थे। उनकी रूचि विभिन्न प्रकार के साहित्य में थी। वह साहित्य, चाहे बाल साहित्य हो या गम्भीर विषयक साहित्य हो, वे बड़ी सहजता एवं रूचि से उसका अनुशीलन कर लेते।

उनको किंचित मात्र भी क्रोध नहीं आता था। वे छोटी से छोटी वस्तु को उसकी उपयोगिता समझकर बड़ा सहेज कर रखते थे।

उन्होंने कई कविताएँ लिखीं। उनकी लिखावट अत्यंत सुन्दर एवं पाठक को पढ़ने के लिये प्रोत्साहित करती थी।

वे अत्यंत सहनशील थे। उनके जीवन के अन्तिम समय में शरीर में गहरे घाव हो गये थे, उसके उपरान्त भी कभी भी मुँह से उफ् तक नहीं निकलती थी। अन्तिम दिनों में वे गहरी बेहोशी में आ गये थे, लेकिन उस अवस्था में भी उनके हाथों की उँगलियों पर नवमन्त्र का जाप निरन्तर चल रहा प्रतीत होता था। तब मैंने ''तन में व्याधि, मन में समाधि' का जीवन्त उदाहरण देखा था।

लाभ, अलाभ, सुख-दु:ख में, समभावी पुरुष की तरह, हर प्रकार की परिस्थिति में एक जैसा भाव, लेकर चलते थे, मेरे दादोसा।

मुझे दु:ख इस बात का है कि मैं जब बड़ा हुआ, तब वे नहीं थे। कितनी बातें मैं उनसे कर सकता था, कितनी समस्याओं का वे समाधान बता सकते थे, वे मुझे।

उनकी स्मृति, उनकी विलक्षणता, उनके गुण, उनका जीवन अनुकरणीय है। समाज उनसे काफी कुछ सीख सकता है इसलिये उन पर यह पुस्तक लिखी जा रही है। आशा है इस पुस्तक के माध्यम से पाठकों को उनके जीवन की अनेक ऐसी बातों की जानकारी मिलेगी, जिनको अपने जीवन में अपनाकर स्वयं के जीवन को सार्थक कर सकेंगे।

-डॉ. नरेन्द्र कोचर

एम.डी. एडिनबरा (यू.के.)

❑ ❑ ❑

परिशिष्ट

पिताश्री जतनलालजी कोचर का पुत्र श्री शिखरचन्द्रजी को लिखा पोस्टकार्ड

॥ॐ॥

मैसूर
ता: २४·७·६९

चि: देवेन्द्र,

तुमने लिखा कि Private companies में backing बहुत count करता है, सो Private companies में ही नहीं, Govt Service में तथा in every walk of life, backing count करता है, किन्तु इसका यह तात्पर्य नहीं कि backing के बिना आदमी उन्नति नहीं कर सकता। Backing के बल पर आदमी एक सीमा तक ही उन्नति कर सकता है। जबकि अपनी योग्यता, अध्यवसाय तथा प्रतिभा के बल पर मनुष्य चाहे जो कुछ कर सकता है। तुम इतिहास में किसी महापुरुष का जीवन-चरित्र उठाकर देखो, वे सब अपने talent के द्वारा ही इतनी उन्नति कर पाये हैं। हम तीनों भ्राताओं को किसी प्रकार की backing मूलरूप से बीकानेर राज्य में नहीं थी। हमने जो कुछ उन्नतियां, अपने बल पर ही की। अपना जैन-धर्म का सिद्धांत ही स्वावलंबन का है। इसलिए backing पर अधिक निर्भर न रह कर

मनुष्य को अपनी योग्यता, परिश्रम तथा अध्यवसाय पर ही निर्भर करना चाहिए। जो मनुष्य अपनी सहायता करता है, उसकी सहायता ईश्वर भी करता है (God helps those who help themselves)। तुमने अपनी फैक्ट्री में काम करने वाले कुछ व्यक्तियों के उदाहरण देकर लिखा कि वे व्यक्ति backing के बल पर अच्छे वेतन पर नियुक्त हुए थे और backing हटते ही उनकी उन्नति रुक गई। तुम यदि उन लोगों की कार्य-पद्धति तथा Service record आदि को ध्यानपूर्वक देखोगे, तो तुम्हें ज्ञात होगा कि उनकी उन्नति रुकने के अन्य कारण भी होने चाहिएं। तुम्हारी फैक्ट्री के मैनेजर श्री J.C. चौधरीवाल की नियुक्ति बिना किसी खास backing के साधारण पद पर हुई थी, किन्तु वे अपनी योग्यता के बल पर बहुत ऊंचे पद पर पहुंच गए हैं। इसी प्रकार के और भी बहुत से उदाहरण तुम्हें Birlas तथा अन्य concerns में मिल जायेंगे। यह बात सुनिश्चित है कि

योग्य व्यक्तियों की कद्र हर जगह होती है। अव्वल तो कोई concern अपने योग्य कर्मचारी को प्रसन्नतापूर्वक नहीं छोड़ेगी और अगर वह कर्मचारी वहाँ से हट भी जायगा तो उसे अन्य concerns अपने यहाँ रखने के लिए सहर्ष तैयार हो जाएं।

जायंगे, अकबर इलाहाबादी ने ठीक ही लिखा है कि "कर्म नहीं करद्यानों की अकबर, करे तो कोई क्या पाव भी दाने।" तुम्हें कलकत्ते में तो [illegible] साधारण [illegible] पर्याप्त करने के पश्चात् तथा बड़े प्रयत्नों के उपरांत अच्छे स्थान पर व अच्छे वेतन पर मेहनत की प्राप्त हुई। इस पद पर तुम्हें वेतन के अतिरिक्त Bonus भी प्राप्त होगा। इस तरह तुम्हारा start बहुत अच्छा हो गया है। यदि तुम इस जगह कुछ वर्ष अच्छे ढंग से काम करोगे, तो तुम्हें increments भी मिल जायंगे। तुमने लिखा कि तुम्हें

अभी clerical duties दी जा रही हैं, सो इसके लिए तुम्हें किसी प्रकार की चिंता नहीं करनी चाहिए, क्योंकि इससे तुम्हें यह कार्य भली भांति ज्ञात हो जायगा। उसके पश्चात् तुम्हें अन्य duties भी सौंपी जायंगी। तुम्हारे उच्चाधिकारी तुम्हें जो duties entrust करें, उन्हें बिना किसी हीलो हुज्जत के परिश्रम व लगन के साथ perform करो ~~[illegible]~~ उसका फल अवश्य प्राप्त होगा। गीता का यह दिव्य संदेश ध्यान में रखना चाहिए: "कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन"। तुम्हें श्री V.K. शर्मा ने business-line में जाने के लिए परामर्श दिया, किन्तु business line में जाने के लिए पर्याप्त पूंजी तथा अनुभव की आवश्यकता है, और ये दोनों वस्तुएं तुम्हारे पास नहीं हैं, पूज्य भाईजी श्री चंपालालजी पिछले कई वर्षों से business-line में जाने की चेष्टा कर रहे हैं, उनकी जान-पहचान भी कई business-[illegible]

उच्चाधिकारियों से अच्छी है, किन्तु फिर भी वे इस line में अभी तक नहीं जा सके, इसका कारण भी यही है। इसलिए तुम्हें पहले business-line का अनुभव प्राप्त करने तथा money save करने की चेष्टा करनी चाहिए। तुम्हें business के लिए रुपया उधार लेने की सलाह दी, सो बिना अनुभव वाले व्यक्ति को कोई रुपए उधार देने को तैयार नहीं होगा, और यदि रुपए उधार देगा तो बड़े ब्याज व भारी भागत आदि की शर्तों के साथ, और उसमें भी मुनाफ़ा होने के स्थान पर अनुभव-हीनता के कारण घाटा लगने की ही अधिक आशंका रहेगी। तुमने Sole-agency के बारे में लिखा, सो Sole-agency उन्हीं व्यक्तियों को दी जाया करती है जिन्हें उस माल को बेचने का पर्याप्त

अनुभव हो, और जिनका उस क्षेत्र के निवासियों पर अच्छा
प्रभाव हो। मेरी किसी Manufacturer से जान पहचान
नहीं है, जिससे मैं इस विषय में वार्तालाप कर सकूं। श्री मंड-
लियाजी (Convocation के अतिरिक्त) पिलानी बहुत
कम आते हैं, और आते हैं तो बहुत कम समय ठहरते हैं।
इसलिए उनसे इस विषय में मेरा बात कर सकना बहुत
कठिन है। इसके अतिरिक्त उन्होंने तुम्हें हिण्डाल्को में यह
नौकरी दी है, अब उन्हें यह ज्ञात होगा कि तुम नौकरी छोड़कर
business-line में जाना चाहते हो, तो उन्हें बुरा
मालूम होगा। उनसे इस विषय में मुझे किसी सहायता की
आशा नहीं है। यदि तुम्हें कोई अच्छा business-
man, reasonable terms पर अपना partner
बनाना चाहे, तो उसकी partnership में काम कर सकते
हो। मैं भी इसके लिए चेष्टा करता रहूंगा, परन्तु जब तक
ऐसा सम्भव न हो, तब तक तुम्हें श्री शिवाजी जैसे ~~व्यक्तियों~~
~~की~~ अव्यावहारिक उपदेशों (unpractical advices)
पर ध्यान न देकर अपने कार्य को लगन एवं मनोयोगपूर्वक
करते रहना चाहिए। बारबार jobs बदलते रहने पर
चित्त में अशांति तथा लोगों में अविश्वास उत्पन्न होते
हैं। इसलिए जब तक भविष्य के लिए कोई अच्छी
योजना तुम्हारे लिए न बन जाये, तब तक तुम्हें वर्तमान
कार्य को छोड़ने का विचार नहीं करना चाहिए। श्री S.K.
केजरीवाल के पिताजी तथा बड़े चाचाजी आदि का भूत-
पूर्व ग्वालियर स्टेट के समय से बहुत अच्छा कारो-
बार चला आ रहा है। इसलिए यदि उसने नौकरी छोड़
कर कारोबार के कार्य शुरु कर दिया, तो उसने कुछ बुरा नहीं
किया। किन्तु तुम्हारी परिस्थिति तो ऐसी नहीं है। मेरे
Retirement में अब केवल एक वर्ष बाकी है। रिटायर

होने के पश्चात् जो पेन्शन मिलेगी, उसी में गुजारा
करना पड़ेगा। इसलिए भी तुम्हें अभी ऐसा कोई कदम नहीं
उठाना चाहिए, जिसमें आमदनी अनिश्चित हो। यह
सही है कि अपना ultimate aim, business-line
का है, किन्तु जब तक इसके लिए कोई सुनिश्चित योजना
न बन जाये, तब तक अपना काम छोड़ना कदापि उचित न

यहाँ तुमको पूनासे इस विषय में सुझाव मांगे, [illegible]

लिए मैंने अपनी बुद्धि के अनुसार तुम्हें अपनी सम्मति लिख दी है। आशा है कि तुम इस विषय में अच्छी तरह विचार करोगे और जब तक अधिक आमदनी की कोई सुनिश्चित व्यवस्था न हो या योजना न बन जावे, तब तक वर्तमान कार्य खूब लगन से करते रहोगे।

शेष कुशल है। आशा है कि तुम स्वस्थ एवं सानंद होगे। family-quarter के लिए प्रयत्न चेष्टा करते रहना। पत्रोत्तर शीघ्र देना।

तुम्हारा—
शिखरचन्द

राजस्थान पत्रिका के बीकानेर संस्करण में 19/12/2005 को पृष्ठ दो पर प्रकाशित

परकोटे के लोगों के लिए शिखरच

का नाम किसी परिचय का मोहताज नहीं है। सत्यम् शिवम् व सुंदरम के उपासक कोचर अपने आप में अनुपम व्यक्तित्व के धनी थे। बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय से कानून की शिक्षा लेने वाला परकोटे का यह लाल अपनी प्रतिभा के बल पर डिस्ट्रिक्ट एं

जज के पद तक
संबंधित पक्षों
तरह सुनकर
देने वाले इस
फैसलों ने दोनों
पर अपनी
छोड़ी। श्री जैन
के वर्षों तक
शिखरचन्द के

असहायों के लिए सहयोग की भावना
रही। साहित्य में रुचि रखने वाले
समसामयिक विषयों पर अपने विचार
पत्र-पत्रिकाओं में भी व्यक्त किए।
अलावा इनकी काव्य रचनाओं ने सुधी
ध्यान अपनी ओर खींचा। हिन्दी
शिरोमणि व साहित्याचार्य की उपाधियों से
शिखरचन्द संस्कृत, अंग्रेजी, उर्दू व
भाषा पर भी समान पकड़ रखते थे।
उच्च विचार के सिद्धांत को मूर्तरूप
शिखरचन्द अपने दृढ़ संकल्प के कारण
वर्षों में रहे। शहर की सामाजिक
शैक्षणिक संस्थाओं में अपनी सेवाएं
शिखरचन्द की मृत्यु को समय बीत
लेकिन अपने व्यक्तित्व के गुणों की
भी लोगों के ज़ेहन में है।

राजस्थान पत्रिका के बीक
संस्करण में 09/01/2006
पृष्ठ दो पर प्रकाशित

नोट लिछमनदासजी तथा नवलचंदजी के वंशज आजकल रतनगढ़ (चूरू) में रहते हैं।

श्री चरित्रनायक का वंश-वृक्ष (पितृपक्ष)

कर्म से न्याय क्षेत्र में प्रतिष्ठित और भावना से वे प्रतिष्ठित थे अध्यात्म के क्षेत्र में। सहज-सरल जीवन बाहर से सीधा-सा व्यक्तित्व और भीतर में काफी गहरा, मेहता शिखरचंदजी कोचर को इस रूप में देखा था। उनमें प्रबल जिज्ञासा थी। सांप्रदायिक भाव से अधिक, सत्य की जिज्ञासा का भाव उन में विद्यमान था। आचार्य तुलसी के प्रति अगाध श्रद्धा थी। अनेक जिज्ञासाएं लेकर हमारे सामने आते और उन्हें प्रस्तुत कर समाधान पाने का प्रयत्न करते। उनकी सरल, निश्छल जीवन शैली दूसरों के लिये भी अनुकरणीय है।

-युवाचार्य महाप्रज्ञ